आधुनिक साहित्य माला—१२

विचारवान इमर्सन

लेखक की पुस्तक The Portable Emerson का संक्षिप्त अनुवाद

मार्क वैन डोरेन

नई दिल्ली
साहित्य प्रकाशन

मूल्य एक रुपया आठ आने

प्रकाशक
आधुनिक साहित्य प्रकाशन
[पो]स्ट बॉक्स नं० ६६४, नई दिल्ली

मुद्रक
[ग]ोपीनाथ सेठ, नवीन प्रेस, दिल्ली

क्रम

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रख्यात कवि, दार्शनिक और निबन्धकार इमर्सन से सारा संसार अच्छी तरह परिचित है। उनके विचारों ने संसार की सांस्कृतिक, सामाजिक और साहित्यिक चेतना पर काफी प्रभाव डाला है। इस पुस्तक में लेखक ने उनके जीवन और विचार धारा पर रोशनी डालकर उनसे प्राप्त सामाजिक प्रेरणा का रूप स्पष्ट किया है।

: १ :

इमर्सन : एक परि

धर्म-प्रचारकों के एक मध्यवर्गीय परिवार में १८०
जन्म हुआ था। उसका पिता बोस्टन का निवासी था।
को उसकी पिता-पीढ़ी का भी यही लक्ष्य रहा कि वह भी
बने। लेकिन इमर्सन की बौद्धिक शक्तियाँ परम्परागत
सीमित रहने वाली नहीं थीं। एक सघन मानसिक द्वन्द्व उसको
तक प्रताड़ित करता रहा। इसी चिन्तक व्यक्तित्व में लड़खड़ाता हुआ
वर्ष की उम्र तक अन्यमनस्कता से प्रचार का काम करता रहा।

उसके लड़कपन पर उसकी चाची मेरी मूडी इमर्सन का बहुत प्रभाव पड़ा था। मेरी मूडी इमर्सन प्रायः उसके यहाँ आया करती थी और बालक इमर्सन को अपनी इच्छा से मार्ग-दर्शन कराया करती थी। इमर्सन ने अपने लेखों में मेरी मूडी का जो चरित्र-चित्रण किया है वह अत्यन्त विकसित और हृदयग्राही है। इमर्सन की कृतियों में उसकी चाची का जो व्यक्तित्व झलकता है वह अमरीकन साहित्य की अत्यन्त मूल्यवान निधि है। उससे स्पष्ट हो जाता है कि इमर्सन के जीवन पर उसकी अद्भुत शक्तिशालिनी चाची का कितना गहरा प्रभाव पड़ा था।

१८१७ से १८२१ तक इमर्सन हार्वर्ड में अध्ययन करता रहा। अपनी डायरी लिखना उसने वहीं से प्रारम्भ किया था। यह उसका 'वैयक्तिक मास्टरपीस' था। हजारों पृष्ठों में यह डायरी लिखी गई है और पूरे पाँच

वर्ष के संस्मरणों का लेखा इसके भीतर है। इमर्सन के मन की सारी शंकाएँ और द्विधाएँ इस डायरी में बिम्ब-प्रतिबिम्ब की भाँति साकार मिलती हैं। उनका अधिकांश विवरण आत्म-मन्थन के प्रकार का है।

१८२९ में एलेन टुकर के साथ उसका प्रथम विवाह हुआ था। दूसरा विवाह लीडिया जेक्सन के साथ हुआ। लीडिया जेक्सन को इमर्सन ने बड़े भावपूर्ण पत्र लिखे हैं, उनमें उसकी मानवीय भावुकता का बड़ा मर्मस्पर्शी प्रदर्शन मिलता है। १८३५ में लीडिया का विवाह इमर्सन के साथ हो चुका था। इमर्सन को लीडिया से अत्यन्त प्रेम था। इमर्सन के जीवन में इन दो विवाहों का बड़ा महत्त्व रहा है—दोनों ने उसे जीवन में नये निश्चयों के लिए काफी प्रबल प्रेरणाएँ दी थीं। लेकिन उसने विवाहों के विषय में कुछ नहीं लिखा। इनके बजाय उसने प्लेटो के विषय में लिखा, स्वीडन वर्ग के बारे में लिखा और सामान्य आचरणों से लेकर विज्ञान, पुराण एवं दर्शन-शास्त्र तक उसकी लेखनी अपने विचार लिपिबद्ध करती गई।

कई वर्षों के आन्तरिक संघर्षों के बाद इमर्सन ने धर्म-प्रचार का कार्य छोड़ दिया और यूरोप-यात्रा का निश्चय कर लिया। १८३३ के मनोहर ग्रीष्मकाल में वह स्काटलैण्ड में थामस कार्लाइल से मिला और प्रवास से वापस लौटने के पूर्व वह लैण्डर, कोलेरिज, जान स्टुअर्ट मिल और वर्ड्सवर्थ से भी मिला था। लेकिन कार्लाइल से वह सबसे अधिक प्रभावित हुआ था और दूसरी ओर कार्लाइल पर भी इमर्सन के निश्छल व्यक्तित्व का बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा था। अपने युग के इन दो महान् बुद्धिजीवियों की यह अद्भुत मित्रता विश्व-साहित्य के इतिहास की सदैव अविस्मरणीय घटना रहेगी। दोनों में विचारों के स्तर पर काफी चौड़ी विभिन्नताएँ थीं, किन्तु भावना के छोर पर जाकर सरस्वती के दोनों वरद पुत्र मनःस्थिति में तद्रूप हो जाया करते थे। चालीस वर्ष के लम्बे अरसे तक दोनों का पत्र-व्यवहार अटूट बना रहा। साहित्य के प्रत्येक विद्यार्थी को यह पत्र-व्यवहार अवश्य पढ़ना चाहिए—मानवीय सम्बन्धों से प्रसूत अगणित प्रेरणाओं एवं अनुभूतियों का ऐसा निर्मल एवं सहज-सुलभ स्रोत अन्यत्र दुर्लभ है। दो

साहित्यकारों की वैचारिक असंगतियाँ सहृदयता एवं स्वाभाविक स्नेह के निर्विकार स्पर्श से ऐसी समरसता में परिणत हो गई हैं जो वस्तुतः जीवन के उच्चतम आध्यात्मिक स्तर पर ही चरितार्थ हो सकती हैं।

इस प्रकार जब इमर्सन वापस अमरीका लौटा तो उसके हृदय पर एक ऐसे महान् कलाकार की मैत्री अंकित थी जिसे वह स्वदेश में नहीं पा सकता था। कार्लाइल के साहसी विचार-प्रवाह ने इमर्सन के अनेक शकालु शिला-खण्डों को तोड़ दिया था और उसने अपने निर्भीक अन्तरात्मा को उसके ज्ञान-चक्षुओं के सम्मुख प्रकट कर दिया था। इमर्सन ने इसी मुक्त मानस से जीवन के गम्भीर स्तरों पर विचार करना शुरू किया था। कार्लाइल को यदि इमर्सन की ज्ञान-गंगा का प्रेरक भगीरथ कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी। अपने आस-पास के वातावरण में इमर्सन को जड़वाद और अगणित बौद्धिक असंगतियों का ही आवर्तन-परिवर्तन मिलता था। अतः उसके बौद्धिक विकास की शर्तें उससे पूरी नहीं हो सकती थीं। किन्तु कार्लाइल एवं अन्य अंग्रेजी साहित्य के निर्माताओं के सम्पर्क ने विद्रोह की प्रखर चिनगारियाँ उसके भीतर जाग्रत कर दी थीं। इसके प्रकाश में इमर्सन का बौद्धिक अनुसन्धान सत्य के कठोर प्रकाश को उत्तरोत्तर निकट से देखने की ओर अग्रसर होने लगा। अपने समाज एवं युग की मौलिक मान्यताओं का अतिक्रमण करके उसकी बुद्धि अध्यात्म के रहस्यमय गह्वरों में सत्य की ज्वलन्त किरणों को पकड़ने का प्रयास करने लगी। जड़ एवं चेतन की विभक्तियों से ऊपर उठकर यहीं वह आत्मतत्त्व की सत्ता स्वीकार करने लगा। जर्मन एवं पौर्वात्य दर्शन-शास्त्रों की ओर स्वाभाविक रूप से उसकी रुचि बढ़ने लगी और ज्यों-ज्यों पूर्वीय, विशेषतः भारतीय आध्यात्मिकता के घूँटों को वह पीता गया, त्यों-त्यों उसकी तात्त्विक तृषा और भी तीखी और व्यापक होती गई। इस आध्यात्मिक नवोन्मेष के सामने उसे अपना परम्परागत धर्म-प्रचार एक ढोंग एवं आडम्बर प्रतीत होने लगा। प्रचलित ईसाई-धर्म का रूढ़िवाद अपने सम्पूर्ण जड़त्व, पतन एवं मिथ्याचारिता में उसके उन्मीलित ज्ञान-चक्षुओं के समक्ष स्पष्ट हो गया। विद्रोह की सघन घटाएँ उसके अन्तराल को उद्वेलित करने

लगीं और उसने धर्म-प्रचार के कार्य को सदा के लिए छोड़ दिया।

धर्म-प्रचार के व्यवसाय को तिलांजलि देकर अब इमर्सन ने व्याख्यानों को अपना व्यवसाय बनाया। बौद्धिक क्षमताओं के साथ-साथ उसमें प्रचार-कौशल वंशानुगत प्रतिभा थी। अतः धर्म-प्रचार के भावुक उद्‌गारों के साथ बौद्धिक अन्वेषण के ठोस तत्त्वों का जो सरस-स्निग्ध समन्वय इमर्सन के व्याख्यानों में प्रसूत हुआ वह अमरीका के प्लेटफार्म पर अद्वितीय था। जनता अवाक् होकर इमर्सन के निश्छल होठों से निकले शब्दों को सुनती थी। लावेल ने इमर्सन के व्याख्यानों की प्रभावोत्पादकता का विश्लेषण करते हुए लिखा है: "मैंने कई प्रकार के प्रचारकों और सुदक्ष वक्ताओं के व्याख्यान सुने हैं, किन्तु इमर्सन की भाँति श्रोताओं पर प्रभाव डालने वाला वक्ता मैंने कहीं नहीं देखा। श्रोताओं के विचार-प्रवाह को अपनी इच्छानुसार मोड़ने की अद्भुत शक्ति इमर्सन के सन्तुलित वाक्यों में होती है। हमारे भाव-स्रोतों को तेजी से उभारकर उनमें अदम्य बाढ़ पैदा करने की क्षमता मैंने अपने अत्यन्त सुविकसित रूप में इमर्सन के भीतर ही देखी है। उसके शब्दों का चयन अपनी खास विशेषता रखता है। शब्द-चयन और उपयुक्त स्थान पर अत्यन्त सारगर्भित शब्द जमाने की कला में तो इमर्सन अद्वितीय ही हैं और उनके वाक्यों की लड़ियाँ इस गति से अपनी मंजिलें तै करती हैं कि श्रोता स्वयं भी इस यात्रा में सहचर बन जाते हैं और सम्मोहित-से इमर्सन की भाव-धारा में बहकर सोचने लग जाते हैं तथा यह तदाकार-परिणति ऐसे स्तर का स्पर्श करने लगती है कि जो हम सोचते हैं—जो शब्द हमारी जबान पर आते हैं—वही इमर्सन के होठ बोलते जाते हैं।"

बोस्टन में ही इमर्सन के अधिकांश भाषण और प्रवचन होते थे। बोस्टन में उसे 'भावना का देवदूत' कहा जाता था। किन्तु अन्य नगरों से भी कई आमन्त्रण उसके पास आते थे और वह भी बड़ी सहृदयता के साथ उनकी पूर्ति करता था। लेकिन इमर्सन को अपना गाँव कांकार्ड और वहाँ के मित्र अत्यन्त प्रिय थे और यात्रा के कष्ट भी उसे भयावह प्रतीत होते थे। वह शान्तिप्रिय स्वभाव का व्यक्ति था, जिसका अधिकांश समय पुस्तकों एवं

मित्रों की गोष्ठी में बीतता था। वह मिशनरी जीवट का व्यक्ति नहीं था—कर्मयोगी के बजाय उसे ज्ञानयोगी कहना ही अधिक उचित होगा। उसके अभिन्न मित्र भी अधिकांशतः उस-जैसे ही मूक विद्रोही, एकातवादी और आत्मनिष्ठ हुआ करते थे। थोरो, एल्काट, हाथोर्न मारगरेट फुलर आदि उसके कांकार्ड-स्थित मित्र थे, जिनके साथ सम्पर्क रखने में इमर्सन को अपरिमित आनन्द मिलता था।

उसकी प्रथम पुस्तक 'नेचर' (प्रकृति) १८३६ में प्रकाशित हुई थी। उसकी पुस्तकों में यही सबसे अधिक क्रमबद्ध और सुव्यवस्थित पुस्तक है। विचारों की परिपक्वता एवं भाषा के परिमार्जन की दृष्टि से उसके बाद के ग्रन्थ ही विशेषतः अधिक उल्लेखनीय हैं। इसे तो उनके जीवन-अभियान का 'घोषणा-पत्र' (Menifesto) ही माना जा सकता है। इसमें इमर्सन एक दार्शनिक बनना चाह रहा है; वास्तव में दार्शनिक वह नहीं था। जगत्, जीवन और आत्मा की गुत्थियाँ सुलझाने का धैर्य एवं मन्थन की एकाग्रता उसके स्वभाव से काफी दूर की बात थी। सन्देश देने अथवा दीक्षांत-प्रवचन करने में, निःसन्देह इमर्सन अपने काल में सर्वत्र प्रसिद्ध था। केम्ब्रिज के डिविनिटी कॉलेज में स्नातकों के सामने उसने जो दीक्षान्त-प्रवचन किया वह अपनी दृष्टि से आज तक अद्वितीय है। इसी पुस्तक में पाठकों को यह भाषण पढ़ने को मिलेगा।

१८४० से लेकर १८४४ तक इमर्सन अपने आध्यात्मिक चिन्तन में व्यस्त रहा और अपनी डायरी में वह इन अनुभवों को दर्ज करता रहा। इसी काल में उसके कुछ निबन्ध (Essays) भी प्रकाशित हो गए थे। लेखक के रूप में इमर्सन की प्रतिमा अब तेज़ी से विकसित होती जा रही थी। उनके निबन्धों की भाषा एवं चिन्तन की गहराई से वह काफी अच्छी तरह प्रमाणित हो जाता है। ये निबन्ध इमर्सन के जीवन के कीर्ति-स्तम्भ कहे जा सकते हैं। यद्यपि विश्लेषण की सूक्ष्मता एवं लक्ष्य की ओर क्रमिक एवं विकासोन्मुख प्रगति उनमें प्रायः नहीं होती तथापि विचारों की स्वच्छन्दता लड़ियों के रूप में वे बड़े मर्मस्पर्शी हो जाते हैं।

१८५० में उसकी एक और पुस्तक 'प्रतिनिधि व्यक्ति' (Representative Men) प्रकाशित हुई, जिसमें प्लेटो, स्वीडनवर्ग, मोंटेन, शेक्सपियर, नेपोलियन और गेटे पर उन्होंने अपनी सम्मतियाँ प्रकट की हैं। इसी प्रकार कार्लाइल एवं थोरो पर भी उसने बड़े सुन्दर एवं भावपूर्ण स्केच लिखे हैं। इन लेखों से इमर्सन के विचारों पर काफी अच्छा प्रकाश पड़ता है। एक कुछ सुलझी हुई प्रतिभा व्यक्त होना चाहती है।

इसी काल में, कवि-रूप में भी इमर्सन अपने पाठकों एवं श्रोताओं के सम्मुख प्रकट होता है। १८४६ में उसकी कविताओं का प्रथम संग्रह छपा था। दूसरा संग्रह, 'मे-डे एण्ड अदर पीसेज' (May-Day and other Pieces) के नाम से प्रकाशित हुआ। काव्य-सृजन के विषय में इमर्सन के विचार मौलिक रूप से प्रकृतिवादियों के विचारों के साथ साम्य रखते थे। वह प्रेरणा को ही सर्वाधिक महत्त्व देता था, काव्यांगों को नहीं। पोप एवं ड्राइडन की कारीगरी उसे पसन्द नहीं थी। अधिकांश कविताओं में दार्शनिक विषयों का विवेचन रहता था।

१८४७ में उसने फिर यूरोप-प्रवास किया। अपने निबन्धों के कारण इस समय तक वह काफी प्रसिद्ध हो चुका था। मैथ्यू आर्नल्ड-जैसे आलोचक ने उसके गद्य को तत्कालीन शतक का सर्वश्रेष्ठ गद्य माना था। १८६० में उसका एक और परिपक्व ग्रन्थ 'दी कांडक्ट आफ़ लाइफ़' (The Conduct of life) छपा। कार्लाइल इसे इमर्सन की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक मानता था। वास्तव में इमर्सन की अत्यन्त विकसित चेतना और लेखन-शैली इस काल में सर्वसाधारण के सामने आ गई थी। १८७२ में उसका घर जल गया, जिसका आघात उसके लिए काफी गहरा था। इसी साल वह फिर यूरोप-यात्रा को चल दिया। यह उसकी तीसरी और अन्तिम यूरोप-यात्रा थी। कार्लाइल से भेंट करके वह अपनी उस क्षति और अकेलेपन को काफी अंशों में भूल गया था। १८८२ में इमर्सन का देहान्त हो गया। इस प्रकार अपने युग के एक महान् स्वतन्त्रचेता व्यक्तित्व ने ऋषि-मुनियों के बीच में अपना स्थान ग्रहण कर लिया।

: २ :

एक सन्देश[1]

इस आलोकित ग्रीष्म में जीवन की साँसें लेना बड़ा आनन्दमय है। घास उग रही है, कली चटक रही है और फूलों से रंग-बिरंगा चरागाह जगह-जगह सुनहरे धब्बों में दमक रहा है। हवा में पक्षी चहचहा रहे हैं और नई घास एवं सदाबहार के पेड़ों की सुगन्धित साँसों से हवा मन्द-मन्द लहरा रही है। अपनी अभिनन्दनीय छाया के साथ जब रात आती है तो मन उससे विषादमय नहीं हो जाता। पारदर्शी अन्धकार से तारे अपनी दिव्य रश्मियाँ फैला देते हैं। उनकी छाया में मनुष्य एक छोटा अबोध शिशु प्रतीत होता है और यह पृथ्वी एक खिलौना दिखाई देती है। शीतल रात्रि नदी की भाँति दुनिया को स्नान करा देती है और अगले अरुण प्रभात के लिए उसकी आँखों में प्रतीक्षा भरती है। इतनी अधिक प्रसन्नता के साथ प्रकृति का रहस्य कभी प्रदर्शित नहीं हुआ था। सभी प्राणियों को भोजन और मदिरा उदारतापूर्वक वितरित की गई और यह सदावर्त अपनी सनातन परम्परा में उसी मौन एवं औदार्य के साथ बँटता रहा। इस दुनिया की परिपूर्णता का बरबस सम्मान करना पड़ता है जहाँ कि हमारी इन्द्रियाँ अपना परिचय बढ़ाती हैं। कितना विस्तृत, कितना वैभवशाली यह संसार है!

---

१. १५ जुलाई १८३८, रविवार की संध्या को केम्ब्रिज के डिविनिटी कालेज की सीनियर क्लास के सामने दिया गया सन्देश।

और ऐसे आनन्द के साथ इसकी प्रत्येक वस्तु मनुष्य की प्रत्येक शक्ति को आमन्त्रित करती है।' इसकी उर्वर जमीन, इसके नाना-गुणप्रद समुद्र, इसके पहाड़ों के धातु और पत्थर; इसके घने हरियाले जंगल, इसके पशु, इसके प्राकृतिक उपकरण, इसके प्रकाश की शक्तियाँ एवं मार्ग, गर्मी, जीवन के आकर्षण आदि सबको महापुरुष अपने वशीभूत करते हैं और उनसे सुख प्राप्त करते हैं। वृक्ष रोपने वाले, मैकेनिक, आविष्कारक, भूगोल वेत्ता, नक्षत्र-मीमांसा और कलाओं का सम्मान करने में इतिहास स्वयं गौरव अनुभव करता है।

लेकिन जब मन के कपाट खुलते हैं और बुद्धि के प्रचलित नियमों का स्पष्टीकरण होता है एवं सभी पदार्थों के अपने असली रूप में व्यक्त होने का अवसर आ जाता है तब यह सारा संसार पल-भर में एक चित्र या कहानी-मात्र रह जाता है। मैं क्या हूँ? और यह सब क्या है? नव-जाग्रत किन्तु सतत अतृप्त जिज्ञासा के साथ मानव का अन्तःकरण ये प्रश्न पूछता है। इन अस्पष्ट नियमों को देखिए जिन्हें हमारी अपर्याप्त बुद्धि अपनी पूरी सत्ता में नहीं देखती। इन समान एवं असमान तत्त्वों को देखिए जो विविध होते हुए भी एक हैं। मैं इनका अध्ययन करूँगा, मैं इन्हें जानूँगा और मैं सदैव इनकी प्रशंसा करूँगा। विचार एवं चिन्तन की ये कृतियाँ सभी युगों में मनुष्य के लिए आनन्दप्रद रही हैं।

जब मनुष्य का हृदय एवं बुद्धि सद्गुणों का स्वागत करने लगते हैं तो मनुष्य और भी मधुर, रहस्यमय एवं सम्मोहक सौन्दर्य का अनुभव करने लगता है। दिव्यज्ञान की शिक्षा उसे यहीं मिलती है। वह यह सीख लेता है कि उसकी सत्ता अपरिमित है और हित-अर्पण एवं पूर्ण होने के लिए ही उसे मनुष्य-जन्म मिला है। अतः उसका इस प्रकार दुर्बल एवं हीन रहना शोभनीय नहीं है। जिस पर वह श्रद्धा रखता है वह अब भी उसकी पहुँच के भीतर है, यद्यपि उसका साक्षात्कार वह अभी नहीं कर सका है। लेकिन उसे यह कर लेना चाहिए। 'साक्षात्कार' शब्द के वास्तविक अर्थ को वह जानता है, किन्तु वह उसका पूरा विश्लेषण करने में असमर्थ है। जब अन्तः-

करण के निर्दोष भाव से या धार्मिक प्रेरणा से विभोर होकर वह यह कहने लगता है—"मैं सत्य का प्रेमी हूँ; सत्य बाहर एवं भीतर सदैव सुन्दर होता है; सद्गुणों का मैं दास हूँ—हे सद्गुणो, मुझे बचाओ; मेरा प्रयोग करो; मैं सदैव तुम्हारी सेवा करूँगा, सद्गुणी बनने के लिए नहीं, बल्कि स्वयं सद्गुण बन जाने के लिए!" तब सृष्टि का उद्देश्य अपनी योग्यता प्राप्त कर लेता है और परमात्मा की प्रसन्नता की भी सीमा नहीं रहती।

सदाचरण की भावना ईश्वरीय नियमों की उपस्थिति के प्रति श्रद्धा एवं आनन्द की अभिव्यक्ति है। इस भावना से यह प्रकट हो जाता है कि जीवन के इस मूढ़ व्यापार के भीतर अद्भुत सिद्धान्तों की शक्ति मौजूद है। शिशु अपने खिलौनों के बीच में प्रकाश, गति, गुरुत्वाकर्षण, स्नायविक शक्ति की क्रिया सीखता है और मानव-जीवन के क्रीड़ा-व्यापार में प्रेम, भय, न्याय, क्षुधा, मनुष्य एवं ईश्वर की क्रिया-प्रक्रिया की प्रतिमाएँ देखता है। इन नियमों का सविस्तर वर्णन नहीं किया जा सकता। कागज पर ये अंकित नहीं किये जा सकते और न वाणी ही इनको प्रकट कर सकती है। हमारे एकाग्र चिन्तन से वे परे भागते रहते हैं; लेकिन साथ ही हम उन्हें प्रतिक्षण एक-दूसरे के चेहरों में, कार्यों में और अपने स्वयं के अवसाद में पढ़ते रहते हैं। प्रत्येक शुभ कर्म एवं विचार में हमारे सदाचार अनुप्राणित रहते हैं और भाषण या वाणी द्वारा तो हम मुश्किल से ही उन्हें गिनाने का अधूरा प्रयत्न कर सकते हैं। जब यह भावना सारे धर्मों का तत्त्व है तो इसके मुख्य-मुख्य संकल्पों एवं साधनों के विषय में मुझे पूरा स्पष्टीकरण करने दीजिये जिससे कि उसके असली रूप की एक झाँकी आपको मिल जाय।

नैतिक भावना की स्फुरणा आत्मा के नियमों की परिपक्वता का दिव्य ज्ञान है। ये नियम स्वतः ही कार्यान्वित होते हैं। ये देश, काल एवं परिस्थिति से परे हैं। इस प्रकार मनुष्य के अन्तःकरण में ऐसा न्याय है जिसके निर्णयों का पूरा एवं तत्काल पालन होता है। शुभ कर्म करने वाला कोई भी व्यक्ति निर्विलम्ब गौरव का अनुभव करता है और क्षुद्र कार्य में प्रवृत्त प्रत्येक व्यक्ति अपने भीतर क्षुद्रता महसूस करने लगता है। अपवित्र जीवन

का चोला उतारने वाला व्यक्ति अनायास ही पवित्रता का चोला पहन लेता है। यदि मनुष्य अपने हृदय में न्यायी है तो वह एक प्रकार से ईश्वर ही है। भगवान् की सुरक्षा, भगवान् का अमरत्व, भगवान् का वैभव न्याय-परायण व्यक्ति में अनुप्राणित हो जाता है। यदि कोई व्यक्ति अपने को क्षुद्र बनाता है, धोखा देता है तो वह अपने को ही छलता है और अपने ही अन्तःकरण से अपरिचय प्राप्त कर लेता है। परिपूर्ण 'शिवं' के सिद्धान्त वाला व्यक्ति पूरी विनम्रता के साथ सदाचरण की अर्चना करता रहता है। इस प्रकार की ऊर्ध्वमुखी प्रगति का प्रत्येक पग आत्मोत्कर्ष की दिशा में बढ़ने वाला चरण ही है। जो व्यक्ति अपने शारीरिक पक्ष का त्याग करता है वह उत्तरोत्तर अपने निकट आता जाता है।

दोषों का परिहार करती हुई, भ्रांतियों का निष्कासन करती हुई और जीवन-व्यापारों को चिन्तन के समन्वय में बाँधती हुई यह तीव्र अंतःशक्ति प्रत्येक जगह कितनी व्यापकता से अवतीर्ण होती है। जीवन में उसकी सार्थकता यद्यपि इन्द्रिय के लिए शीघ्र बोधगम्य नहीं होती, तथापि वह अन्ततः आत्मा के लिए परम सत्य ही प्रमाणित होती है। इसी शक्ति की सहायता से व्यक्ति अपने लिए स्वयं भगवान् हो जाता है—वह स्वयं ही अपनी मंगल भावना को पुरस्कृत करता है और पापों के लिए स्वयं को दण्डित भी करता है। आचरण की अभिव्यक्ति कभी छिपी नहीं रह सकती। चोरी से धन नहीं आ सकता; दान से दैन्य नहीं आ सकता; और हत्या पाषाण की दीवार के भीतर से बोलती है। मिथ्या का थोड़ा मिश्रण भी—चाहे वह अहंकार के कारण हो, या दूसरे पर वांछित प्रभाव जमाने के लिए हो—तत्काल सारे असर को विपाक कर देगा। लेकिन अगर आप सच बोलते हैं तो सारी प्रकृति और सारा मनोवैज्ञानिक वातावरण अप्रत्याशित सीमा तक आपकी मदद करेंगे। आप सच बोलिए, सारा जड़-चेतन संसार आपके लिए प्रमाण हो जायगा और यहाँ उस धाम की भू-गर्भित जड़ें हिल उठेंगी और आपकी साक्षी देने को चल पड़ेंगी। हमारे अनुरागों पर चरितार्थ होते हुए भी इन नियमों की परिपक्वता देखिए—किस तरह वे सामाजिक

नियम बन जाते हैं। जैसे हम हैं, वैसा ही हमारे सम्पर्क में आया-समाज होगा। सज्जन अपने स्नेह–प्रेम से सज्जनों को अपनाते हैं और दुर्जन अपने स्नेह–प्रेम से दुर्जनों का साथ करते हैं। इस प्रकार अपनी ही निजी प्रेरणाओं से आत्मा स्वर्ग या नरक में पहुँचता है।

इन बातों ने मनुष्य को हमेशा इस दिव्य धर्म के विषय में सूचित किया है कि यह संसार विविध शक्तियों की उपज नहीं है, वरन् एक ही संकल्प, एक ही अन्तःकरण की सृष्टि है और यह एक अन्तःकरण नक्षत्र की प्रत्येक किरण में, सरोवर की प्रत्येक तरंग में सर्वत्र सक्रिय रहता है। इस संकल्प का विरोध करने वाली वस्तुएँ भी सर्वत्र पराजित एवं पराभूत ही होती हैं; क्योंकि सृष्टि के निर्माण का तकाजा यही है। कल्याण की भावना स्वीकारात्मक होती है और बुराई व्यक्तिगत ही होती है, वह समष्टिगत नहीं हो सकती। वस्तुतः बुराई एक ऐसी गरमी है जो दुश्चर्या के कारण शीत में परिणत हो गई है। शीत मृत्यु या विनाश का द्योतक है। इसीलिए प्रत्येक बुराई नश्वर और निरर्थक है। इसके विपरीत हित-संवर्धन की भावना में जीवन की परिपूर्णता एवं सच्चाई होती है। जितनी शुभेषणा व्यक्ति में होती है उतनी ही जीवन-प्रेरणा उसमें रहती है। क्योंकि प्रत्येक चीज, कृत्य या व्यापार इसी स्फूर्ति से निःसृत होता है। जिस प्रकार महासागर भिन्न-भिन्न तटों के स्पर्श से भिन्न-भिन्न नाम से पुकारा जाता है, उसी प्रकार अपने कार्य-रूपों में यह स्फूर्ति भी प्रेम, न्याय, संयम आदि विभिन्न नामों से सम्बोधित की जाती है। सभी का उद्गम यह 'दिव्य स्फूर्ति' अर्थात् आत्मा ही है और सब इस आत्मा में ही विलीन हो जाता है। एक व्यक्ति जब अपने पवित्र उद्देश्यों को कार्यान्वित करने लगता है तो प्रकृति की सारी शक्ति उसे अपना पोषण देती है। लेकिन जब वह इस स्फूर्ति से भटक जाता है तो वह इस शक्ति तथा सहायता से भी वंचित हो जाता है और इसी प्रकार चारों ओर से संकुचित होता हुआ वह सभी प्रवाहों से उपेक्षित एक कण-मात्र रह जाता है। इससे आगे बढ़कर परिपूर्ण बुराई एक परिपूर्ण मृत्यु है। नियमों के इस तत्त्व की अनुभूति मन में एक ऐसा भाव पैदा करती है जिसे हम धार्मिक

भावना कहते हैं और जो हमें सर्वोच्च आनन्द देती है। आकर्षण एवं आदेश की शक्ति इसमें अपरिमित है। इसमें पर्वतीय वायु-जैसी जीवन-स्फूर्ति है। संसार की व्याधियों का यह अचूक इलाज है। यह सदाबहार की सुगन्ध है। यह नक्षत्रों-भरे आकाश और पर्वतों को अनूठा बना देता है—सितारों का मूक संगीत भी यही है। विज्ञान एवं शक्ति से नहीं, बल्कि इससे ही यह सृष्टि सुरक्षित एवं मनुष्य के रहने योग्य बनी है। विचारों का कार्य एक प्रकार से निर्जीव एवं अकर्मक ही है—उनको अपने लक्ष्य या ऐक्य की प्राप्ति भी नहीं हो सकती। लेकिन शुभ भावना का उदय सदैव अपने लक्ष्य पर पहुँचता है और यह स्वयं यह आश्वासन बन जाती है कि ईश्वरीय नियम सब प्रकृति में सार्वभौम हैं। ऐसी भावना के प्रकाश में जगत्, देश-काल, सनातन परम्पराएँ सब आनन्द में अपना स्फोट करती हैं!

यह भावना दिव्य है और दिव्यता प्रदान करने वाली है। मनुष्य का सच्चा आनन्द यही है। यह उसे असीम बना देती है। इसके द्वारा ही आत्मा अपने को पहचानने लगती है। महापुरुषों का अनुकरण करने वाले जिज्ञासु एवं नवीन साधकों के अपरिमित दोषों का भी यह परिहार कर देती है—यह उनको बताती है कि सच्चे कल्याण का स्रोत उनके स्वयं के भीतर है और प्रत्येक व्यक्ति की भाँति वह स्वयं भी प्रज्ञा के गहरे स्रोतों की एक प्रणाली है। जब वह कहता है, "मुझे यह करना चाहिए"—जब प्रेम-स्फूर्ति उसके भीतर दौड़ने लगती है और जब वह ईश्वरीय आदेश से कल्याणप्रद और महान् कार्य करने का संकल्प करता है तो उसके आत्मा में परमात्मा के ज्ञान का अगाध संगीत गूँजने लगता है। तब वह उपासना कर सकता है और इस उपासना से उसे जीवन का विस्तार भी मिलता है, क्योंकि इस धर्म-भावना से यह बिछुड़ता कभी नहीं। क्योंकि आत्मा की दिव्यतम उड़ानों में नैतिक शक्ति का ह्रास कभी नहीं होता और प्रेम का स्रोत कभी नहीं सूखता!

समाज की नींव में यह भावना विद्यमान रहती है और क्रमानुसार यह उपासना के सभी रूपों का निर्माण करती है। श्रद्धा का सिद्धान्त नश्वर नहीं

होता। अन्ध-विश्वास एवं भोग-लिप्सा में पड़ा व्यक्ति भी नैतिक भावना की दृष्टि से कभी वंचित नहीं हो सकता। इसी प्रकार से, इस भावना की सभी अभिव्यक्तियाँ अपनी दिव्यता के अनुपात में पवित्र एवं स्थायी होती हैं। अन्य रचनाओं की अपेक्षा इस भावना की अभिव्यक्तियाँ ही हमें सबसे ज्यादा प्रभावित करती हैं। प्राचीन काल की वाणी, जो इस धर्म का उद्रेक करती है, अभी तक सुगन्धित एवं अक्षुण्ण है। यह विचार पूर्व के श्रद्धालु एवं चिन्तनशील व्यक्तियों के हृदयों में सदैव दृढ़ता से विद्यमान रहा है—सिर्फ फिलस्तीन में ही नहीं, जहाँ यह अपनी सर्वोच्च दिव्यता में व्यक्त हो गई है, अपितु मिस्र, ईरान, भारत और चीन में भी। दिव्य स्फूर्तियों के लिए यूरोप सदैव पूर्व का ऋणी रहा है। इन ऋषि-मुनियों ने जो-कुछ कहा सभी ज्ञानी मनुष्यों को वह सत्य एवं उपयुक्त प्रतीत होता रहा है और मानवता पर ईसा का प्रभाव तो अभूतपूर्व है ही—उसका नाम इस दुनिया के इतिहास में लिखा ही नहीं गया है बल्कि बोया गया है और यह सत्य उसके दिव्य दान का सबसे ऊँचा प्रमाण है।

जहाँ प्रत्येक व्यक्ति के लिए इस मन्दिर के द्वार दिन-रात एवं प्रतिक्षण खुले रहते हैं और इस महान् सत्य के भविष्य-वक्ताओं की वाणी कभी क्षीण नहीं होती, वहाँ एक कड़ी शर्त के द्वारा इसकी सुरक्षा भी होती रहती है और वह शर्त यह है कि यह एक अन्तर्प्रेरणा है। किसी माध्यम से इसे अनुभव नहीं किया जा सकता। सच बात तो यह है कि यह एक शिक्षण नहीं है, बल्कि एक उभार है जो दूसरी आत्मा से उद्वेलित होता है! दूसरा व्यक्ति जो घोषणा करता है वह मेरे भीतर सही उतरना चाहिए अन्यथा मुझे उसको अस्वीकार कर देना चाहिए। उसके शब्दों पर या उसके शिष्य के कहने पर चाहे वे कितने ही बड़े क्यों न कहाते हों, मुझे आँख मींचकर विश्वास नहीं कर लेना चाहिए। इसके विपरीत, इस प्राथमिक विश्वास की अनुपस्थिति पतन की उपस्थिति है। जैसी बाढ़ होगी वैसा ही भाटा होगा। यदि यह विश्वास नहीं होगा तो वक्ता का प्रत्येक शब्द और उसकी प्रत्येक कृति मिथ्या और हानिप्रद हो जायगी। चर्च, राज्य, कला, साहित्य और जीवन

का पतन ऐसे ही होता है। दिव्य प्रकृति के धर्म की विस्मृति पर रोग का संक्रमण होता है और जीवन अत्यन्त संकीर्ण हो जाता है। पूर्णावस्था से पतित होकर व्यक्ति अंश-मात्र रह जाता है और उसकी यह स्थिति घृणास्पद है। साथ ही क्योंकि अन्तर्यामी दिव्य सत्ता से व्यक्ति कभी पूर्णतया पृथक नहीं हो सकता—अतः उसमें विकृतियाँ आनी अवश्यम्भावी हैं और यही कारण है कि प्रकृति के भयानक कोप का भाजन मानव-समाज को बनना पड़ता है। इस प्रकार प्रेरणा का तत्त्व नष्ट हो जाता है और आत्मा के धर्म का स्थान बुराइयों द्वारा हड़प लिया जाता है। ऐसी अवस्था में चमत्कार, भविष्य-वाणी, काव्य, आदर्श जीवन और पवित्र दिनचर्या केवल प्राचीन इतिहास की ही सामग्री रह जाती है। क्योंकि समाज के विश्वास एवं प्रचेतना में वे मौजूद नहीं हैं और यही कारण है कि जब उनके सुझाव पेश किये जाते हैं तो लोग उनकी खिल्ली उड़ाते हैं। जब व्यक्ति संकीर्ण दृष्टिकोण अपनाकर इंद्रिय-तृष्णाओं की पूर्ति में लीन हो जाता है और इस प्रकार अपने उच्चादर्शों को ओझल कर देता है तो जीवन एक विद्रूप या करुण व्यापार-मात्र रह जाता है।

इन सामान्य विचारों का कोई विरोध नहीं करेगा। धार्मिक इतिहास में—विशेषकर ईसाई-धर्म के इतिहास में इनका स्पष्टीकरण अनेक स्थलों पर मिलता है। आप ईसाई-धर्म के उसी सत्य के शिक्षण को फैलाने आज आ रहे हैं। यह सभ्य संसार का स्थापित धर्म है और इसलिए हमारे लिए इसके प्रति जो रुचि है वह ऐतिहासिक है। इसके मंगलमय सूत्रों को मैं यहाँ दोहराना नहीं चाहता—सारी मानवता को उनसे सांत्वना एवं आश्वासन मिला है। मैं यहाँ पर उसकी व्यवस्था के उन दोषों को ही स्पष्ट करूँ, जो हमें इस उपयुक्त दृष्टिकोण के प्रकाश में नित्य दिखाई पड़ते हैं।

ईसा पैगम्बरों की सच्ची परम्परा में से थे। उन्होंने निष्पक्ष दृष्टि से आत्मा के रहस्य को देख लिया था। उसके [illegible] से आकृष्ट होकर उसके सौन्दर्य पर मुग्ध होकर [illegible] करते थे और
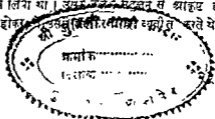
सार्वकालिक होती है। इस प्रकार वे सच्चे मनुष्य थे। वे मनुष्य की अन्तरात्मा के नियम की आदेशात्मक शक्ति से परिचित थे और यही कारण है कि वे स्वयं आदेश नहीं देते थे। मनुष्य के इसी अन्तर्यामी स्वरूप को उन्होंने अपूर्व साहस के साथ—हाथ से, हृदय से, जीवन की बाजी से—ईश्वर को घोषित किया है। जैसी कि मेरी धारणा है: इतिहास में वे ही एक-मात्र ऐसी आत्मा थे जिन्होंने मनुष्य की मान्यता का समर्थन किया है।

१. इस दृष्टिकोण में हमारे सामने इतिहास-सम्मत ईसाई-धर्म का प्रथम दोष स्पष्ट होता है। इतिहास-सम्मत ईसाई-धर्म इस प्रकार दोषपूर्ण हो गया है कि धर्म-प्रचार के सारे प्रयत्न उससे विषाक्त हो गए हैं। जैसा कि वह आज हमारे सामने है और जिस रूप में युगों से पेश किया जा रहा है उस रूप में वह आत्मा का धर्म नहीं रहा है, वरन् वैयक्तिक, परम्परागत एवं रूढ़िवादी कर्मकाण्डों का ही अतिरंजित रूप है। ईसा के व्यक्तित्व के साथ इसकी संगति सदैव अस्वाभाविक रही है। आत्मा व्यक्ति को मान्यता नहीं देती। वह तो इस सृष्टि के प्रत्येक व्यक्ति को आमंत्रित करती है कि वह सृष्टि के सारे विस्तार में फैलकर अपना विकास करे। निश्छल एवं तत्पर प्रेम के सिवाय आत्मा किसी के साथ पक्षपात नहीं करती। लेकिन भय और आलस्य ने ईसाई-धर्म को जिस निरंकुश कट्टरता में परिणत कर दिया है उससे मनुष्य का मित्र ही स्वयं उसका घातक हो गया है। पहले जो नाम केवल प्रशंसा और प्रेम के व्यंजक थे वे आज सड़कर उपाधियाँ बन गए हैं और इस प्रकार की सारी उदार सहानुभूति और आकर्षण समाप्त हो गए हैं। चार जो मेरे भाषण को सुन रहे हैं, स्पष्ट अनुभव करते होंगे कि जिस भाषा में ईसा यूरोप एवं अमरीका में पेश किया गया है वह भाषा एक महापुरुष के आत्मगौरव के अनुकूल नहीं है; किन्तु उसको निर्जीव एवं रूढ़िग्रस्त बनाने का प्रयत्न है—जिस प्रकार 'आसिरिस' एवं 'अपालो' को यूनानी एवं पूर्वीय जनता देवता के रूप में व्यक्त करती है उसी प्रकार ईसा को इस भाषा ने 'देवता' बना दिया है। बचपन में ईसाई बालकों को जो प्रश्नोत्तर कण्ठस्थ कराये जाते हैं उनके द्वारा उनका स्वतन्त्र एवं ऐन्द्रिय

या कभी उल्लंघन नहीं किया है। इसलिए मेरा उनके प्रति अनुराग है। उनकी अनुभूतियाँ उनसे अनूठी होती हैं और बुराई का सामना करने के लिए वे मुझे आमंत्रण देते हैं—संसार को स्वाधीन करने के लिए मुझसे आग्रह करते हैं और मुझे आत्मरूप होने का आदेश देते हैं। ईसा भी अपने पवित्र विचारों से इसी प्रकार, केवल इसी प्रणाली से, हमारा कल्याण करता है। चमत्कारों द्वारा व्यक्ति को धर्म-परिवर्तन के लिए बाध्य करना आत्मा का अपमान करना है। सच्चा ईसाई धर्म-परिवर्तन द्वारा नहीं बल्कि रुचिर-सुन्दर भावना द्वारा ही बनता है। ईसा जैसी महान् आत्मा इस जगत् के हीन प्राणियों के सामने प्रकट हुई थी और वह अपनी महत्ता की वजह से दूसरों से अद्भुत प्रतीत होती थी। किन्तु उसे भिन्न मनुष्य मान-कर आगे बढ़ना गलत है। सतत एवं कल्याणमय विकास का मार्ग तो यही है कि हम आत्मदर्शन प्राप्त करें और भगवान् को ईसा की तरह अपने ही व्यक्ति में साकार करना सीखें। मैं दान लेना अच्छा नहीं समझता। लेकिन जो आत्म-साक्षात्कार की विधि मुझे बताता है उसे मैं वास्तविक एवं सच्चा कल्याण मानता हूँ। इन भविष्य की रेखाओं में मुझे दिखाई दे रहा है कि वह समय अब निकट आता जा रहा है जब मनुष्य यह अनुभव करने लगेगा कि आत्मा की परमात्मा की प्राप्ति किसी बाहरी माध्यम से नहीं बल्कि अपनी ही आन्तरिक मधुरता से होगी—ऐसी मधुरता से, जो आपमें और मुझमें समान रूप से मौजूद है और जो परस्पर विनिमय के द्वारा आत्म-विकास के लिए परिपूर्ण अवसर देती है।

धर्म-प्रचार में जिस भाषा एवं प्रणाली का प्रयोग किया जाता है वह अलौकिक ईसा को उसी प्रकार से अमान्य था जैसे कि आत्मा को उससे घृणा है। प्रचारक यह नहीं देखते कि वे उसके सन्देश को आनन्दमय नहीं बना रहे हैं—वे उसके आस-पास लिपटे आवरणों को नहीं हटाते और उसके सौन्दर्य को श्रोताओं के मानस में नहीं उतारते। जब मैं शानदार एपामिनानडास (Epaminoandas) या वाशिंगटन देखता हूँ; जब मैं अपने समकालीन व्यक्तियों में कोई सच्चा वक्ता, जज या प्रिय मित्र देखता हूँ;

जब मैं कविता की कल्पना एवं माधुर्य पर झूम उठता हूँ तो मैं ऐसा सौन्दर्य देखता हूँ जो परम वांछित है। ऐसे सौन्दर्य के साथ ही मेरे व्यक्ति की संगति पूरी बैठती है और इसके दर्शन द्वारा मेरे कानों में वह संगीत प्रतिध्वनित होने लगता है जिसे ऋषि-मुनि युग-युगों से परमात्मा की महिमा के हेतु गाते रहे हैं। सीमित एवं अलौकिक बनाकर अब आप ईसा के जीवन एवं संवादों को उसके आकर्षण से वंचित मत कीजिए। जैसे वे थे वैसे ही उन्हें रहने दीजिए—वैसे ही जीवित एवं स्नेहशील; मानव-जीवन, वनस्थली एवं प्रफुल्लित दिवस के अंग!

२. ईसा के कार्यों और आचरणों को परम्परागत एवं सीमित प्रणाली में व्यक्त करने के प्रसंग का दूसरा दोष पहले दोष का ही परिणाम है। वह यह है कि सर्वोच्च सत्ता का आत्मा के भीतर अवतरण—नैतिक अनुभूति की अपने सर्वोच्च गौरव में अभिव्यक्ति—को समाज-शिक्षण के स्रोत के रूप में कसौटी पर नहीं कसा गया है। मनुष्यों ने इस अवतरण को प्राचीन काल की एक अलौकिक घटना के रूप में ही वर्णित किया है जैसे कि परमात्मा काफी वर्ष पूर्व मर चुका है। विश्वास को ऐसा आघात प्रचारक को निस्तेज कर देता है और अच्छी-से-अच्छी संस्था अनिश्चित एवं अस्पष्ट वाणी का पर्याय बन जाती है।

आत्मा के सौन्दर्य के साथ सम्पर्क के प्रभाव से ही ज्ञान एवं प्रेम की आकांक्षाएँ प्रादुर्भूत होती हैं और उन्हें वितरित करने की आवश्यकता भी इसी प्रभाव के कारण पैदा होती है। यदि व्यक्ति वाणी द्वारा इन अनुभवों को व्यक्त नहीं करेगा तो वे उस पर भार-स्वरूप बनी रहेंगी। संत सदैव एक गायक होता है—वह अपनी बात जरूर कहेगा। किसी-न-किसी प्रकार उसका स्वप्न वाणी पकड़ लेता है; अनुपम आनन्दातिरेक में वह उसको प्रकाशित कर देता है। कभी पेंसिल से चित्र के रूप में, कभी छैनी द्वारा शिल्प के रूप में; कभी पाषाणों के मीनारों के रूप में उसकी उपासना का भवन तैयार होता है। कभी असीम संगीत में उसकी वाणी अत्यन्त स्पष्ट एवं शाश्वत रूप की छवि प्रदर्शित करती है। इस महामहिम रूप पर

मुग्ध होकर व्यक्ति उसका पुरोहित या कवि बन जाता है। चर्च या संस्था का बाह्य जगत् के साथ सम्बन्ध अवश्य है। किन्तु उसकी एक शर्त है है और आध्यात्मिक सीमा भी यहीं है। सिर्फ आत्मा ही धर्म शिक्षा दे सकती है। अपवित्र, विलासी, मिथ्या-भाषी या किसी प्रकार से दास बना व्यक्ति शिक्षण नहीं दे सकता—जिसके पास यह सम्पत्ति है सिर्फ वही उसे दान में दे सकता है। जो सृष्टा बन चुका है सृष्टि भी वही कर सकता है। जिस व्यक्ति के भीतर आत्मा अवतरित होती है, जिसकी वाणी में आत्मा मुखरित होती है, सिर्फ वही धर्माचरण की शिक्षा दे सकता है। साहस, शुद्धाचरण, प्रेम, ज्ञान आदि में शिक्षण की सामर्थ्य है—वे ऐसे देवदूत हैं जिनको प्रत्येक व्यक्ति अपने हृदय के कपाट खोलकर अपने भीतर अवतरित कर सकता है और वे परिणामतः दिव्य वाणी का वरदान अपने साथ लाते हैं। लेकिन जब व्यक्ति पुस्तकों की सामर्थ्य पर, धर्म-संस्था की प्रथानुसार या प्रचलित प्रणालियों के अनुकरण पर धर्म-प्रचार करने लगता है तो उसका यह प्रलाप-मात्र ही है। उसे चुप करा देना ही अच्छा है।

ऐसे ही पवित्र कार्य के लिए आप अपने जीवन को लगाने जा रहे हैं। मेरी कामना है कि आप अपनी आकांक्षा एवं आशा के आवेगों में ही अपने आमंत्रण का अनुभव करें। संसार में कर्तव्य का महत्त्व सर्वोपरि है। सत्य का उसमें समावेश रहता है और यही कारण है कि मिथ्या का आरोप सरलता से उस पर नहीं हो पाता। यहाँ यह स्पष्ट करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ कि ईश्वरीय सन्देश को प्रकट करने की जैसी आवश्यकता आज है वैसी पहले कभी नहीं रही थी। अपने जिन विचारों को मैंने यहाँ प्रस्तुत किया है उनसे मेरी यह धारणा आप पर स्पष्ट हुई होगी—और मेरा यह विश्वास है कि संसार के अधिकांश लोग इस धारणा का समर्थन करते हैं—कि हम सर्वव्यापी पतन के बीच से रह रहे हैं और सामाजिक धर्म करीब-करीब मर चुका है। आत्मा का प्रचार नहीं किया जाता। चर्च अपने पतन के मार्ग पर लड़खड़ा रहा है—उसकी नसों से सारा जीवन-रस सूख चुका है। इस अवसर पर, जब आप ईसा के विश्वास को प्रचारित करने

आज पुरोहित की पूजा में प्रकृति का लावण्य नहीं रहा है। यह कुरूप हो गई है। जब पुरोहित प्रकृति के सम्पर्क में आता है तो हमें उसमें सौन्दर्य प्रतीत होता है और हम स्वयं भी अपने आसनों पर बैठकर पूजा को कहीं अधिक पवित्र, मधुर और श्रेष्ठ बना सकते हैं और बनाते हैं।

धर्म-मंच पर जब कोई रूढ़ि-भक्त अधिकार जमा बैठता है तो उपासक के साथ विश्वासघात हुए बिना नहीं रहता। जैसे ही प्रार्थना शुरू होती है वैसे ही हम संकीर्ण होने लगते हैं। ये प्रार्थनाएँ हमें ऊँचा नहीं उठातीं बल्कि आघात पहुँचाती हैं और हमारी आत्मा के साथ अत्याचार करती हैं। हम अपने लबादे समेटने लगते हैं और एक ऐसा एकान्त प्राप्त करने का प्रयत्न करने लगते हैं जहाँ वह प्रार्थना सुनाई नहीं पड़ सकती। मैंने एक प्रचारक का भाषण सुना और घृणा के साथ मैं कह बैठा कि अब मैं चर्च में कभी नहीं आऊँगा। मनुष्यों को जहाँ जाना होता है वे जाते हैं। तीसरे पहर चर्च में कोई व्यक्ति नहीं आता। हमारे आस-पास बर्फ की आँधी चल रही थी। तुलना में, बर्फ का तूफान वास्तविक था और प्रचारक एक शव-मात्र! आँखों ने जब बाहर बर्फ गिरने का सौन्दर्य देखा तो इस प्रचारक के साथ विरोधाभास स्पष्ट हो उठा। वह व्यर्थ में अपना जीवन बिता रहा था। जीवन में वह हँसा है, रोया है, उसने विवाह एवं प्रेम किया है, जगत् ने उसकी सराहना की है या उसके साथ धोखा हुआ है—इनमें से एक भी शब्द उसके होंठों पर नहीं आया। यदि वह इस संसार में जीवित रहा होता या कर्मक्षेत्र में उसने भाग लिया होता तो हमको उससे जरूर लाभ पहुँचता। जीवन को सत्य में परिणत कर देने का जो महान् रहस्य उसके ज्ञानमात्र के साथ सम्बद्ध था, उसे उसने कभी सीखा ही नहीं था। अपने धर्म-विश्वास में उसने अनुभव का एक भी रंग नहीं भरा था। इस व्यक्ति ने बीजारोपण किया, पौधे लगाये, बातें कीं, खरीदा और बेचा, पुस्तकें पढ़ीं, खाया-पिया, उसे सिर-दर्द हुआ, धमनियों में रक्त बहा और आज वह हँसता भी है, दुःख भी भोगता है, किन्तु उसके व्याख्यानों में ऐसा कोई इंगित एवं आभास नहीं दिखाई देता कि वह सही अर्थों में कभी

जिया भी है। जीवन के जीवित इतिहास की एक भी पंक्ति उसने नहीं लिखी। सच्चे प्रचारक की कसौटी यही है कि वह अपने श्रोताओं के सामने अपना जीवन-दर्पण खोलकर रख देता है—ऐसा जीवन जो विचारों की अग्नि में तप गया हो। लेकिन अनुपयुक्त प्रचारक के विषय में यह नहीं कहा जा सकता कि वह कब पैदा हुआ था, उसके पिता या बालक है या नहीं, वह धनवान है या रंक, वह नागरिक है या ग्रामीण—उसके आत्म-चरित का ऐसा कोई अंश उसके व्याख्यान से स्पष्ट नहीं हो पाता। ऐसी स्थिति में यह आश्चर्य की बात है कि व्यक्ति फिर भी चर्च में पूजा करने आते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि शायद उनके घर मनहूस होते हैं इसीलिए वे इस व्यर्थ के कोलाहल को पसन्द करते हैं। इससे यह भी सूचित होता है कि आत्मा के नाम पर खड़े किये गए स्थानों में परोक्ष सम्पर्क के कारण ही स्वाभाविक रूप से कुछ आकर्षण पैदा हो जाता है। अच्छा श्रोता ऐसी परिस्थितियों से भी पूरा लाभ उठाने की चेष्टा करता है। उसे इन मिथ्या व्याख्यानों से भी अतीत की आध्यात्मिक अनुभूतियाँ याद आ जाती हैं और इसे ही वह अपनी बड़ी भारी क्षति-पूर्ति समझ लेता है। उसके विरोध एवं विद्रोह न करने का कारण भी यही है।

मैं इस बात से अपरिचित नहीं हूँ कि हमारे अयोग्य धर्म-प्रचार से भी कुछ-न-कुछ लाभ अवश्य होता है। किसी श्रोता के कान ऐसी रसायन-शालाएँ होती हैं कि प्रतिकूल पोषण भी वहाँ सद्गुण में परिणत हो जाता है। सभी प्रार्थनाओं एवं प्रवचनों में, चाहे वे मूर्खतापूर्ण ढंग से व्यक्त हुए हों, एक काव्यात्मक सत्य अवगुण्ठित रहता है। अतः एकाग्रतापूर्वक उन्हें सुनना चाहिए। क्योंकि प्रत्येक प्रार्थना या प्रवचन आत्मा के अत्यन्त स्फूर्त क्षण की श्रेष्ठ अभिव्यक्ति ही होता है और अवाक् प्रचारक के शब्दों में व्यक्त होने पर भी वे एक महिमामयी स्मृति जाग्रत कर देते हैं। हमारी प्रार्थनाएँ एवं चर्च की रूढ़ियाँ हिन्दुओं के राशि-चक्र एवं ज्योतिष के प्रतीकों की भाँति हैं जो आज के जीवन में व्याप्त सभी व्यापारों से अपरिचित हो चुके हैं। किसी अतीत काल में बुद्धि के उच्च विकास की ही वे सूचना देते

हैं। अतः जिज्ञासु-भाव सदैव ही लाभप्रद होता है। समाज के काफी बड़े अंश में धर्म-प्रचार कई प्रकार के अन्य विचारों और भावों को उत्पन्न करता है। लापरवाह नौकर को हमें फटकारना नहीं चाहिए। उसकी सुस्ती के तात्कालिक बदले को देखकर हम दया से भर जाते हैं। लेकिन शोक है उस अभागे व्यक्ति के लिए जो धर्म-मंच पर खड़ा होकर भी जीवन को आध्यात्मिक पोषण नहीं देता। वहाँ जो भी होता है उसको अपराधी बनाता है क्या वह देशी या विदेशी धर्म-प्रचार के लिए चन्दे की माँग करेगा? एकदम उसके चेहरे पर लज्जा आरक्त हो उठेगी जबकि उपस्थित जनता के सामने वह यह प्रस्ताव रखेगा कि उन्हें सौ या हजार मील दूर रुपया भेजना है— ऐसे ही धर्म-प्रचार की व्यवस्था के लिए जैसा कि वह यहाँ करता है या सत्य की तीक्ष्ण ज्योति से बचने के लिए सौ या हजार मील दूर जाना चाहता है। क्या वह जनता से धर्म-प्राण जीवन व्यतीत करने का आग्रह करेगा? क्या वह किसी व्यक्ति से रविवार की सभा में आने का अनुरोध करेगा जबकि वह एवं सारी जनता उसके खोखलेपन से पूर्णतया परिचित हो चुकी है? क्या वह उनको 'लार्ड्स सपर' में वैयक्तिक रूप से निमन्त्रित करेगा? वह साहस नहीं कर सकता। इन उपासना-कांडों में यदि हृदय का सहयोग नहीं है तो कोई भी पादरी जनता से इनमें उपस्थित होने का आग्रह नहीं कर सकता। गाँव के साहसी धर्म-निन्दक को वह क्या कहेगा? गाँव का यह निन्दक पादरी के चेहरे, रूप एवं रहन-सहन में भय के ही दर्शन करता है। सज्जनों के दावों को उपेक्षित करके हमें इस वाद-विवाद की सत्यता को विकृत नहीं करना है। मैं अनेक पादरियों के स्वाभिमान, पवित्रता और शुभ चेतना से परिचित हूँ। पूजा का जो भक्ति-भाव आज तक के जन-जीवन में अवशेष है उसका सारा श्रेय इन पवित्रात्माओं को ही है जो यत्र-तत्र चर्चों में प्रवचन करते हैं, जो अपने से पूर्व के मनीषियों के आदर्शों को हृदय की श्रद्धा से सजीव बनाकर आज भी हमारे प्रेम एवं भय और सदाचरण को जाग्रत करते रहते हैं। साथ ही, अपवाद महान् प्रचारकों में ही नहीं मिलते—लेकिन हमारे जीवन के उच्चतम क्षणों में—प्रत्येक व्यक्ति के सत्य

प्रज्वलित क्षणों में—ऐसी प्रेरणाएँ स्वतः ही फूट निकलती हैं। लेकिन इन अपवादों के होते हुए भी यह तो सत्य ही है कि इस देश के धर्म-प्रचार में परम्परा का ही बोल-बाला है। यह मानना पड़ेगा कि प्रवचन यहाँ आत्मा से नहीं, स्मृति से निःसृत होता है। यह भी सत्य है कि प्रचार का लक्ष्य यहाँ उदात्त नहीं है, सनातन एवं वांछित की ओर वह नहीं जाता और यह भी निर्विवाद है कि परम्परा-सम्मत ईसाई धर्म, जहाँ दिव्यत्व का निवास है एवं जो शक्ति और आश्चर्य का स्रोत है, मनुष्य की उस नैतिक बुद्धि के अनुसन्धान से वञ्चित करके धर्म-प्रचार को नष्ट कर रहा है। उस सर्वोच्च सत्ता, उस सर्वानन्द के खिलाफ यह कितना निर्दय अन्याय है जबकि यह सत्ता ही विचारों को प्रिय एवं समृद्ध बना सकती है। नक्षत्र-लोक भी इस सत्ता के अंश-मात्र से ही संचालित है और इसी महान् सत्ता को उपेक्षित, दंडित, एवं अनादृत किया जाता है—एक शब्द भी उसके प्रसंग का कार्यान्वित नहीं किया जाता। धर्म-मंच पर खड़ा पादरी यदि इस सत्ता को ओझल कर देता है तो वह अपना विवेक भी खो देता है और एक अज्ञात मरीचिका के पीछे ही भागता रहता है। इसी संस्कृति की कमी के कारण समाज की आत्मा रुग्ण एवं आचरणहीन हो गई है। आत्म-बोध के लिए और अपने भीतर मुखरित दिव्य चेतना को जानने के लिए उसे कठोर एवं उत्कर्षोन्मुख क्रिश्चियन अनुशासन के सिवाय किसी चीज की जरूरत नहीं है। आज तो मनुष्य अपने-आप से ही लज्जित है; सहिष्णुता एवं दया का पात्र बना आज का मानव दुनिया में छिपकर कायरतापूर्वक चलता है और मुश्किल से हज़ार वर्ष में कोई एक व्यक्ति ही ऐसा पैदा होता है जो विवेकी एवं हितैषी है और जिसके अवसान पर दुनिया आँसू बहाती है और जिसे वह श्रद्धा से पूजती है।

निःसन्देह ऐसे समय भी आते हैं जबकि सत्य के सम्बन्ध में बुद्धि की निष्क्रियता के कारण नामों एवं व्यक्तियों में लोगों का ज्यादा विश्वास ज़म जाता है। इंगलैण्ड और अमरीका के प्यूरिटनों ने कैथोलिक चर्च के ईसा और रोम की रूढ़ियों के भीतर अपने त्यागमय धर्माचरण और नागरिक स्वतन्त्रता की

लालसा का स्रोत देखा था। लेकिन आज तो उनकी धर्म-भावना भी जीर्ण हो चली है और उसे स्थानापन्न नहीं किया जा रहा है। मैं तो यह सोचता हूँ कि चर्च में जाते समय कोई भी व्यक्ति आज इस विचार एवं भावना से वंचित नहीं रहता कि मनुष्य पर से उपासना का भाव तिरोहित होता जा रहा है। सज्जनों के प्रेम और दुर्जनों के भय पर से उसने अपना प्रभाव खो दिया है। देहात में, पड़ोस में एवं अन्यत्र सभी जगह चर्च का प्रभाव मिटता जा रहा है। धार्मिक सभाओं से चरित्र एवं धर्म वापिस लौट रहे हैं। मैंने एक भक्त को आक्रोश के साथ यह कहते हुए सुना है कि "रविवार को चर्च जाना पाप-जैसा लगता है।" सज्जनों का चर्च में आना जो लक्ष्य था वह अब दुराशा-मात्र रह गया है। एक दिन था कि सामान्य रूप से धनी-निर्धन, ज्ञानी-मूढ़ बालक-वृद्ध—सभी चर्च में आत्मा की समतलना पर एकत्र होते थे। आज वही घटना एक विडम्बना हो गई है!

मित्रो, इन दो दोषों के भीतर मैंने चर्च के पतन और धर्म-क्षय के कारण पाये हैं। उपासना के क्षय से बड़ी कौन सी विपत्ति एक राष्ट्र के सिर पर पड़ सकती है? इसके फलस्वरूप सब-कुछ नष्ट हो जाता है—प्रतिभा *मन्दिर को छोड़कर राजमंच या व्यापार-क्षेत्र में चली जाती है,* साहित्य छिछला रह जाता है, विज्ञान निर्जीव हो जाता है, अन्य कर्मक्षेत्रों की आशा में युवकों की आँखें लालायित नहीं होतीं। पारम्परिक आदर की *भावना मिट जाती है। समाज मिथ्यात्व पर जीता है और मनुष्य बिना* महत्त्व प्राप्त किये ही मर जाते हैं।

और अब भाइयो, आप पूछेंगे कि इन नैराश्यपूर्ण दिनों में हमको क्या *करना चाहिए? रोग का उपचार तो चर्च के प्रति हमारी शिकायतों में* पहले से ही घोषित हो चुका है। हमने आत्मा के विपक्ष में चर्च को रखा है। अतः आत्मा में ही मुक्ति की खोज करनी चाहिए। क्रान्ति तो मनुष्य के साथ बँधी है। परम्परा तो दासों के लिए है। जब मनुष्य अपने को व्यक्त करने लगता है तो सारे ग्रन्थ सुबोध बन जाते हैं, अस्पष्टताएँ स्पष्ट हो जाती हैं और धर्म रूप ग्रहण करते हैं। मनुष्य धार्मिक बन जाता है। सचमुच

यह मनुष्य एक चमत्कार है। चमत्कारों का रहस्य उसने जान लिया है। मनुष्य निन्दा एवं स्तुति करते हैं। लेकिन वह सिर्फ 'हाँ' या 'ना' ही कहता है। धर्म की जड़ता या प्रगति-हीनता, प्रेरणा के युग की समाप्ति में विश्वास एवं बाइबिल की सत्यता में संशय; ईसा को मनुष्य मानने में नास्तिकता का भय—ये सब बातें पूरी स्पष्टता के साथ यह सूचना देती हैं कि हमारी धर्म-परम्परा काफी मिथ्या हो गई है। सच्चे धर्माचार्य का तो कर्तव्य यह है कि वह हमको वर्तमान में परमात्मा दिखलावे, अतीत का नहीं—वह हमको बतलावे कि 'परमात्मा यह है'—'वह था' नहीं। वह हमको यह बतलावे कि परमात्मा पहले ही नहीं आज भी बोलता है। सच्चा ईसाई-धर्म—ईसा की भाँति मनुष्य की सनातन मान्यताओं में विश्वास—आज समाप्त हो गया है। आज मनुष्य की आत्मा में किसी की श्रद्धा नहीं रही—सिर्फ किसी पुरातन या बिछुड़े व्यक्ति को ही लोग पूज रहे हैं। अफसोस, कोई भी आज अकेला नहीं चल रहा है। रहस्य में से झाँकने वाले परमात्मा की उपेक्षा करके आज व्यक्ति झुण्ड बनाकर किसी भी सन्त या कवि के पास पहुँचते हैं। एकांत में विचार करना उन्हें मान्य नहीं है, जन-समूह में अन्धे बनकर रहना ही उन्हें सुहाता है। अपनी आत्मा की अपेक्षा वे समाज को ज्यादा समझदार देखते हैं। वे यह नहीं जानते कि एक आत्मा—अकेली उनकी आत्मा ही—सारे संसार से ज्यादा समझदार है। काल के महासिंधु में जातियाँ एवं नस्लें समाधिस्थ हो जाती हैं और एक तरंग भी उनके बचने एवं डूबने की सूचना नहीं देती—लेकिन एक आत्मा की शक्ति इतनी अनश्वर है कि मूसा, जेनो या जोरोस्टर के रूप में वह सदैव पूजी जाती है। राष्ट्र या प्रकृति की आत्मा बनने की दिशा में कोई महत्त्वाकांक्षा पोषित नहीं करता किन्तु किसी सम्प्रदाय का सदस्य या किसी गुरु का शिष्य प्रत्येक व्यक्ति बड़ी आसानी से हो जाता है। जब आप एक बार भगवान् के प्रति अपना ज्ञान भुला देते हैं, अपनी स्वयं की आध्यात्मिक भावना को दबा देते हैं और दूसरे ज्ञान को—चाहे वह पैगम्बर का हो, कार्ल मार्क्स का हो, [illegible] का हो—अपना लेते हैं तो इस पराई अनुभूति की [illegible]

परमात्मा से दूर भागते जायेंगे और वैयक्तिक रूप से आपकी भी वही दुरवस्था हो जायगी जो सदियों के बाद हमारे समाज की हो गई है कि लोगों को अपनी अंतरस्थ दिव्यता में विश्वास ही नहीं हो पा रहा है। कितनी चौड़ी खाई परमात्मा एवं मनुष्य के बीच पैदा हो गई है।

मेरा आपसे आग्रह है कि आप अलग-मार्ग बनावें; अन्य आदर्शों को छोड़ दें चाहे वे आपकी कल्पना में सर्वाधिक पवित्र हों और फिर आप बिना मध्यस्थ की सहायता के परमात्मा से प्रेम करने का साहस करें। आपको ऐसे मित्र काफी तादाद में मिल जायेंगे जो आपके सामने आचरणार्थ ऐंजली, ओबरलिन तथा अन्य संत-पैगम्बरों के नमूने पेश करेंगे। इन मित्रों के लिए भगवान् का आभार मानिए लेकिन उनसे यह कहिये, "मैं भी तो मनुष्य हूँ।" अनुकरण अपने मॉडेल से आगे नहीं बढ़ सकता। अनुकरण करने वाला बीच में ही त्रिशंकु-सा लटका रहता है। लेकिन अन्वेषक की प्रगति रुकती नहीं, क्योंकि आगे बढ़ना उसकी स्वाभाविक प्रवृत्ति है और उसमें वह आकर्षण देखता है। अनुकरण करने वाले में अपनी नहीं पराई चीज स्वाभाविक हो गई है। अतः उसकी स्वयं की कर्म-स्फूर्ति एवं सुन्दरता से वह वंचित हो जाता है।

आप तो परमात्मा के नवजात चरण हैं, अतः अपनी सारी समरूपता छोड़ दीजिए और मनुष्य को सीधे भगवान् के परिचय में लाइए। एक-मात्र अपना लक्ष्य यही रखिए। इसके सामने फैशन, रीति-रिवाज, सत्ता, कुल और धन आपके लिए निरर्थक हैं। आपके लिए ये आँखों की पट्टियाँ न बन जावें जिससे कि आप सत्य के दर्शन न कर सकें। आप अगाध-अनन्त मानस के अविकार में निमग्न बने रहें। आपके लिए यह आवश्यक नहीं है कि आप अपने क्षेत्र के प्रत्येक परिवार को रोज देखने जाया करें। लेकिन यह करें कि अब आप उनमें से किसी पुरुष या नारी से मिलें तो उन्हें अपनी दिव्यता का परिचय दें। उनके विचारों एवं गुणों को जाग्रत करें। उनके समीत लक्ष्यों को अपनी मैत्री द्वारा दृढ़ बनाएँ। आपके वातावरण में उनकी दलित चेतनाएँ सहर्ष नवजीवन का साँस लेने लगें। वे अपने संशयों के विषय में यह

[illegible] कि ऐसे ही संसार [illegible] हमारे मन में भी घटित होती रहे है और [illegible]-
[illegible] गहराई हमारी [illegible] अनुभव किया है । हमारे हृदय पर [illegible] करने
से [illegible] दूसरों ने [illegible] को [illegible] कर सके हैं । हमारे [illegible],
[illegible] के बावजूद भी हमें निःसंदेह यह आनन्द होगा
कि सब मनुष्यों में [illegible] होती है—[illegible] जीवन के
[illegible] को महत्त्व देते हैं; वे [illegible] के [illegible]
रहते हैं और [illegible] में [illegible] होना चाहते हैं ।
जीवन के [illegible] एवं [illegible] में जब हमारी स्मृति पर वे भेंटें चमक
जाती हैं, जब हमने वे [illegible] किये थे जिन्होंने हमारे जीवन को [illegible]
उज्ज्वल बना दिया है तो हमारे आनन्द की सीमा नहीं रहती । क्योंकि उन
आत्माओं ने हमारे ही विचारों को वाणी द्वारा व्यक्त कर दिया था; हम जो
जानते थे उसे उन्होंने साकार किया था और हमें यह आज्ञा दी थी कि हम
अपने अन्तर्यामी के आदेशों पर चलने का ही प्रयत्न करें । आप अपना
पद भूलकर मनुष्यों से मिलें । फिर देखिये, फरिश्ते की भाँति वे अपने प्रेम
के साथ आपका अनुकरण करेंगे ।

इस लक्ष्य के सामने आप क्षुद्र साध्य को मत अपनाइए । क्या हम समाज द्वारा प्रशंसित गुण के उपार्जन का मोह नहीं त्याग सकते और परिपूर्ण सामर्थ्य के एकान्त में गहराई से नहीं पैठ सकते ? समाज की प्रशंसा को प्राप्त करना कठिन नहीं है । करीब-करीब सभी व्यक्तियों में यह गुण होता है । लेकिन परमात्मा के सामीप्य का तात्कालिक प्रभाव यह होगा कि ऐसे गुण पार्श्वभूमि में तिरोहित हो जायँगे । कुछ व्यक्ति ऐसे भी हैं जो अभिनेता या वक्ता नहीं हैं, बल्कि प्रभाव-प्रतीक हैं; उनके लिए यश और प्रदर्शन क्षुद्र बातें हैं; वे वास्तव में प्रवीणता से घृणा करते हैं; उनके लिए कला एवं कलाकार प्रदर्शन और गौण लक्ष्य होते हैं—इन्हें वे ससीम एवं स्वार्थ का अतिरंजित रूप एवं अन्तर्यामी की संकीर्णता ही मानते हैं । वक्ता, कवि और सेनापति हमारी आदर-भावना एवं उदारता के कारण ही सुन्दर स्त्रियों जैसे हम पर अधिकार करना चाहते हैं । मन की संलग्नता के द्वारा उनका विक्षेप

कीजिए; ऊँचे एवं सनातन सिद्धान्तों को प्रकाशित करके उनकी हीनता प्रकट होने दीजिए और वे आपके स्वतन्त्र अधिकार का आदर करने लगेंगे और वे यह भी अनुभव कर लेंगे कि आपके व्यक्तित्व के अन्य गौण स्थलों में ही उन्हें विकास पाने की गुन्जाइश मिल सकती है। निःसन्देह वे आपके अधिकार को महसूस करते हैं; क्योंकि वे भी सर्वज्ञ परमात्मा के आप-जैसे ही पात्र हैं—उस परमात्मा के जो मध्याह्न सूर्य के प्रकाश की भाँति बुद्धि की रचनाओं की छायाओं के सारे स्तर मिटा देता है।

इस उच्च आत्म सामीप्य में सचाई के महान् तथ्यों का अध्ययन कीजिए। साहसी परोपकार एवं मित्रों के प्रति स्वातन्त्र्य-मनोवृत्ति—जिसमें कि अपने प्रियजनों की कोई भी अनुचित कामना हमारे स्वातन्त्र्य को कुण्ठित न कर सके और सत्य के लिए हम उदारता के मुक्त प्रवाह का भी विरोध कर सकें। सदाचरण ही ऐसी एक शक्ति हो सकती है जो पूरे साहस के साथ और जन-निन्दा एवं स्तुति से चिन्तित हुए बिना इस उच्च भूमि पर व्यक्ति को प्रतिष्ठित कर सकती है। शुभाचरण पर आप एक बहुरूपिये की सराहना करेंगे; किन्तु एक सन्त की नहीं। शुभाचरण को अत्यन्त स्वाभाविक मानने वाला मौन ही उसकी सबसे बड़ी प्रशंसा है। ऐसी आत्माएँ जब प्रकट होती हैं तो वे 'सद्गुणों के ईश्वरीय सरक्षक', सनातन संयम की प्रतीक एवं भाग्य-विधात्री होती हैं। किसी को उनके साहस की प्रशंसा करना आवश्यक नहीं है—वे तो प्रकृति के स्वयं हृदय एवं आत्मा हैं। प्रिय मित्रो, हमारे भीतर जो शक्ति-स्रोत हैं उनको तो हमने प्रयोग में अभी लाया ही नहीं है। इस संसार में ऐसे व्यक्ति भी हैं जो धनको सुनकर ताजा हो जाते हैं; ऐसे व्यक्ति भी हैं जिन्हें सारी जन-सृष्टि को भयभीत एवं अवसन्न बना देने वाली संक्रान्ति दुलहिन की भाँति प्रिय प्रतीत होती है—ऐसी संक्रान्ति का सामना करने के लिए विवेक या मितव्ययिता की नहीं बल्कि स्पष्ट सूझ, दृढ़ता और त्याग की तत्परता की जरूरत रहती है। मेसिना के बारे में नेपोलियन ने कहा था कि युद्ध का पाँसा खिलाफ जाने के पूर्व वह अपने पूरे व्यक्तित्व को अनुभव नहीं कर रहा था। लेकिन जब उसके आसपास लाशों के ढेर एकत्र

होने लगे तो उसके संगठन की शक्तियाँ जाग उठीं और उसने भय एवं विजय का जामा पहन लिया। मनुष्य के भीतर का फरिश्ता ऐसी ही भयानक संक्रान्तियों में, अथक सहिष्णुता में और सहानुभूति से परे के लक्ष्यों में प्रकट होता है। लेकिन ये ऐसी ऊँचाइयाँ हैं कि पश्चाताप एवं लज्जा के बिना हम उन तक देख नहीं सकते। भगवान् का आभार मानिए कि यह सब सत्य है।

अब हमको वेदी की यह अभी-अभी बुझी आग फिर से प्रज्ज्वलित करनी है। मौजूदा चर्च की बुराइयाँ काफ़ी स्पष्ट हो चुकी हैं। लेकिन सवाल फिर वही आता है कि क्या किया जाय? मैं यह मानता हूँ कि नई प्रथाओं और कर्मकाण्डों को सम्प्रदाय के रूप में फिर से स्थापित करना एकदम फिजूल है। धर्म हमें बनाता है न कि हम धर्म को बनाएँ और फिर जीवित धर्म तो अपनी अभिव्यक्ति के रूप स्वयं बना लेता है। नई प्रणाली को शुरू करने के सारे प्रयत्न ऐसे ही शुष्क हैं जैसे कि फरासीसियों ने बुद्धि की देवी को अर्घ्य चढ़ाने के लिए नई प्रणाली का आज अवलम्ब लिया है। यह काफी शुष्क है और आज प्रचार के तख्तों से शुरू होकर कल पागलपन एवं हत्या में परिणत हो जायगी। इससे अच्छा तो यह है कि मौजूदा रूपों में ही आप संजीवनी भरें। क्योंकि यदि आप स्वयं एक बार संजीवित हो जायँ तो उपासना के वे रूप भी नये हो जायँगे। पहले इन विकृतियों को ठीक कीजिए। आत्मा का नया श्वासोच्छ्वास तो अपने-आप भर जायगा। रूपों का सारा क्रम सदाचरण के एक स्पंदन से जीवित एवं अमर हो उठेगा। ईसाई-धर्म की दो अनुपम वसीयतें हमें मिली हैं—पहली 'सेबबाथ' है, सारे संसार का आनन्दोत्सव जिसका आध्यात्मिक प्रकाश दार्शनिक के एकान्त गृह में, मजदूर की कोठरी में, कैदी की चहारदीवारी में, एवं सर्वत्र पहुँचता है और वह पापी तक के हृदय में आत्मा का गौरव जगा देती है। इसे ऐसे मन्दिर के रूप में स्थिर रखना है जो नये प्रेम, नये विश्वास, नई दृष्टि से मानवता के हित के लिए अपनी पुरानी गरिमा में आलोकित हो जाय। दूसरी वसीयत है धर्म-प्रचार अर्थात् मनुष्य का मनुष्य

के साथ वार्ता-सम्पर्क। तात्त्विक रूप से यह प्रणाली सबसे कारगर है। आज जब आप धर्म-मंच, सभा, घर, मैदान, और मनुष्यों की किसी एकत्र समिति में जाते हैं तो उसी सत्य की भाषा बोलते हैं जिसे आपकी चेतना और जिन्दगी ने आपमें प्रेरित किया है और इस प्रकार प्रतीक्षित एवं दुर्बल हृदयों को नई आशा और अनुभूति से उत्फुल्ल करते हैं तो बीच में बाधा कौन-सी रह जाती है!

मैं उस घड़ी की प्रतीक्षा में हूँ जब कि वह सनातन सौन्दर्य, वह सच्चिदानन्द, जिसने पूर्वीय निवासियों, विशेषकर हिब्रू सन्तों की, आत्माओं को चिरमुग्ध कर दिया था और उनके अधरों से सभी युगों के लिए भविष्य-वाणियाँ व्यक्त हुई थीं, वह फिर पाश्चात्य देशों में भी व्यक्त होगा। हिब्रू और यूनानी धर्म-ग्रन्थों में ऐसे अमर वाक्य संचित हैं जिन्होंने लाखों व्यक्तियों को आत्मा का पोषण दिया है। लेकिन वे प्रबन्धात्मक रूप से सुव्यवस्थित नहीं हैं; टुकड़ों में बिखरे पड़े हैं और चेतना के क्रम में सगठित नहीं है। मैं उस नये मसीहा की खोज में हूँ जो इन ज्वलन्त नियमों को उनकी उपयोगिता के अनुरूप कार्यान्वित करेगा और जो उनके परिपूर्ण कर्म-सौन्दर्य को देखेगा; जो इस जगत् को आत्मा का दर्पण और गुरुत्वाकर्षण के नियम को हृदय की पवित्रता से एक रूप मानेगा तथा जो यह प्रमाणित कर दिखायगा कि विज्ञान, सौन्दर्य एवं आनन्द के साथ कर्तव्य की परिपूर्ण संगति है।

: ३ :

सुधारक मनुष्य[1]

अध्यक्ष महोदय तथा सज्जनो, मैं आपके विचारार्थ मनुष्य के सुधारक के रूप में खास और आम सम्बन्धों पर कुछ विचार प्रस्तुत कर रहा हूँ। मैं यह मान लेता हूँ कि आपकी एशोसियेशन का प्रत्येक युवक विवेक-शील होने के नाते अपने सामने उच्चतम ध्येय रखता है। यह भी मान लिया जाय कि जो जीवन हम व्यतीत कर रहे हैं वह सामान्य और क्षुद्र है; कि कतिपय वे कर्तव्य और कार्य, जिनको पूरा करने के लिए ही हमें मुख्यतः पैदा किया गया था, समाज में इतने दुर्लभ हो गए हैं कि उनकी याद प्राचीन ग्रन्थों और धुँधली परम्पराओं में ही रक्षित हैं; कि सिद्ध और कवि, जैसे सुन्दर और पूर्ण मानव हम नहीं रहे और न ऐसा कोई देखने में ही आता है; कि मानव-शिक्षा के कुछ स्रोत हमारे अन्दर प्रायः संज्ञाहीन और अज्ञात हैं, और कि वह समाज, जिसमें हम रहते हैं, शायद ही यह सुनना सहन कर सके कि हर व्यक्ति को परमानन्द अथवा दैवी प्रकाश प्राप्त करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए तथा उसका दैनिक जीवन आध्यात्मिक संसार के संभोग से उन्नत हो चुका है। इन सब बातों को मानने के बाद—जैसा कि हमें मानना ही चाहिए—भी मेरा खयाल है कि मेरा कोई भी श्रोता इसे अस्वीकार नहीं करेगा कि हम सबको ऐसे अनुशासनों और आचरणों में रहने का

१. २५ जनवरी १८४१ को मेकेनिक्स एप्रेंटिटसेज़ लाइब्रेरी एसोसियेशन के समक्ष वोस्टन में पढ़ा गया भाषण।

प्रदान करना चाहिए जिनमें आध्यात्मिक प्रकृति से पथ-प्रदर्शन और सुस्पष्ट संदेश प्राप्त करने की क्षमता हो। इसके अलावा मैं अपनी यह आशा नहीं छिपाना चाहता कि उपस्थित श्रोताओं में से प्रत्येक व्यक्ति समस्त बुरे रीति-रिवाज, भीरुता और सीमाबद्धताओं का त्याग करने के लिए अपने अन्तःकरण से प्रेरित हुआ है और वह एक स्वतन्त्र एवं सहायक मनुष्य, एक सुधारक और एक परोपकारी जीव होना चाहता है। समाज के साथ एक अनुचर अथवा मेमने के रूप में रहने से वह सन्तुष्ट नहीं, और न अपनी चंचलता से तथा क्षमा-याचना करते हुए जहाँ तक सम्भव हो चोटें बचाते हुए रहना वह पसन्द करेगा। बल्कि इसके विपरीत वह एक साहसी तथा सच्चा व्यक्ति बनना चाहेगा जिसे पृथ्वी की सर्वोत्तम वस्तुओं की ओर सीधी सड़क पानी है और उस पर ईमानदारी से चलते हुए अपने पीछे आने वालों के लिए उसे सुगम बनाना है ताकि वे लोग भी सम्मान और लाभ प्राप्त करते हुए उस मार्ग का अनुसरण कर सकें।

विश्व के इतिहास में सुधार के सिद्धान्त का इतना व्यापक दायरा कभी नहीं रहा जितना कि आज है। लूथरनों, हर्नहटों, ईसावादियों, भिक्षुओं नोक्स, वेस्ले, स्वेडन बोर्ग, बैंथम सबने समाज को कोसते हुए किसी-न-किसी एक चीज—चर्च या राज्य, साहित्य या इतिहास, घरेलू रीति-रिवाज, हाट-बाजार, खाने की मेज अथवा बनाया हुआ पैसा—की इज्जत अवश्य की है। लेकिन यह सब और अन्य सभी वस्तुओं को न्यायालय के बिगुल की आवाज सुनाई दे रही है और उन्हें अपने बारे में फैसला सुनने के लिए जल्दी ही पहुँचना है– ईसाई-धर्म, कानून, वाणिज्य, स्कूल, खेत, प्रयोगशाल; और साम्राज्य, नगर, कायदे कानून, रीति-रिवाज, पुरुष अथवा स्त्री, सभी को नई भावना धमका रही है।

क्या हुआ अगर ये कुछ एतराज, जिनसे हमारी संस्थाएँ आक्रान्त हैं, अत्यावश्यक और अनुचित हैं और सुधारकों का झुकाव आदर्शवाद की ओर है? इससे तो केवल अनुचित व्यवहार की अतिशयता ही जाहिर होती है जिसने मस्तिष्क को विपरीत दिशा के अन्तिम छोर पर पहुँचा दिया है।

[illegible] और [illegible] हो जाते हैं तो विद्वानों की [illegible] की दुनिया में [illegible] पड़ता है और [illegible] कर्मी और [illegible] में आने का [illegible] पड़ता है। [illegible] में एक बार फिर विचारों को बाहर जाना प्रारंभ करने दीजिए, धीरज को मरना और [illegible] करने दीजिए और तब विद्वान [illegible] खुशी से [illegible], नागरिक और व्यापारी बन जाते हैं।

यह बात नहीं विचारों में कोई सुरक्षा न रह सकेगी कि इसमें राष्ट्र, अदालतों के कानून, [illegible] नगरों की मान्यताएँ और संस्थाएँ, सब [illegible] पर खड़ी हुई हैं। सुधार के तत्व का हरेक कानूनीता, और हर नगर के हर नागरिक के हृदय में प्रविष्ट होने का एक गुप्त द्वार है। आपके हृदय में एक नया विचार और आशा प्रस्फुटित हुई है तो साथ ही उसी समय एक हजार अन्य हृदयों में भी एक नई रोशनी जगी है। ज्यों ही आप विदेश जायेंगे यह भेद आप छिपाना चाहेंगे, और देखिए द्वार पर खड़ा कोई आपसे यही कहने को तैयार है। ऐसा कोई भी पक्का और तुला हुआ रुपया पैदा करने वाला आदमी न होगा जो कि आपकी हैरानी के बावजूद भी नवीन विचारों से प्रेरित किसी प्रश्न का सुनते ही न घबरा जाय। हमारा खयाल था कि उनमें खड़े रहने का कुछ माद्दा होगा और वह मुश्किल से मात खायगा लेकिन वह तो काँपकर भागता है। तब विद्वान कहता है—"नगर और नगर की गाड़ियाँ मुझ पर अब कोई प्रभाव न डाल सकेंगी, क्योंकि देखिए मेरा हर एकांगी स्वप्न पूरा होता जा रहा है। वह कल्पना मेरी थी पर उसे ढालने में मुझे संकोच हो रहा था, क्योंकि आप इसलिए हँस पड़ेंगे कि यही बात दलाल, वकील और बाजारू आदमी भी कह रहे हैं। अगर मैं गोल पढ़ने में एक दिन को भी देर कर देता तो वह बहुत देर हो जाती, देखिए, स्टेट स्ट्रीट विचार करती है, और वाल-स्ट्रीट सन्देह कर रही है और भविष्य-वाणी करने को तैयार है।"

इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि अनुचित व्यवहार के कारणों को जानने

की भावना समाज के हृदय में जगे जबकि सच्चरित्र नवयुवकों के मार्ग में यही एक व्यावहारिक बाधा दिखाई देती है। नवयुवक जब जीवन में प्रवेश करता है तो आमदनी के रोज़गारों के मार्ग में उसे दुर्व्यवहारों की दीवार खड़ी दिखाई देती है। व्यापार के तरीके इतने स्वार्थपूर्ण हैं कि चोरी तक पहुँच गए हैं और (यदि सीमा से बाहर नहीं तो) दग़ाबाज़ी की सीमा तक उनका झुकाव हो चुका है। वाणिज्य मनुष्य के लिए स्वभावतः अनुपयुक्त नहीं है और न वह उसके स्वाभाविक गुणों के प्रतिकूल ही है; लेकिन आम तौर से कर्तव्य त्याग और दुर्व्यवहार से बल प्राप्त करके ये काम ऐसे हो गये हैं कि हर कोई छिपकर अनुचित काम करता है, और इसलिए हर युवक को इन्हें स्वीकार करने के लिए अधिक साहस और सूझ-बूझ की आवश्यकता होती है। वह इनमें खो जाता है और हाथ-पैर नहीं चला पाता। क्या उसमें अपूर्व बुद्धि और सचाई है? ये काम उसे कम ठीक लगते हैं और यदि वह उनमें उन्नति करेगा तो उसे अपने उन उज्ज्वल स्वप्नों का बलिदान करना पड़ेगा जो उसने बचपन और युवावस्था में सँजोये थे। उसे बचपन की प्रार्थना-अर्चना भी छोड़नी होगी और कठोर नियमित चापलूसी का जीवन अपनाना पड़ेगा। यदि इस प्रकार का वह अपनापन न बनायगा तो उसके पास जीवन को दुबारा शुरू करने के सिवा कोई चारा न रह जायगा, ठीक उसी प्रकार जैसे कि भोजन प्राप्त करने के लिए भूमि में हल चलाना पड़ता है। यह आरोप हम सब पर लागू होता है, अतः सिर्फ यही आवश्यक है कि व्यापारिक वस्तुओं की प्रगति के सम्बन्ध में कुछ प्रश्न पूछकर जाना जाय कि खेत में उत्पन्न होने से लेकर हमारे घरों में आने तक सैंकड़ों वस्तुओं के रूप में हम कितनी बार झूठी कसमें खाते और धोखेबाज़ी करते हैं। पूर्वी द्वीप समूह (वेस्ट इंडीज़) से प्रतिदिन काम आने वाली कितनी वस्तुएँ हमारे यहाँ आती हैं, फिर भी यह कहा जाता है कि स्पेन के द्वीपों में सरकारी अफसरों की क्षमाशीलता एक आम कहावत बन चुकी है, क्योंकि कोई भी वस्तु हमारे जहाजों पर ऐसी नहीं चढ़ाई जाती जो छल-कपट से सस्ती न कर दी गई है। स्पेन के द्वीपों में अमरीका का हर प्रतिनिधि, सिर्फ कौंसल को छोड़कर कैथो-

आपको मनुष्य कहकर काम करना नहीं चाहता सिर्फ मनुष्य का एक अंग समझता है। इसीलिए ऐसा होता है कि इस प्रकार के समस्त प्रवीण व्यक्ति, जो एक अच्छे लक्ष्य के दुर्निवार्य संघर्ष को अपने अन्दर अनुभव करते हैं, और जो अपनी प्रकृति के नियमानुसार सरलता से व्यवहार करते हैं, वे व्यापार के इन तरीकों को अपने लिए अनुपयुक्त पाते हैं और वे इसे छोड़-कर बाहर आ जाते हैं। ऐसे मामलों की संख्या हर वर्ष बढ़ती जा रही है।

लेकिन व्यापार से बाहर निकल आने पर भी आप अपने-आपको मुक्त नहीं कर लेते। इस अजगर का फुफकारा आदमी के आर्थिक लाभ पहुँचाने वाले समस्त व्यवसायों और आदतों तक पहुँच गया है। हर किसी में अपनी खराबी है। हर एक कोमल और अति कुशाग्र बुद्धिपूर्ण अन्तःकरण को सफलता पाने के लिए अयोग्य समझता है। व्यवसायी से हरेक व्यक्ति कुछ आँखें मूँदने, कुछ दिखावटी अनुरोध करने, रीति-रिवाजों को मानने, उदार भावना तथा प्रेम को अलग रखने, अपने निजी मत तथा उच्च पूर्णता का बलिदान करने की माँग करता है। बुरी रीतियाँ सम्पत्ति की समूची प्रथा में व्याप्त हैं जिन्हें हमारे कानूनों ने स्थापित किया है और जिसकी वह रक्षा करते हैं और एक ऐसी स्थिति आती है कि जब यह कानून प्रेम और बुद्धि की उपज न होकर स्वार्थ की उपज प्रतीत होने लगते हैं। मान लीजिए कि एक व्यक्ति इतना दुखी है कि वह संत के रूप में जन्म ले, तीखा ज्ञान रखे किन्तु एक देवता का-सा प्रेम और भावना भी रखे और इस संसार में उसे रोजी कमानी पड़े; वह अपने-आपको किसी भी लाभदायक कार्य से महरूम पाता है; उसके पास खेत नहीं और न वह उसे मिल ही सकता है, क्योंकि रुपया कमाने और चीजें खरीदने के लिए उसे धन पर ध्यान केन्द्रित करना होगा जिसका अर्थ है यहाँ तक अपने-आपको बेच देना जबकि उस व्यक्ति के लिए वर्तमान उतना ही पवित्र और अलभ्य है जितना कि भविष्य। हाँ, जब कि एक के पास भूमि नहीं है, तो मेरा मुझे, तुम्हारा तुम्हें, वाली बात मिथ्या है। इस बुराई के तन्तु और लताओं में फँसकर निकलना असम्भव है और

लिप्त होने की शपथ ले चुकता है अथवा इसी बात को किसी पादरी से घोषित करा देता है। एबोलिशनिस्ट (दासता की प्रथा के विरोधी) ने दक्षिणी नीग्रो के प्रति हमारे भीषण ऋण को हमें बताया है। क्यूबा द्वीप में घृणित दासता के अलावा, ऐसा प्रतीत होता है कि लोग खेती करने के लिए ही यहाँ लाये जाते हैं और इन अभागे अविवाहितों में दस में से एक प्रति वर्ष हमारे लिए चीनी तैयार करने में ही मर जाता है। हमारे चुङ्गीघरों के अधिकारियों द्वारा ली जाने वाली शपथों में से कुछ अंशों को निकालने का काम मैं उन पर छोड़ता हूँ जिन्हें इस बात का ज्ञान है; मैं नाविकों के शोषण के बारे में पूछ-ताछ नहीं करूँगा, न मैं फुटकर व्यापार के तरीकों की छान-बीन करूँगा। मैं तो इसीसे सन्तुष्ट हूँ कि हमारी आम व्यापार-प्रणाली (यह आशा करते हुए कि अन्य निकृष्ट कार्य अपवाद हैं जिनकी समस्त प्रतिष्ठित व्यक्ति निन्दा करते हैं।) स्वार्थ-साधन की प्रणाली है। यह मानव प्रकृति की उच्च भावनाओं से प्रेरित नहीं हुई है। आपस में समान देने-लेने का नियम ठीक तरह उस पर लागू नहीं होता, तो फिर प्रेम और साहस की भावना का तो कहना ही क्या यह तो अविश्वास, छिपाव-दुराव, अत्यन्त तीखेपन और सुविधाएँ देने की नहीं लेने की प्रणाली है। यह ऐसी चीज नहीं जिसे अपने शरीफ दोस्त को बताते हुए मनुष्य को प्रसन्नता हो; जिस पर प्रेम और अभिलाषा की घड़ी में आनन्द और आत्म-स्वीकृति के साथ मनन किया जा सके बल्कि ऐसे मौके पर वह उसे दृष्टि से ओझल कर देता है जिससे सिर्फ उज्ज्वल परिणाम प्रदर्शित हो और उसके रुपया कमाने के तरीके का प्रायश्चित्त उसके खर्च करने का तरीका है। मैं माल बेचने व बनाने वाले व्यापारी को दोष नहीं देता। हमारे व्यापार के पाप किसी एक वर्ग अथवा व्यक्ति के नहीं हैं। एक तोड़ता है, एक बाँटता है, एक खाता है। हर कोई भाग लेता है, हर कोई ऊपर से नीचे तक अपने दोष स्वीकार करता है, किन्तु कोई भी अपने-आपको हिसाब का देनदार नहीं समझता। उसने बुराई पैदा नहीं की; वह उसे बदल भी नहीं सकता। वह है क्या ? एक दुर्बोध व्यक्ति जिसे रोजी चाहिए। यही खराबी है कि कोई भी अपने–

आपको मनुष्य बनकर काम करना नहीं चाहता सिर्फ मनुष्य का एक अंग समझता है। इसीलिए ऐसा होता है कि इस प्रकार के समस्त प्रवीण व्यक्ति, जो एक अच्छे लक्ष्य के दुर्निवार्य दर्द को अपने अन्दर अनुभव करते हैं, और जो अपनी प्रकृति के नियमानुसार सरलता से व्यवहार करते हैं, वे व्यापार के इन तरीकों को अपने लिए अनुपयुक्त पाते हैं और वे इसे छोड़कर बाहर आ जाते हैं। ऐसे मानवों की संख्या हर वर्ष बढ़ती जा रही है।

लेकिन व्यापार से बाहर निकल आने पर भी वह अपने-आपको मुक्त नहीं कर लेते। इस व्यवहार का बुलबुला आदमी के आर्थिक लाभ पहुँचाने वाले समस्त व्यवसायों और आदतों तक पहुँच गया है। हर किसी में अपनी लगती है। हर एक कोमल और अति कुशाग्र बुद्धिपूर्ण अन्तःकरण को सफलता पाने के लिए अयोग्य समझता है। व्यवसायी से हरेक व्यक्ति कुछ आँखें मूँदने, कुछ रिश्वतों का अनुरोध करने, रीति-रिवाजों को मानने, उदार भावना तथा प्रेम को अलग रखने, अपने निजी मन तथा उच्च पूर्णता का बलिदान करने की माँग करता है। बुरी रीतियाँ सम्पत्ति की समूची प्रथा में व्याप्त हैं जिसे हमारे कानूनों ने स्थापित किया है और जिसको वह रखा . और एक ऐसी स्थिति आती है कि जब यह कानून प्रेम और बुद्धि की उपज न होकर स्वार्थ की उपज प्रतीत होने लगते हैं। मान लीजिए कि एक व्यक्ति इतना दुःखी है कि वह संत के रूप में जन्म ले, सीखा ज्ञान रखे किन्तु एक देवता का-सा प्रेम और भावना भी रखे और इस संसार में उसे रोजी कमानी पड़े; वह अपने-आपको किसी भी लाभदायक कार्य से महरूम पाता है; उसके पास खेत नहीं और न वह उसे मिल ही सकता है, क्योंकि रुपया कमाने और चीजें खरीदने के लिए उसे धन पर ध्यान केन्द्रित करना होगा जिसका अर्थ है यहाँ तक अपने-आपको बेच देना जबकि उस व्यक्ति के लिए वर्तमान उतना ही पवित्र और अलभ्य है जितना कि भविष्य। हाँ, जब कि एक के पास भूमि नहीं है, तो मेरा मुझे, तुम्हारा तुम्हें, वाली बात मिथ्या है। इस बुराई के तन्तु और लताओं में फँसकर निकलना असम्भव है और

स्त्री, बच्चों तथा लाभ और ऋण के सम्बन्धों को स्थापित करके हम अपने-आपको इसमें और फँसा लेते हैं।

इस प्रकार के विचारों ने बहुत से परोपकारी और बुद्धिमान व्यक्तियों का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया है कि शारीरिक श्रम को हर नवयुवक की शिक्षा का अंग होना चाहिए। यदि पिछली पीढ़ी का इकट्ठा किया हुआ धन कलंकित हो जाय, और चाहे हमें उसमें से कितना ही क्यों न दिया जाय, हमें इस बात पर विचार करना चाहिए कि क्या उसे त्याग देना श्रेयस्कर न होगा और क्या प्रकृति तथा पृथ्वी के साथ प्रारम्भिक सम्बन्ध स्थापित करना, बेईमानी तथा निकृष्टता से दूर रहना, संसार के शारीरिक श्रम में अपने हाथों साहसपूर्वक अपना हिस्सा बँटाना अच्छा काम न होगा?

लेकिन कहा जाता है—"क्या! क्या आप श्रम-विभाजन की महान् सुविधाओं से लाभ न उठायँगे? क्या हर व्यक्ति को अपना जूता, मेज, चाकू, डब्बा, और सूई खुद बनानी चाहिए? इससे तो मनुष्यों को उनके ही कार्यों द्वारा बर्बरता की ओर लौटाना होगा।" मुझे तुरन्त ही सदाचारी क्रान्ति के आसार दिखाई नहीं देते, फिर भी मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मुझे उस परिवर्तन से दुःख न होगा जिससे समाज को कुछ सुविधाएँ और विलासिता से वञ्चित होने का खतरा पैदा है, मगर उस परिवर्तन में कृषि-जीवन को इस विश्वास से प्रेरित हो तरजीह मिलनी चाहिए कि हमारे प्रारम्भिक कर्तव्य इस व्यवसाय से ही अधिक अच्छी तरह पालन हो सकेंगे। नवयुवकों द्वारा अपना पेशा आप पसन्द करने में उन्हें उच्च भावना और पवित्रतर रुचि से प्रेरणा मिलती देखकर तथा वाणिज्य, कानून और राज्य-सम्बन्धी कार्यों में जो प्रतियोगिता चल रही है उसे कम होते देखकर कौन प्रसन्न न होगा? यह देखना मुश्किल नहीं कि असुविधा कुछ ही दिन तक रहेगी। यह एक महान् कार्य होगा जो मनुष्यों की आँखें खोल देगा। जब बहुत से आदमी ऐसा कर लेंगे, और जब बहुमत इन सब संस्थाओं में सुधार की आवश्यकता को स्वीकार करेगा, तो इनकी बुराइयाँ समाप्त हो जायँगी। और तभी श्रम-विभाजन से पैदा होने वाले लाभ भी प्राप्त हो सकेंगे और व्यक्ति अपनी

विशिष्ट योग्यता के अनुसार अपने लिए काम पसन्द कर सकेगा, उसमें उसे समझौता करने की आवश्यकता न होगी।

लेकिन आज के ज़माने द्वारा इस सिद्धान्त पर ज़ोर देने के अतिरिक्त कि समाज के सब सदस्यों को समाज के शारीरिक श्रम में भाग लेना चाहिए, प्रत्येक व्यक्ति पर कुछ खास कारण लागू होते हैं कि क्यों उसे शारीरिक श्रम से वञ्चित नहीं रहना चाहिए। शारीरिक श्रम ऐसा काम है जो कभी पुराना नहीं पड़ता और जो प्रत्येक व्यक्ति पर लागू हो सकता है। अपनी संस्कृति के लिए एक मनुष्य के पास अपना खेत या मशीनी काम होना चाहिए। हमें अपनी उच्चतर कृतियों के लिए, कविता और दर्शन के मृदु विनोद के लिए अपने हाथ के कामों में आधार बनाना चाहिए। इस कठोर संसार में अपने विभिन्न आध्यात्मिक गुणों के लिए हमें विरोध तो झेलना ही पड़ेगा, नहीं तो वे पैदा ही न होंगे। शारीरिक श्रम बाहरी संसार का अध्ययन है। धन का लाभ उसी व्यक्ति को होता है जो स्वयं इसे प्राप्त करता है, उत्तराधिकारी को नहीं। जब मैं एक फावड़ा लेकर अपने बाग में जाता हूँ और एक क्यारी खोदता हूँ तो मुझे इतना आनन्द और स्वास्थ्य प्राप्त होता है कि मैं अनुभव करने लगता हूँ कि मैं इतने दिनों तक अपने-आपको धोखे में ही रखे रहा, क्योंकि जो काम मुझे अपने हाथों से करना चाहिए था उसे मैं दूसरों से करा रहा था। सिर्फ स्वास्थ्य ही नहीं इस काम से शिक्षा भी मिलती है। क्या यह सम्भव है कि मैं, जो कितनी ही चीनी, टलिया, रुई, बाल्टी, चीनी के बरतन और कागज-पत्र व्यापारी जान स्मिथ एण्ड कम्पनी के नाम तीन मास में एक बार सिर्फ चेक पर हस्ताक्षर करके ही प्राप्त कर लेता हूँ, वह पूरी कसरत कर पा सकूँगा जो प्रकृति मेरे इन वस्तुओं के प्राप्त करने में मुझसे कराना चाहती थी? स्मिथ, उसके कर्मचारी, व्यापारी और निर्माता; नाविक, वणिक, नीग्रो, शिकारी और कृषक ने चीनी के चीनीपन और रुई के रुईपन में हाथ बटाया है। उन्हें शिक्षा मिली है और मुझे सिर्फ वस्तु। अगर मुझे अपने निजी काम में लगे रहने के कारण गैरहाज़िर रहना पड़ता और अगर मेरा अपना काम इन लोगों-जैसा ही

होता हो तो ठीक ही था; तब मुझे अपने हाथ-पैरों पर यकीन होता। लेकिन अब मुझे अपने बढ़ई, हल वाले और अपने बावर्ची के सामने शर्म आती है, क्योंकि उनमें एक प्रकार का स्वावलम्बन है, वे मेरी मदद के बिना वर्षों रह सकते हैं किन्तु मैं उन पर आश्रित हूँ। और अपने हाथ-पैर चलाकर मैंने अपना अधिकार प्राप्त नहीं किया है।

सम्पत्ति के प्रथम और द्वितीय मालिकों के अन्तर पर विचार कीजिए। हर प्रकार की सम्पत्ति अपने खास तरह के शत्रुओं का शिकार बनती है जैसे कि लोहा मोरचे का, लकड़ी दीमक की, कपड़ा कीड़ों का, अनाज पई, दुर्गन्ध एवं घुन का; धन चोर का; वाटिका छोटे कीड़े-मकोड़ों की; एक बोया हुआ खेत जंगली झाड़ियों और पशुओं द्वारा बनाये हुए रास्ते का; पशु भूख का; एक सड़क वर्षा और कुहरे का, एक पुल बाढ़ के पानी का। जो व्यक्ति भी इन वस्तुओं को अपने पास रखेगा उसे इनके शत्रुओं की फौज से उन्हें बचाना पड़ेगा अथवा उसकी मरम्मत करते रहना होगा। एक आदमी, जो अपनी आवश्यकता की वस्तु स्वयं तैयार करता है, मछलियों के शिकार के लिए अपनी डोंगी या लकड़ी का पीपा स्वयं बनाता है, उसके लिए उसे ठीक प्रकार से प्रयोग करना सहज होता है। जिस किसी वस्तु की उसे आवश्यकता होती है वह तुरन्त पा जाता है, उससे उसे परेशानी नहीं होती और न उसके कारण उसकी नींद ही हराम होती है, लेकिन जब वह वर्षों में एकत्र समस्त सामान—घर, पुष्प-वाटिका, जोती हुई भूमि, पशु, पुल, धातु और लकड़ी का सामान, कालीन, रसद का सामान, पुस्तकें, धन आदि अपने पुत्र को दे देता है और वह चतुराई और अनुभव नहीं देता, जिसने ये सब चीजें बनाई या इकट्ठी की थीं तथा अपने जीवन में उनका तरीका और स्थान नहीं बनाता तो पुत्र अपने हाथ मरे पाता है—उन चीजों का इस्तेमाल करने के लिए नहीं वरन् उनकी देख-भाल करने और उन्हें उनके स्वाभाविक शत्रुओं से बचाने के लिए। वे चीजें उसके लिए साधन न बनकर उसके लिए मालिक बन जाती हैं। उन वस्तुओं के शत्रु शिथिल न पड़ेंगे—मोरचा, घुन, पई, वर्षा, सर्दी, बाढ़, अग्नि, सब इसे परेशान करते रहेंगे और सब यह

मालिक से चौकीदार अथवा चौकीदारी करने वाले कुत्ते के रूप में परिवर्तित हो जायगा। कैसा परिवर्तन है! अपने-आपको स्वामित्व की सुन्दर भावना से ओत-प्रोत तथा शक्ति और साधनों की उर्वरा भूमि अनुभव करने के बजाय तथा अपने पिता के समान उन मजबूत और चतुर हाथों, उन चमकीली और बुद्धिमन्त आँखों, लचीले शरीर, बलवान और विशाल हृदय, जिससे प्रकृति प्यार करती थी और भय खाती थी, जिसे हिम और वर्षा, जल और भूमि, जंगली जीव और मछली समान रूप से पहचानते थे तथा उसकी सेवा में रत रहते थे, अब एक दुर्बल छोटे शरीर वाला रक्षित व्यक्ति दीवारों और परदों से ढका हुआ, गरम बिस्तरों में और कोचों में तथा धरती और आकाश के बीच सेवक और सेविकाओं से घिरा है और इन सब पर आश्रित है। वह इन सब वस्तुओं को पाकर उनके शत्रुओं से भयभीत है और उनकी रक्षा करने में इतना अधिक समय व्यतीत करने को बाध्य है कि वह उनके असली इस्तेमाल को भूल बैठा जोकि अपने उद्देश्यों की पूर्ति करना है जैसे कि प्रेम करना, मित्रों की सहायता करना, परमात्मा की पूजा करना, अपनी ज्ञान वृद्धि करना, अपने देश की सेवा करना, अपनी भावुकता में रमना और अब उसे एक धनी व्यक्ति कहा जाता है जोकि वास्तव में है अपनी इस सम्पत्ति का रखवाला और उसका तुच्छ दास है।

अतः इतिहास की सारी दिलचस्पी गरीब की किस्मत में है। ज्ञान, पुण्य, शक्ति मनुष्य की अपनी आवश्यकताओं पर उसकी विजय की प्रतीक हैं, विश्व पर उसकी सत्ता जमाने के लिए यह गुण उसके सैनिक हैं। हर मनुष्य को अपने लिए विश्व-विजय करने का यह स्वर्णावसर प्राप्त होना ही चाहिए। केवल ऐसे ही मनुष्य हममें दिलचस्पी पैदा करते हैं जैसे स्पार्टन, रोमन, सैराकनि, अँग्रेज और अमरीकन, जो आवश्यकता के पंजों में सिर उठाये खड़े रहे हैं और अपनी योग्यता तथा शक्ति के कारण अपने-आपको बाहर निकाल-कर मनुष्य को विजयी बनाते रहे हैं।

मैं श्रम के सिद्धान्त पर आवश्यकता से अधिक कहना नहीं चाहता, और न हर व्यक्ति को किसान बनाने के लिए इतना ज्यादा इसरार करना

चाहता हूँ जितना कि प्रत्येक व्यक्ति को शब्द-कोष-रचयिता बनाने के लिए करना चाहिए। आम तौर से यह कहा जा सकता है कि कृषि सबसे पुराना और सबसे अधिक विश्व-व्यापी व्यवसाय है और जहाँ एक मनुष्य को यह निर्णय करना कठिन है कि कौन-सा काम उसके अनुकूल है वह इसे तरजीह दे सकता है। लेकिन खेती का सिद्धान्त सिर्फ यह है कि हर व्यक्ति को संसार के काम के साथ अपना प्रारम्भिक सम्बन्ध रखना चाहिए; अपने हाथ से काम करना चाहिए, यह नहीं कि वह जेब में थैली डालकर अथवा किसी अशोभनीय और हानिकारक काम में लगे रहकर अपने कर्तव्य से विमुख हो जाय। और इसी कारण श्रम भगवान की ओर से शिक्षा है कि वही सिर्फ ईमानदार जिज्ञासु तथा स्वामी हो सकता है जो श्रम के भेद को सीखता है और सचमुच की चतुराई से प्रकृति का प्रभुत्व छीन लेता है।

मैं विज्ञ व्यवसायी, कवि, पुजारी, कानूनवेत्ता तथा पंडितों की इस दलील को सुनने से इन्कार न करूँगा कि इस वर्ग के लोगों का अनुभव है कि एक परिवार को चलाने के लिए किया गया आवश्यक शारीरिक श्रम बौद्धिक श्रम करने का माद्दा खोकर व्यक्ति को बौद्धिक कार्य के लिए अयोग्य बना देगा। मैं जानता हूँ कि जहाँ कविता और दर्शन के लिए उपयुक्त सुन्दर संगठन होता है, व्यक्ति को अपने विचारों के लिए अवसर रुकना पड़ता है और एक विचार के सुन्दर रूप से प्रदर्शित करने के लिए उसे कई-कई दिन बरबाद कर देने पड़ते हैं, लेकिन वही कार्य थोड़ी-सी कसरत से जैसे खेतों में घूमने, पतवार चलाने, स्केटिंग करने और शिकार खेलने से हो सकता है बजाय इसके कि किसान और लोहार का कष्टदायक काम किया जाय। मैं मिस्री रहस्यवाद के आदरणीय परामर्श को भी न भुलाऊँगा जिसमें कहा गया है कि "मनुष्य के दो जोड़ी आँखें होती हैं, और उसे चाहिए कि नीचे की आँखें बन्द रखी जायँ जबकि ऊपर के नेत्र देखते हों; और जब ऊपर के नेत्र बन्द हों तो नीचे वाले खोल लेने चाहिएँ।" फिर भी मैं कहूँगा कि भविष्य-द्रष्टा के लिए श्रम से दूर रहना शक्ति और सत्य को थोड़ा-बहुत हानि पहुँचाये बिना नहीं हो सकता। मुझे सन्देह नहीं कि हमारे साहित्य

भूलें और दुर्गुण उनकी अत्यधिक कोमलता, उनका स्त्रैण-भाव तथा विषाद साहित्यिक वर्ग की क्षीण एवं अस्वस्थ आदतों के कारण हो हैं। बेहतर है कि किताब इतनी अच्छी न हो जितना कि उसका लिखने वाला अच्छा और काबिल हो ताकि जो-कुछ उसने लिखा है उसके मुकाबले में वह खुद भद्दा नजर न आए।

मान लीजिए कि इस प्रकार के प्रिय और पवित्र लक्ष्यों के लिए थोड़ा-बहुत विश्राम आवश्यक है। मेरा विचार है कि यदि किसी मनुष्य का काव्य, कला एवं मननशील जीवन के प्रति इतना अनुराग हो कि अच्छी तरह खेती-बाड़ी करना उसके लिए असंगत हो जाय तो उस मनुष्य को जल्दी ही अपने बारे में फैसला करना चाहिए और विश्व के मुआवजों का ध्यान करके अपनी आदतों में कुछ तकलीफ झेलने और मेहनत करने का माद्दा लाकर अपने-आपको अपने आर्थिक कर्तव्यों से मुक्त कर लेना चाहिए। इतने दुर्लभ और महान् विशेषाधिकारों को पाकर उसे एक महान् ऋण चुकाने से नहीं झिझकना चाहिए। वह दीन, और अगर आवश्यकता हो, तो, अविवाहित ही रहे। उसे खड़े-खड़े ही भोजन करने की आदत डालनी चाहिए तथा स्वच्छ पानी और काली रोटी खाने में ही स्वाद आना चाहिए। वह गृह-संचालन, बड़े पैमाने पर अतिथि-सत्कार तथा कला-कृतियों को रखने के हैंमगे शौक दूसरों के लिए छोड़ सकता है। उसे यह महसूस करना चाहिए कि बुद्धि की प्रखरता भी एक अतिथि-सत्कार है तथा जो स्वयं कला-कृतियों निर्माण करता है उसे उन्हें इकट्ठा करने की क्या आवश्यकता है। उसे एक कमरे में रहना चाहिए और आत्मानुग्रह को स्थगित कर देना चाहिए तथा विलासिता की रुचि से बचे रहना चाहिए क्योंकि प्रखर बुद्धि वाले व्यक्तियों के लिए एक शाप है। प्रखर बुद्धिशाली मनुष्य का यह दुर्भाग्य है कि उसका एक घोड़ा आकाश में उड़ता है और दूसरा जमीन पर, जिससे रथ और सारथी दोनों की बरबादी होती है।

हर मनुष्य का कर्तव्य है कि वह अपनी प्रतिज्ञा का पालन करे और सामाजिक संस्थाओं से यह कहे कि वे भी उसके औचित्य को देखें। और

और देखो जिनसे तुम्हारी दुनिया बनाई जाती है। जैसे कि हम वातावरण, नदियों और जंगलों के होते हुए, बढ़ई अथवा इञ्जीनियरों के औजार, रासायनिक प्रयोगशाला और लुहार के साँचे की सहायता से भी एक नक्षत्र नहीं बना सकते हैं उसी प्रकार मूर्ख, बीमार और स्वार्थी स्त्री-पुरुषों से उस स्वर्गीय समाज का निर्माण नहीं कर सकते जिसकी कि तुम बातें करते हो। किन्तु आत्मवान व्यक्ति अपने स्वर्ग को सम्भव ही नहीं मानता बल्कि यह भी मानता है कि उसका अस्तित्व प्रारम्भ हो चुका है—उन मनुष्यों अथवा साधनों से नहीं जिनका व्यवहार राजनीतिज्ञ करते हैं अपितु उन व्यक्तियों से जो अपने सिद्धान्तों की शक्ति से अपने-आपको ऊँचा उठा चुके हैं और अपना रूपान्तर कर चुके हैं। सिद्धान्त से तो तात्कालिक लाभ की शक्ति को भी लाँघा जा सकता है।

संसार के इतिहास में हर महान् और महत्त्वपूर्ण क्षण किसी-न-किसी उत्साह की विजय का इङ्गित करता है। मुहम्मद के बाद अरबों की विजय, जिन्होंने कुछ ही वर्षों में छोटी और क्षुद्र शुरूआत से रोम से भी बड़ा साम्राज्य स्थापित कर लिया था, एक ज्वलन्त उदाहरण है। उन्होंने वह सब किया जो वे जानते भी न थे। विचार के घोड़े पर सवार नंगा दरार रोम की घुड़सवार सेना की एक टुकड़ी से अधिक शक्तिशाली सिद्ध हुआ। महिलाएँ पुरुषों की भाँति लड़ीं और उन्होंने रोमनों को पराजित किया। उनके पास बहुत कम साधन थे, बहुत थोड़ा भोजन था। वे नशेबाजी का विरोध करने वाले सैनिक थे। उन्हें खाने-पीने के लिए न ब्रांडी और न मांस की जरूरत थी। उन्होंने सिर्फ जौ खाकर एशिया, अफ्रीका और स्पेन विजय किया। खलीफा उमर की छड़ी देखकर लोग अधिक भयभीत होते थे बजाय दूसरे व्यक्ति के हाथ में तलवार देखकर। उसकी खुराक जौ की रोटी थी, उसकी चटनी नमक था और कभी-कभी तो संयम के कारण वह बिना नमक के ही रोटी खा लेता था। उसका पेय पानी था। उसका महल मिट्टी का बना था; और जब वह मदीना से यरुशलम जीतने गया तो एक लाल ऊँट पर सवार था

जिसकी लकड़ी की काठी पर एक पानी की बोतल और दो थैले लटके थे जिनमें से एक में जौ और दूसरे में मेवा भरा था।

लेकिन हमारी राजनीति और रहन-सहन के तरीकों में प्रेम की भावना द्वारा शीघ्र ही एक भव्य प्रभात आयगा जोकि अरबी धर्म से भी अधिक भव्य होगा। यही समस्त बुराइयों की एक दवा है, प्रकृति की अचूक औषधि। हम प्रेमी बन जायँ तो तुरन्त ही असम्भव सम्भव हो जायगा। इन हजारों वर्षों में हमारा युग और इतिहास स्नेह का नहीं, स्वार्थ का रहा है। हमारा अविश्वास बड़ा महँगा है। जो रुपया हम अदालतों और जेलों पर व्यय करते हैं वह बड़ी बुरी तरह खर्च होता है। अविश्वास से हम चोर, लुटेरे और आगजनी करने वालों को बनाते हैं और हमारी अदालतें और जेल उन्हें वही बना रहने देते हैं। समस्त ईसाई-साम्राज्य में प्रेम भावना को स्वीकार कर लेने से कुछ समय में ही अपराधी तथा बहिष्कृत लोग आँखों में आँसू भरे अपनी योग्यतानुसार हमारी सेवा करने की भक्ति-भावना से प्रेरित हममें आ मिलेंगे। मजदूरी करने वाले स्त्री-पुरुषों के विशाल समाज की ओर देखिए। हम उनसे सेवा कराना चाहते हैं और उनसे पृथक् रहते हैं, जब सड़कों पर उनसे मिलते हैं तो सलाम-दुआ तक नहीं करते। हम उनके गुणों की कद्र नहीं करते, न उनकी खुशी में खुशी मानते हैं, न उनकी आशाओं का पोषण करते हैं और न विधान-सभा में उनके हित के कार्यों पर मतदान करते हैं। इस प्रकार हम संसार के आधार का सहारा पाकर एक स्वार्थी बादशाह या नवाब का पार्ट अदा करते हैं। देखिए, इस वृक्ष पर सदैव एक फल रहता है। हर घर में पति-पत्नी की शान्ति, द्वेष, कुटिलता, उदासीनता और नौकर-चाकरों से वैर के कारण विषाक्त होती है। दो गृहणियाँ मिलें तो देखिए कितनी जल्दी उनके वार्तालाप का विषय नौकरों से मिलने वाला कष्ट होता है। मजदूरों के समूह में धनिक अपने-आपको उनका मित्र नहीं समझता और इसलिए चुनाव के समय वह उन्हें अपने विरोध में लाइन लगाये खड़ा पता है। हम शिकायत करते हैं कि जनता की राजनीति का नियन्त्रण चालबाज लोगों

न्याय तथा लोक-हित के प्रत्यक्ष विरोध में शासन किया जाता है। लेकिन जनता तो अज्ञानी तथा क्षुद्र व्यक्तियों को अपना प्रतिनिधि और शासक बनाना नहीं चाहती। वह उन्हीं को अपना वोट देते हैं क्योंकि उनसे स्नेह और उदारता की आवाज़ में वोट देने को कहा जाता है। लेकिन वह उनको अधिक दिनों तक वोट न देगी। वह अनिवार्य रूप से बुद्धिमानी और ईमानदारी पसन्द करती है। किसी एक कहावत के अनुसार वह अधिक समय तक

।वित्र पदियों के सिर
हमारा स्नेह उमड़ना
। हो जायगी। सूर्य
। की तरह अस्थिरता
और सब स्वरों को
लिए ईमानदारी से
के कानून को इस
ले और गरीब का
हमें यह समझ
जिसमें कोई भी
व धनवान् बना
करना है। मुझे
र्तव्य करने में ही
स्नेह एक नया
कर रहते चले
कितनी जल्दी
। का नपुंसकत्व
ती हैं। स्नेह
ई स्वयं अपना
वह मात कर
आपने कभी

जिसकी लकड़ी की काठी पर एक सा
जिनमें से एक में तो और दूसरे में मे
लेकिन हमारी राजनीति और व:
द्वारा शोषित हो एक समान समान
मान होता। यही समस्त बुराइयों
औरत। हम ऐसी बन जायें तो
इन हजारों वर्षों में हमारा युग और
है। हमारा अविश्वास बड़ा महँगा
पर व्यय करते हैं वह सदा बुरी
चोर, लुटेरे और आगजनी करने
और जेल उन्हें नहीं बना रहने
भावना को स्वीकार कर लेने से ए
लोग आँखों में आँसू भरे अपनी
भावना से प्रेरित हममें आ मिलेंगे
समाज की ओर देखिए। हम उ
रहते हैं, जब सड़कों पर उनसे मि
हम उनके गुणों की कद्र नहीं
हैं, न उनकी आशाओं का पो
हित के कार्यों पर मतदान करते
सहारा पाकर एक स्वार्थी बादशाह
इस वृक्ष पर सदैव एक फल र
द्वेष, कुटिलता, उदासीनता और
है। दो गृहणियाँ मिलें तो देखि
नौकरों से मिलने वाला कष्ट हो
आपको उनका मित्र नहीं समझ
अपने विरोध में लाइन लगाये
जनता की राजनीति का नियन्त्रण

उससे कहीं आगे देखती है और समग्र जीवन के लिए वर्तमान घड़ी को,
...चि, प्रतिभा और विशिष्ट परिमाणों को चरित्र के लिए स्थगित कर सकती
। जिस प्रकार व्यापारी प्रसन्नतापूर्वक अपनी आय में से रुपया लेकर पूँजी
देता है उसी प्रकार महान पुरुष भी स्वेच्छापूर्वक विशेष शक्ति और
को छोड़ देता है ताकि वह अपने जीवन में उत्थान प्राप्त कर सके।
...त्मिक बुद्धि का प्रादुर्भाव होते ही उसका महान् बलिदानों
... होता है, अपनी प्रवृत्तियों को वह त्याग देता है और वर्त-
प्राप्त करने में उनके अपूर्व साधनों का प्रयोग भी नहीं करता।
...त और प्रसिद्धि से भी लाभ नहीं उठाता और ईश्वरीय
... प्यास के लिए सब चीजों को भी छोड़ देता है। इस
... पवित्र, प्रसिद्ध और अधिक बड़ी शक्ति पुरस्कृत
... फसल का बीजों के रूप में परिवर्तन है। जिस
सबसे अच्छी बालों को भूमि में डाल देता है,
... साधन और शक्ति हमारे पास हैं उन्हें
... कोई कसर न उठा रखेंगे और तब हम
बीजारोपण करेंगे।

देखा है कि किसी चट्टान की समाप्ति पर प्रायः एक नन्हा-सा कुकुरमुत्ते का पौधा—बिना किसी इच्छा से खुद ही सूखी भूमि फोड़ और अपने सिर पर उसी मिट्टी से ही अपना सिर निकाल लेता है। यह कोमलता की शक्ति का प्रतीक है। मानव-समाज में इस सिद्धान्त के सत्य का प्रयोग अनगिनत बार भुला दिया गया है। इतिहास में एक-दो ताकतवर उदाहरणों के रूप में इसका प्रयोग हुआ और परिणाम बड़ा मंगल रहा है। ये महान् प्रसिद्ध उदाहरण हमारा ईसाई-धर्म आज भी कम-से-कम मानव-जाति के एक प्रेमी का नाम जिन्दा रखे हुए है। किन्तु एक दिन सब व्यक्ति प्रेमी हो जायेंगे और प्रत्येक स्थिति विश्व-व्यापी समृद्धि में घुल जायगी।

क्या आप मुबारक मानव के इस चित्र में थोड़ी-सी और तूलिका चलाने की मुझे आज्ञा देंगे? आध्यात्मिक और वास्तविक विश्व के बीच मध्यस्थ व्यक्ति में भविष्यदर्शी बुद्धि होनी चाहिए। एक अरबी कवि ने अपने आदर्श व्यक्ति का वर्णन इन शब्दों में किया है :

> वह सूर्य-रश्मि था
> शीतकाल में
> और मध्य ग्रीष्म में
> शीतलता और छाया।

जो अपनी और दूसरों की सहायता करता है उसे गुणों की बाधित और अनियमित उमंगों का शिकार नहीं होना चाहिए, किन्तु एक संयमी, उद्यमशील और अमल मनुष्य होना चाहिए जैसे कि संसार को वरदान-स्वरूप कभी यहाँ-वहाँ देखने को मिले हैं—ऐसे व्यक्ति, जो अपने-आप में ऐसा गुण रखें जो केवल मिल के चक्र को ही न घुमा सकें बल्कि सभी चक्रों को समान रूप से क्रियाशील कर सकें और विनाशकारी चक्रों को रोक भी सकें। यह अच्छा है कि आनन्द दिन-भर शक्ति के रूप में व्याप्त, बजाय इसके कि वह केन्द्रित उमंगों में व्याप्त हो जो बहुत खतरनाक होगा और जिसकी प्रतिक्रियाएँ भी अच्छी न होंगी। उत्कृष्ट दूरदर्शिता, जो मनुष्य का सबसे बड़ा गुण है, सुदूर भविष्य में विश्वास रखती है, आज जो दिखाई दे रहा है

उससे कहीं आगे देखती है और समग्र जीवन के लिए वर्तमान घड़ी को, रुचि, प्रतिमा और विशिष्ट परिमाणों को चरित्र के लिए स्थगित कर सकती है। जिस प्रकार व्यापारी प्रसन्नतापूर्वक अपनी आय में से रुपया लेकर पूँजी में लगा देता है उसी प्रकार महान पुरुष भी स्वेच्छापूर्वक विशेष शक्ति और योग्यता को छोड़ देता है ताकि वह अपने जीवन में उत्थान प्राप्त कर सके। मनुष्य में आध्यात्मिक बुद्धि का प्रादुर्भाव होते ही उसका महान् बलिदानों की ओर झुकाव होता है, अपनी प्रवृत्तियों को वह त्याग देता है और वर्तमान सफलता प्राप्त करने में उनके अपूर्व साधनों का प्रयोग भी नहीं करता। वह उनकी शक्ति और प्रसिद्धि से भी लाभ नहीं उठाता और ईश्वरीय प्रेरणाओं के प्रति अतृप्त प्यास के लिए सब चीजों को भी छोड़ देता है। इस बलिदान को एक अधिक पवित्र, प्रसिद्ध और अधिक बड़ी शक्ति पुरस्कृत कर देती है। यह हमारी फसल का बीजों के रूप में परिवर्तन है। जिस प्रकार किसान अपने अनाज की सबसे अच्छी बालों को भूमि में डाल देता है, समय आयगा जब हम भी जो कुछ साधन और शक्ति हमारे पास हैं उन्हें अधिक उत्सुकतापूर्वक बदलने में कोई कसर न उठा रखेंगे और तब हम प्रसन्नतापूर्वक सूर्य और चन्द्र का बीजारोपण करेंगे।

: ४ :

आचार-विचार

ऐसा कहा जाता है कि आधी दुनिया बाकी आधी दुनिया के रहन-सहन के विषय में कुछ नहीं जानती। अन्वेषकों ने पता लगाया है कि फिजी द्वीप-वासी मानुष-भोजी होते हैं और ऐसा कहा जाता है कि वे अपनी औरतों एवं बच्चों तक को खा जाते हैं। गोनूं (प्राचीन थीबीज प्रदेश) के निवासियों की गृहस्थी एक प्रकार से वैरागियों की गृहस्थी होती है। उनके परिवार में दो-तीन मिट्टी के बरतन, आटा पीसने की पत्थर की छोटी चक्की और बिछाने के लिए एक चटाई-मात्र ही होती है। रहने का घर एक प्रकार से मीनार ही होता है जिसके लिए न तो कोई टैक्स देना पड़ता है तथा न कोई किराया ही। उसमें एक छत होती है जिसमें से पानी अन्दर नहीं टपकता और दरवाजों की जरूरत ही नहीं होती, क्योंकि चोरी हो जाने का कोई भय नहीं रहता। ऐसे सैकड़ों घर वहाँ रहते हैं और अपनी इच्छानुसार लोग घर बदला करते हैं। बेलजोनी कहता है कि, "स्वयं द्वारा अपरिचित प्राचीन जाति के चिथड़ों, मुर्दों एवं कब्रों में रहने वाले व्यक्तियों से सुख की बात करना कुछ अजनबी-सा प्रतीत होता है।" बोगूं रेगिस्तानों में रहने वाले लोग अभी तक कन्दराओं में रहते हैं। उनकी भाषा, उनके पड़ौसी चमगादड़ों की चिल्लाहट-जैसी होती है। उनके नाम नहीं होते। ऊँचाई, मोटाई या किसी घटना के आधार से ही व्यक्ति को पुकारा जाता है; लेकिन इन भयावह प्रदेशों में प्रचुरता से प्राप्त होने वाले पदार्थ, जैसे नमक,

खजूर, हाथीदाँत और सोना, ऐसे देशों में जाते हैं जहाँ के निवासी इन असभ्य नरभक्षी और मनुष्यों की चोरी करने वाले लोगों से अत्यन्त सभ्य होते हैं। ये सभ्य लोग रेशम और ऊन पहनते हैं, कपड़ों के कई प्रकार के वस्त्र बनाते हैं। वे धातुओं का व्यवहार करते हैं, शिल्पों में अपनी अनुभूतियों को अंकित करते हैं। वे अपने समाज की सुचारु व्यवस्था के लिए कानून बनाते हैं और अपनी अनेकविध अभिव्यक्तियों द्वारा सारे संसार के सभ्य मनुष्यों का सम्पर्क प्राप्त कर लेते हैं। इस प्रकार प्रान्त, राज्य और देश की सीमाओं को तोड़कर सभ्य समाज के प्रबुद्ध व्यक्ति एक विश्व-विस्तृत संगठन बना लेते हैं।

आधुनिक इतिहास में भद्र व्यक्ति के सृजन एवं विकास से बड़ी और कौन-सी घटना है? शौर्य यहाँ है, विश्वास-भक्ति यहाँ है—अंग्रेजी साहित्य के आधे नाटक और सभी उपन्यास—सर फिलिप सिड्ने से लेकर सर वाल्टर तक—इसी को चित्रित करते हैं, 'भद्र पुरुष' या 'सज्जन व्यक्ति' ईसाई शब्द की भाँति एक निराली विशेषता के शब्द हैं। आधुनिक एवं पिछले कई शतकों में इन शब्दों को अनेक प्रकार की मान्यताएँ मिलती रही हैं। इसका इतिहास स्पष्ट करता है कि कुछ वैयक्तिक गुणों और विशेषताओं के कारण ही 'सज्जन' शब्द निरन्तर सामाजिक महत्त्व प्राप्त करता गया है। अचानक उत्पन्न चीज़ यह नहीं है, किन्तु मनुष्य-समाज में सर्वत्र प्राप्त मानवीय चरित्र और सुषमाओं की क्रिया-प्रक्रियाओं के सामूहिक विकास को हम 'सज्जनता' की संज्ञा दे सकते हैं। सामाजिक से अधिक यह वैयक्तिक मूल्यांकन है। बुद्धि से नहीं, बल्कि भावना से इसका सम्बन्ध है और जिस सूक्ष्म मिश्रण से यह बनी है उसमें सौन्दर्य, वैभव, शक्ति, चरित्र आदि सबका समावेश है।

मनुष्य के सामाजिक विकास और रहन सहन की श्रेष्ठता को व्यक्त करने के लिए अनेक शब्द हैं और उनका सूक्ष्म विश्लेषण करना अवश्य कठिन हो जाता है। यही कारण है कि कुछ शब्दों में परस्पर भ्रांति भी हो जाया करती है। अतः इनके अन्तर को स्पष्टतया देख लेना अत्यन्त आवश्यक है। प्रायः 'कैलचर' को 'सभ्यता' या 'सौजन्य' का पर्याय समझ लिया जाता है।

किन्तु दोनों में बहुत बड़ा फर्क है। 'फैशन' का अभिप्राय बड़ा सीमित और उथला होता है इसके विपरीत 'सज्जनता' का अर्थ काफी गम्भीर और व्यापक है। विनम्रता, शौर्य, फैशन एवं ऐसे ही अन्य नामों में भेद-प्रभेद की कड़ी यही है कि परिणाम में काफी समान होते हुए भी बीज-रूप में ये विभिन्न होते हैं। असली महत्त्व सौन्दर्य का है, मूल्य अथवा मान्यता का नहीं।

संक्षेप में, भद्रपुरुष या सज्जन व्यक्ति सत्य का अनुयायी, अपने कर्मों का स्वामी और सौजन्य की अभिव्यक्ति का प्रतिष्ठाता होता है। वह किसी व्यक्ति, सम्मति या अधिकार पर निर्भर नहीं करता। यही उसकी बुनियादी भावभूमि होती है जिसमें अन्य सद्‌गुणों के बीज बोये जाते हैं। फैशन में ये बातें नहीं होतीं। शिष्टाचार के भवन की दीवारें भी काफी संकीर्ण होती हैं। 'भद्रता' वहाँ भी निवास नहीं कर सकती। एकान्त शक्ति एवं शौर्य से उसका केवल आंशिक सम्बन्ध ही है। शक्तिशाली एवं शूरवीर में सज्जनता हो सकती है और नहीं भी हो सकती।

समाज में शक्ति की तो आवश्यकता है ही—शक्ति के अभाव में समाज को नेतृत्व नहीं मिल सकता। राजनीति और व्यापार में प्रतियोगियों एवं लुटेरों को ही अधिक सफलता मिल सकती है—क्लर्कों और बातें करने वालों को नहीं। यह भी ईश्वरेच्छा है कि सभी प्रकार के 'सज्जन' उसकी सृष्टि में अपना अस्तित्व चरितार्थ करते हैं। किन्तु पूरे विश्लेषण के बाद देखने से असलियत सामने स्पष्ट हो जाती है—मौलिक शक्ति का उद्‌गम कभी छिपा नहीं रह सकता। वास्तविक सौजन्य से ओत-प्रोत व्यक्ति सबसे अलग एवं निराला ही होता है। अपने ही सामर्थ्य में आत्म-स्थित एवं अपने ही मौलिक तरीकों पर चलने वाला व्यक्ति हजारों में पहचाना जा सकता है। एक अच्छे सामन्त या जमींदार के भीतर पशु का निवास जरूर होना चाहिए; क्योंकि पशुत्व के साथ मनुष्यत्व की तुलना के लिए उसकी अनिवार्यता है। शासक वर्ग में तो पशुत्व का अंश थोड़ा और भी ज्यादा होना चाहिए। लेकिन उसमें शक्ति की प्रचेतना भी होनी चाहिए जो विद्वानों एवं बुद्धिमानों

में अवसर नहीं होती। शासक-वर्ग को तो सीज़र के ढंग का व्यक्ति होना चाहिए। शास्त्रीय विद्वानों को यह बाना नहीं पहनाया जाता।

लेकिन मेरी भावना का सज्जन व्यक्ति सर्वत्र अपनी कर्म-शक्ति का प्रदर्शन कर सकता है। वह जहाँ जाता है, कानून बनाता है। चर्चों में संतों की प्रार्थनाओं को फीकी कर देता है, रण-क्षेत्रों में सेनापतियों के शौर्य को अपनी उपस्थिति से नगण्य कर देता है और सामाजिक सम्मेलन में उसकी विनम्रता अपराजित साबित होती है। अपराधियों एवं शास्त्रीय विद्वानों—दोनों के लिए वह अच्छा साथी है। अतः उससे सुरक्षित रहना आपके लिए बेकार है। सभी मनुष्यों के अंतराल में उसकी सूक्ष्म पहुँच रहती है। एशिया और यूरोप के अनेक सुप्रसिद्ध सज्जन व्यक्ति सशक्त वर्ग के हुए हैं—जैसे सलाडीन सेपोर, जूलियस सीज़र और पेरिक्लीज़।

साधारणतया सौजन्य या आचरण के साथ धन-सम्पत्ति का अपरिहार्य सम्बन्ध जोड़ा जाता है। क्योंकि आन्तरिक वैभव को बाह्य वैभव के साथ सम्बद्ध देखने की लोक-लालसा काफी लम्बी परम्परा से चली आई है। किन्तु वास्तव में धन-सम्पत्ति या अन्य प्रकार का बाह्य वैभव यहाँ आवश्यक नहीं है। इसके प्रतिकूल एक ऐसी अनुरागात्मक व्यापकता की ज़रूरत है जो वर्गवाद, जातिवाद एवं श्रेणीगत स्वार्थों तथा रुचियों का अतिक्रमण करके सारे मानव-समाज की अनुभूतियों का विषय बन जाय। यदि एक उच्चकुलीन व्यक्ति केवल फैशनेबुल समाज में ही प्रतिष्ठा पाता हो और गाड़ी वालों में उसके प्रति कोई दिलचस्पी नहीं हो तो वह फैशन के वर्ग में भी नेतृत्व नहीं कर सकता। यदि आम जनता का कोई व्यक्ति आचरण के व्यक्ति के साथ समान सरलता के साथ व्यवहार नहीं कायम रख सकता तो इसमें उसका दोष ही क्या हो सकता है? डायोजेनीज़, सोक्रेटीज़ और एपामिनाण्डास इसी प्रकार के व्यक्ति थे। इनका सौजन्य सर्वोच्च कोटि का था और राजसी वैभव में ये पैदा हुए थे। किन्तु उन्होंने दैन्य को ही अपना आभूषण स्वीकार किया था—यद्यपि उन्हें राजसी जीवन का सारा अभीष्ट ऐश्वर्य प्राप्त हो सकता था। ये पुरातन नाम मैं दे रहा हूँ; किन्तु जिन व्यक्तियों के विषय में मैंने

नहीं लिखा है वे तो मेरे समकालीन ही हैं। प्रत्येक युग को ऐसे निर्भीक शूरवीर नहीं मिलते। प्रकृति ऐसी दानी नहीं है। किन्तु सामूहिक रूप से मनुष्यों में उनके गुण बिखरे मिलते हैं। इस देश की राजनीति, और प्रत्येक नगर का व्यापार ऐसे ही सुदृढ़ और गैर जिम्मेदार व्यक्तियों द्वारा नियंत्रित होता है जिनमें नेतृत्व ग्रहण करने की उर्वर बुद्धि है और वह व्यापक सहानुभूति है जिसके स्पर्श से लोक-समाज के साथ उनका मैत्री-सम्बन्ध प्रगाढ़ होता है और जिससे उनके कर्मों को लोकप्रियता मिलती है।

इस वर्ग के व्यक्तियों के आचार-विचारों को जनता सुरुचि एवं बड़ी श्रद्धा के साथ देखती है और अपने जीवन में अपनाती है। उनकी सूक्तियाँ और सम्मतियाँ सर्वत्र ग्रहण की जाती हैं और वे बड़ी आस्था के साथ दोहराई जाती हैं। अविकसित व्यक्ति को इन व्यक्तियों के प्रशंसनीय आचार-विचार भी भयावह प्रतीत होते हैं, वे उनका विरोध भी करते हैं। किन्तु सत्य के स्पर्श से उनका विरोध स्वयमेव ही आघातहीन होता जाता है और धीरे-धीरे उसको स्वयं ही ये आचरण सरल एवं सम्मानपूर्ण दिखाई देने लगते हैं। आचार-विचार का उद्देश्य ही यह है कि वे जीवन को सुविधाएँ दें—व्यक्ति की बाधाओं का परिहार करें और उसे सब तरफ से निर्मल बना कर शक्ति के पथ पर अग्रसर कर दें।

शक्ति-वर्ग एवं सभ्य-वर्ग में गहरा सम्बन्ध है। सभ्य-वर्ग को शक्ति-वर्ग सदैव अपनी आस्था प्रदान करता है। यहाँ फैशन की पूजा अपना इतिहास स्पष्ट करती है। कभी-कभी शक्ति-वर्ग के लोग फैशन-परस्ती का बड़ा भ्रामक अनुकरण करते हैं। क्रान्ति में कला एवं सामन्तवाद का संहारक नेपोलियन फैशन अर्थात् प्रचलित परम्परा के मोह के कारण ही फाबर्ग सैंट जर्मेन से सदैव प्रेम करता रहा। इतिहास में ही नहीं हमारे दैनिक जीवन में भी ऐसे अनेक उदाहरण हमें प्रायः मिलते हैं।

मनुष्य से मनुष्य की सबसे प्रथम आवश्यकता सत्य एवं आचरण की ईमानदारी होती है। हमारे सभी मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों में किसी-न-किसी रूप में वह व्यक्त होती रहती है। समाज में हम एक-दूसरे के साथ परिचय प्राप्त

करते हैं। एक-दूसरे की आँखों में आँख मिलाकर देखते हैं। यहाँ आचरण के व्यक्ति की परीक्षा होती है। सत्याचरण का व्यक्ति आपकी आँखों में निर्भीकता देखकर आपको यह विश्वास दिला देता है कि उसने आपके परिचय का पूरा स्वागत किया है। यह विश्वास, यह सत्य आश्वासन हजार आतिथ्य से भी बढ़कर है। हृदय की शुद्धता से और स्नेह की स्निग्धता से स्वीकार किया गया परिचय एवं मैत्री किसी भी व्यवहार एवं प्रतिदान से कहीं अधिक मूल्यवान है। वास्तव में, कुलीनता का ही यह स्वाभाविक परिणाम है।

इस कुलीनता और आत्मविश्वास की पूर्ति बड़प्पन के प्रति सम्मान या श्रद्धा से होनी चाहिए—मैं तो इसे अत्यन्त आवश्यक मानता हूँ। अत्यन्त घुली-मिली मैत्री के बजाय मैं व्यक्ति के एकांत आत्म-सम्मान को विशेष महत्त्व देता हूँ। मैं यह चाहता हूँ कि प्रत्येक व्यक्ति एक राजा की भाँति अपने को समझे—अर्थात् अपने को काफी अंशों में अपने समाज के अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा अलग हस्ती वाला व्यक्ति माने। मैं मनुष्य की स्वाधीनता को सर्वाधिक महत्त्व देना चाहता हूँ। अधिक परिचय श्रेयस्कर नहीं होता। विदेशों के प्रवासियों की हैसियत से ही हम प्रतिदिन मिलें, साथ ही सारा दिन गुजारें और प्रवासियों की भाँति ही रात को अपने-अपने देशों को वापस लौट जायँ। मैं व्यक्ति को ऐसे द्वीप के निवासी के रूप में देखना चाहता हूँ जो अजेय हो। हम देवताओं की भाँति परस्पर परिचित होते हुए भी अपरिचित रहें जैसे कि ओलिम्पस के शिखरों के देवता होते हैं। इस 'धर्म' पर प्रेम की कोई गहराई अपना आधिपत्य न जमाने पाए। प्रेमियों को अपने अजनबीपन को सुरक्षित रखना होगा। असीम क्षमा और समझौता कभी श्रेयस्कर नहीं हो सकता। धैर्य और अशान्ति पर नियन्त्रण वास्तव में सद्गुण हैं। आचरण की गहराई इनसे ही मापी जा सकती है। जल्दबाजी तो गुलामों के लिए छोड़ देनी चाहिए।

विनम्रता के मूल में बौद्धिक मान्यता भी समाविष्ट रहती है। मनुष्यों के मार्गदर्शकों के भीतर बुद्धि और भावना का बड़ा मधुर समन्वय रहता है। आचार-विचार के दोष का अभिप्राय है अमूलात्मक शक्ति की निर्बलता।

स्वतन्त्र चेतना और सहृदयता ही कुलीनता के लिए आवश्यक नहीं होते। हृदय एवं बुद्धि के सौन्दर्य को भी पूरा सम्मान मिलना चाहिए। सौन्दर्य के प्रेम से मेरा प्रयोजन है—अनुपात से प्रेम। अनुपात की आवश्यकता सर्वत्र रहती है। ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाकर या अतिशयोक्तिपूर्ण बातें करने वाला व्यक्ति सारे सम्मेलन को प्रतिकूल बना देता है। यदि आप चाहें कि लोग आपसे प्रेम करें या आपमें श्रद्धा रखें तो अनुपात का मापदण्ड अपनाइए। असाधारण प्रतिभा या अपरिमित उपयोगिता के पात्र बनकर ही आप अनुपात की कमी को छिपा सकते हैं। अन्यथा आपको समाज में अपेक्षित समादर या स्नेह नहीं मिल सकता। सभ्यता या सौजन्य या कुलीनता चरित्र की विकृतियों से घृणा करती है और झगड़ालू, अहंकारी, एकांतवादी एवं म्लानमुख व्यक्तियों को भी वह नहीं चाहती।

अतः वैयक्तिक क्षमता और सुरुचिपूर्ण अनुभूति के साथ समाज को एक और तत्त्व की जरूरत रहती है जिसे हम 'सहृदयता' कह सकते हैं। छोटी-से-छोटी उपकार-भावना के साथ यह सहृदयता व्यापक औदार्य एवं प्रेम की सीमाओं का स्पर्श करने लगती है। सूक्ष्म दृष्टि भी आवश्यक है, किन्तु बुद्धि का मार्ग सदैव स्वार्थपूर्ण एवं बंजर होता है। सामाजिक सफलता का रहस्य सहानुभूति और हार्दिकता ही है। समाज के प्रिय या समाज में अत्यन्त लोकप्रिय व्यक्ति मूलतः भावना के ही व्यक्ति होते हैं, बुद्धि के नहीं। उनके भीतर दूसरों को खटकने वाला अहंकार नहीं होता। इसके प्रतिकूल वे अपने समाज या सम्मेलन के भाव-क्षेत्र पर अपनी आत्मीयता के कारण छा जाते हैं। किसी भी सभा-सोसाइटी या पिकनिक-पार्टी में वे अपनी सहृदयता का सम्मोहन बिखेर देते हैं। इंगलैंड के मि० फॉक्स ऐसे ही आचरण के व्यक्ति थे। मनुष्यों के प्रति उनका प्रेम अगाध था। स्वातन्त्र्य-प्रेमी, और हिन्दुओं से लेकर अफ्रीकी हब्शियों तक से समान-रूप से आत्मीयता रखने वाले मि० फॉक्स वैयक्तिक रूप से बड़े लोकप्रिय थें। जब वे १८०५ में पेरिस आये तो नेपोलियन ने कहा था, "तूलेरीज (फ्रान्स का सभ्यता-प्रधान नगर) की सभा में मि० फॉक्स का स्थान सदैव सर्वोच्च रहेगा।" किन्तु फिर हमको यह स्पष्ट कर

देता है कि सौजन्य या आचरण की सभ्यता का सम्बन्ध मनुष्य के आत्मबल से है। सम्भ्रांत या वैभवशाली परिवार या वंशावलि से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। अशिक्षित एवं निर्धन व्यक्तियों में भी आचरण की सभ्यता के असाधारण उदाहरण मिलते हैं।

आचार-विचार के सौन्दर्य के अधिकारी व्यक्ति, वास्तव में, सौजन्य या सभ्यता के गिरजों के महन्त हैं। सर फिलिप सिडने और वाशिंगटन ऐसे ही नर पुङ्गवों में से थे। ऐसे महापुरुष मन, वचन एवं कर्म से आचरण के सौंदर्य की उपासना करते हैं। आजकल के तथाकथित अभिजात-कुल में नहीं बल्कि प्रकृति के अभिजात कुल में ही ऐसे व्यक्ति पैदा होते हैं और विकास पाते हैं। समाज-विज्ञान ऐसे व्यक्तियों का निरन्तर अवतरण और उनकी सार्वभौमिकता स्वीकार करता है। एक कवि ने इस अवतरण का क्रम बड़े भाव-पूर्ण ढंग से व्यक्त किया है :

कोलाहल एवं सघन अंधकार से अधिक जैसे
सुन्दर है आकाश और यह धरित्री;
और इस भू एवं गगन के भी पार—
सौन्दर्य और रूप का कैसा अपरिमित है विस्तार !
हमारे पदचिह्नों पर भी इसी प्रकार चलती पूर्णता नित नई
शक्ति ऐसी जो सौन्दर्य में ही हो सशक्त होती पैदा हमसे ही,
और अन्धकार से जैसे जाते हम ज्योति की ओर—
पग-पग पर पराजित करती है यह शक्ति हमें
—क्योंकि है यह शाश्वत नियम कि—
नेता सौन्दर्य का शक्ति का भी नेता है।

प्रकृति की विशाल सृष्टि के सामने मनुष्य कितना क्षुद्र है। किन्तु तो भी वह प्रकृति पर शासन करने लगता है। उसके चेहरे से जिस आत्म-बल की किरणें निकलती हैं उनकी प्रगति एवं प्रभाव के सामने प्रकृति की सारी विराटता समाप्त हो जाती है—विश्व की सारी सार्वभौमिकता उसके आचरण के वैभव के सामने फीकी पड़ जाती है। मैंने एक ऐसा व्यक्ति देखा है जो

उसके आचरण में अत्यन्त सरल प्रतीत होता था किन्तु किसी अन्य समाज में उगने में आवश्यक नहीं होते थे। अतः उसके भीतर ही अंकुरित बीज की भाँति इन अनुशासित आचार-विचारों का विकास हुआ था। उसके समाज में थोड़ी ही अवधि एवं अद्भुत सभी फैशन एवं प्रथाएँ उलट-पलट होकर बिखर जाती थीं। हमारी हस्तियों की नज़रों के सामने निर्भीक एवं अपने स्वाभाविक आचरण में निर्द्वन्द्व यह व्यक्ति किसी भी समाज में एक सम्राट् की भाँति अपना शासन कायम रखता था।

नारी अपने आचरण की सहज-बुद्धि से पुरुष की त्रुटियों एवं कम-जोरियों को बड़ी आसानी से पहचान लेती है। पुरुष के बाह्य एवं अन्तर में जो वैभिन्न्य होता है उसे नारी तत्काल ताड़ लेती है। अमरीका का यह सौभाग्य है कि वहाँ नारी-सत्ता की सार्वभौमिकता है। नारियों के अधिकारों के प्रति मैं अत्यन्त श्रद्धालु हूँ किन्तु मैं उसके प्रेरक और मधुर स्वभाव से इतना विरंयक्त हो गया हूँ कि मेरी धारणा है कि उसके उत्कर्ष का रास्ता सिर्फ वही दिखला सकती है। उसकी भावनाओं की अद्भुत उदारता उसे कभी-कभी ऐसे वीरत्व के स्तर पर प्रतिष्ठित कर देती है कि मिनर्वा, जुनो और पोलिम-निया का बरबस स्मरण हो आता है और जिस दृढ़ संकल्प के साथ वह अपने प्रगति-पथ पर अग्रसर होती है उससे अत्यन्त साधारण बुद्धि के व्यक्ति को भी यह विश्वास हो जाता है कि जिस रास्ते पर वे चलते हैं उससे परे एक और पथ भी है। नारी का प्रभाव भी हम पर कम नहीं है। पुरुष की सनातन प्रेरक शक्ति रही है। एक ओर अपनी महानता से वह जहाँ हमें जीवन के दिव्य गौरव से अनुप्राणित कर देती है वहाँ अपनी आत्मीयता से वह हमारे गाम्भीर्य एवं उजड्डपन को भी सजीव, सरल तरंगों में पिघला देती है। कलाओं की सृष्टि ऐसे ही तो हुई है। हाफिज ने लैला का जो अति-शयोक्तिपूर्ण वर्णन किया है वह वास्तव में शब्दों का आडम्बर या कवि-स्वप्न नहीं है, बल्कि जीवन के आन्तरिक सत्य की सच्ची तसवीर है। हाफिज लैला के विषय में कहता है, "उसमें साक्षात तात्विक शक्ति थी; अपनी जीवन-शक्ति की असीमता से उसने मुझे आश्चर्यान्वित कर दिया था। प्रतिदिन

जब मैं उसे देखता था तो मुझे ऐसा प्रतीत होता था मानो आनन्द एवं लावण्य की किरणें उससे निकलकर सारी सृष्टि को सजीव बना रही है।"

लेकिन आज तो सभ्यता या सौजन्य स्वार्थ-सिद्धि की कूटनीति-मात्र रह गया है। सौजन्य के कपड़े पहनकर मिथ्या या पाखण्ड के पुतले खड़े हो जाते हैं। असली सभ्यता तो कैद में बन्द है। पैसे वालों के पास ही सभ्यता पैदा होने लगी है, उनके आचरण ही सभ्यता के अंग माने जा रहे हैं। किन्तु सम्पत्ति की यह मान्यता कितनी गलत है? हृदय के वैभव के सामने भौतिक सम्पत्ति तो क्षुद्र भिखारिन है। शीराज के बादशाह की अपरिमित सम्पत्ति उसके दरबान 'उसमान' की उदारता के सामने कोई मूल्य नहीं रखती। उस मान की सदाशयता का कोष सबके लिए खुला हुआ था और यद्यपि उसके भाषण में कुरान की सम्पूर्ण परम्पराओं का निर्वाह नहीं होता था तथा सभी मौलवियों ने उसे 'काफिर' करार दे रखा था फिर भी एक भी दलित एवं दुखी व्यक्ति उसके पास सहानुभूति तथा आत्मबल प्राप्त करने आया करते थे। क्या यह वैभव किसी लौकिक वैभव से कम है? सच्ची सम्पत्ति तो वास्तव में यही है।

ये सब बातें मेरी अनधिकार चेष्टाएँ हो सकती हैं। जिन्हें मैं समझता नहीं उनके विषय में बातें कर जाता हूँ। समाज में यों तो कोई भी चीज या नियम पूर्णरूपेण बुरा या भला नहीं है—आवश्यक के अलावा उसमें अनावश्यक भी है। यहाँ सिलेनस के वे वाक्य याद आते हैं जो यूनानी पुराणों में काफी विस्तार के साथ भाष्य-सहित लिखे गए हैं: सिलेनस ने कहा कि मैंने एक दिन जोव (बृहस्पति) को यह कहते हुए सुना है कि वह पृथ्वी को नष्ट कर देगा···जहाँ प्रतिदिन पतितों की संख्या बढ़ती जा रही है। मिनर्वा ने कहा—परिस्थिति ऐसी नहीं है। पृथ्वी के सभी प्राणी परिस्थितियों के पुतले हैं—उन्हें बनाया या बिगाड़ा जा सकता है। यदि आप उन्हें बुरा कहेंगे तो बुरे होंगे, अच्छा कहेंगे तो अच्छे हो जायेंगे। आप जैसा समझेंगे वैसी प्रतीति आपको होने लगेगी। मनुष्य बड़ी रहस्यमय पहेली है—इतनी रहस्यमय कि देवता भी नहीं कह सकते कि वह मूलतः बुरा है या भला।

: ५ :

इतिहास

सभी व्यक्तियों का अन्तःकरण एकरूप होता है। एक ही व्यक्ति अपने निज का और समस्त व्यष्टि का भाव-स्रोत है—जो प्रवाह व्यक्ति में है वही समष्टि में भी। औचित्य के अधिकार की परिधि में जो आ गया है, वह सारे राज्य का स्वतन्त्र नागरिक बन जाता है। जो प्लेटो ने सोचा है उसे वह भी सोच सकता है। एक सन्त ने जो अनुभव किया है उसे वह भी अनुभव कर सकता है। किसी समय किसी व्यक्ति पर जो गुजरी है उसे वह भी समझ सकता है। इस विश्वान्तःकरण से जिसका सम्बन्ध जुड़ चुका है वह यहाँ कुछ होता है और जो हो सकता है, उसमें सहभागी हो जाता है। क्योंकि यही एक-मात्र एवं सार्वभौम सूत्रधार है।

ऐसे अन्तःकरण के कार्य-कलापों का लेखा ही इतिहास है। समय का सारा क्रम इसकी प्रतिभा को स्पष्ट करता है। अपने सम्पूर्ण इतिहास के सिवाय मनुष्य को समझने की और कोई कुञ्जी ही नहीं है। बिना जल्दी और विश्राम के यह मनुष्यात्मा अपने प्रत्येक विचार, भाव और सामर्थ्य को समुचित घटनाओं में साकार करने को अग्रसर होती रहती है। लेकिन विचार की उत्पत्ति कर्म से पूर्ण होती है। इतिहास की घटनाएँ नियमों के रूप में अन्तःकरण में पहले से ही मौजूद रहती हैं। बारी-बारी से प्रत्येक नियम परिस्थितियों के पोषण से महत्त्वपूर्ण बन जाता है। लेकिन प्रकृति की सीमाएँ सिर्फ एक ही कानून को एक बार ऐसी सामर्थ्य दे पाती हैं। इस प्रकार

व्यक्ति कर्मों का अथाह सागर है। एक ही बीज में हजारों वनों की सृष्टि विद्यमान है और मिस्र, यूनान, रोम, गोल, ब्रिटेन, अमरीका आदि का निर्माण आदिमानव के मन की ही प्रसुप्त प्रेरणा थी। युग के बाद युग आये—जैसे बने, राज्यों का निर्माण हुआ, साम्राज्य कायम हुए और गण-तन्त्र-प्रजातन्त्रों के शिलान्यास किये गए—लेकिन ये सब विश्वात्मा की अनन्त प्रवृत्तियों के अनुरूप मनुष्यात्मा की अनन्त प्रवृत्तियों की अभिव्यक्तियाँ हैं।

मनुष्य की बुद्धि ने ही इतिहास बनाया और मनुष्य को ही फिर इतिहास पढ़ना भी है। पहेली बनाने वाले को अपनी पहेली स्वयं हल करनी होगी। यदि एक ही मनुष्य में सारा मानव-इतिहास गुम्फित है तो वैयक्तिक अनुभव से ही उसे स्पष्ट करना है। सदियों में प्रवाहित काल एवं हमारे जीवन-प्रवाह की घड़ियों में पारस्परिक सम्बन्ध है। जिस तरह मैं साँस लेता हूँ वह वायु प्रकृति के विराट् भाण्डारों से आती है; जो प्रकाश मेरी पुस्तक पर पड़ रहा है वह करोड़ों मील दूर के सितारे से आ रहा है; और जिस तरह मेरी देह का संतुलन केन्द्र-वितरित एवं केन्द्र सकुंचित शक्तियों के संतुलन पर निर्भर है उसी प्रकार जीवन-घड़ियों को भी युगों के आदेश मिलने चाहिएँ और युगों की व्याख्या घड़ियों द्वारा होनी चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति विश्व-अन्तःकरण का अवतार है। उसके सारे गुणों का अवतरण भी व्यक्ति के भीतर हो गया है। व्यक्ति के निजी अनुभव की प्रत्येक बात महापुरुष के कारनामों की प्रकाश-रेखा होती है और इसी प्रकार व्यक्ति के जीवन की संक्रान्तियाँ राष्ट्रीय या जातीय संक्रान्तियाँ हैं। प्रत्येक क्रान्ति जो संघटित हो चुकी है वह अपने प्राथमिक रूप में एक व्यक्ति के मन का विचार थी और जब वही विचार दूसरे किसी व्यक्ति के मन में उदित हुआ तो वह उस युग की कुञ्जी बन गया। प्रत्येक सुधार पहले एक वैयक्तिक सम्मति था और जब फिर कभी वह वैयक्तिक सम्मति के रूप में व्यक्त होगा तो वह युग की समस्या को हल करेगा। वर्णित घटना उसी समय मेरे लिए विश्वस्त और बोधगम्य हो सकेगी जबकि उसकी अनुरूप घटना पहले से ही मेरे मन में बीजारोपित हो। जब हम पुस्तकें पढ़ते हैं तो हमें भी यूनानी, रोमन, तुर्क,

पुरोहित, राजा, शहीद, एवं जल्लाद बन जाना पड़ेगा; ये प्रतिमाएँ हमारे गुप्त अनुभवों में कहीं-न-कहीं यथार्थ रूप में ओत-प्रोत की जानी चाहिएँ अन्यथा हम वास्तविक रूप में कुछ नहीं सीख सकेंगे। परन्तु आसद्रूबल और सीजर बोर्जिया के साथ जो गुज़रा वह मन की शक्तियों एवं विकृतियों का उतना ही बड़ा निरूपण है जितना कि हमारे साथ घटित होने वाली घटनाओं का। प्रत्येक नये नियम और राजनीतिक आन्दोलन का आपके लिए कुछ प्रयोजन है। उसके प्रत्येक लेख के सम्मुख खड़े होकर कहिये, "इस नकाब के भीतर मेरी सर्वगुणी प्रतिभा छिपी हुई है।" हमारे अपने अत्यन्त समीप होने के दोष का इससे परिहार हो जाता है। इससे हमारे कर्म एक दृष्टिकोण में सम्बद्ध हो जाते हैं और जिस प्रकार केकड़े, बकरे, बिच्छू, तराजू और जल-घट ज्योतिष की राशियों के प्रतीक बनकर अपनी संकीर्णता खो देते हैं उसी प्रकार मैं भी अपने दुर्गुणों की परम्परा का सम्बन्ध सोलोमन, एल्सीबायडीस और केटिलीन से जोड़ता हूँ।

विश्व-प्रकृति ही व्यक्ति-विशेष या चीज़ों को मान्यता देती है। इस विश्व-प्रकृति को अपने भीतर अनुप्राणित करने वाला मानव-जीवन अत्यन्त रहस्यमय और अनुल्लंघ्य है और हम उसके आस-पास कानूनों और दण्डों की झाड़ियाँ खड़ी कर देते हैं। इस प्रकार सभी नियम अपना असली प्रयोजन प्राप्त कर लेते हैं; सब किसी-न-किसी रूप में इस सर्वोच्च एवं अनुपम तत्त्व के आदेशों को स्पष्टतः व्यक्त करते हैं। सम्पत्ति का सम्बन्ध भी आत्मा के साथ है और इस शृङ्खला में कई बड़ी आध्यात्मिक घटनाएँ गुँथी हुई रहती हैं तथा सहज-बुद्धि के वशीभूत होकर पहले हम तलवारों, कानूनों एवं ऐसे ही अनेक जटिल साधनों के साथ उससे सम्बद्ध रहना चाहते हैं। इस सत्य की अस्पष्ट चेतना ही हमारे सारे दिन की रोशनी है, हमारे कई दावों का दावा है। यही शिक्षा, न्याय और उदारता की माँग है और प्रेम, मैत्री, शौर्य एवं आत्म-विश्वास के कार्यों से प्रासंगिक गौरव की बुनियाद भी यही है। यह ग़ौर करने की बात है कि किसी अज्ञात प्रेरणा के वशीभूत होकर हम पढ़ने के समय अपने-आपको सदैव उन्नत व्यक्ति समझते हैं।

दुनिया के इतिहास में कवियों और प्रेमियों की उत्कृष्ट प्रतिमाएँ—इस्पा-शिया और इमिना के विषय के ये महान् चित्र—हमारी समझ के लिए पराये नहीं मालूम होते; हमें ऐसा नहीं प्रतीत होता कि हम अनधिकृत रूप से उनके दायरे के भीतर प्रवेश कर रहे हैं अथवा यह मन भी हमारे भीतर उदित नहीं होता कि वे सब महान् व्यक्तियों के लिए हैं, हमारे लिए नहीं। इसके विपरीत वास्तविक बात यह है कि उनकी कर्तृत्व-पराकाष्ठा के साथ हम परिपूर्ण आत्मीयता का अनुभव करते हैं। राजा के बारे में शेक्सपियर जितना भी लिखता है उसे वहीं उस कोने में बैठकर पढ़ने वाला वह लड़का अपने स्वयं के पक्ष में सच मान रहा है। इतिहास के महान् वर्गों, महान् आविष्कारों, संघर्षों और मनुष्यों की विराट् समृद्धियों के साथ हमारी सहानुभूति रहती है; क्योंकि हमारे ही लिए कानून बना है, समुद्र को खोजा गया है, ज़मीन का पता लगाया गया है या युद्ध किये गए हैं और यदि हम उस समय होते तो यही करने या इसकी प्रशंसा में शामिल होते।

अवस्था और चरित्र में हमारी अभिरुचि समान है। धनवान का हम सम्मान करते हैं, क्योंकि बाह्य संसार में उनको वह स्वतन्त्रता, शक्ति और गौरव मिलता है जिसे हम मनुष्य के लिए और विशेष रूप से अपने स्वयं के लिए उचित समझते हैं। इसी प्रकार, प्राच्य, आधुनिक एवं वीतरागियों ने विवेकशील अथवा बुद्धिमान व्यक्तियों के विषय में जो-कुछ लिखा है उसमें पाठक को अपने स्वयं के विचारों की अभिव्यक्ति मिल जाती है; उसका अभी तक का अज्ञात किन्तु प्राप्ति-योग्य साध्य उसे साकार मिल जाता है। सभी साहित्य बुद्धिमान का ही चरित्र व्यक्त करते हैं। पुस्तकें, स्मारक, चित्र, वार्तालाप—सब पाठक, दर्शक या श्रोता के निजी अंग-प्रत्यंगों की ही तस्वीरें होती हैं। वे अपने ही व्यक्ति को इनमें उभरा हुआ देखते हैं।

मौनी और वक्ता उसकी प्रशंसा करते हैं और उसे नमस्कार करते हैं और जहाँ भी वह जाता है वैयक्तिक प्रसंग के रूप में उससे उत्साह पाता है। इसलिए एक सच्चे साधक को संसार में वैयक्तिक या प्रशंसनीय प्रसंगों को देखने की ज़रूरत नहीं है। उसका अपना एक आदर्श चरित्र होता है।

बदलनी चाहिए कि वह स्वयं एक न्यायालय है और अगर इंगलैण्ड या मिस्र को कुछ कहना है तो वह इस न्यायालय में सुना जायगा तथा यदि वे ऐसा नहीं चाहते तो उन्हें सदैव मौन-मूक ही रहना होगा। इतिहास के विद्यार्थी को ऐसी उन्नत दृष्टि बनानी एवं कायम रखनी चाहिए कि घटनाएँ उसके सामने अपने गोपनीय रहस्य उँड़ेल दें और काव्य एवं इतिवृत्त एक-रूप हो जायँ। इतिहास के महत्त्वपूर्ण विवरणों का जो उपयोग हम करते हैं उससे हमारे मन की सहज-प्रवृत्ति अर्थात् प्रकृति का प्रयोजन स्पष्ट हो जाता है। जीवन की घटनाओं के ठोस कोणों को समय उज्ज्वल ईथर बनाकर छितरा देता है। कोई भी लगर, बेबिल या चहारदीवारी घटना को अपने अविकृत रूप में कायम नहीं रख सकती। बेबीलोन, ट्राय, टायर, फिलस्तीन और पुरातन रोम तक भी आज कहानी बन गए हैं। ईडन का बगीचा और गिबिग्रान का स्थिर सूर्य आज सर्वत्र काव्य ही माना जाता है। असली घटना क्या थी इसकी कौन चिन्ता करता है जबकि हमने उसे स्वर्ग की अमर दीवारों पर टाँगने के लिए एक सितारा बना दिया है। लन्दन, पेरिस और न्यूयार्क की भी यही गति होगी। नेपोलियन ने कहा है : "इतिहास आखिर है क्या ? एक स्वीकार की गई कपोल कल्पना ही न !" इतने फूलों और आभूषणों के हर्ष-विषाद की भाँति हमारा जीवन मिस्र, यूनान, गोल, इंग्लैण्ड, युद्ध, उपनिवेशीकरण, चर्च, न्यायालय और वाणिज्य के आस-पास हो लिपटा हुआ है। मैं उनकी ज्यादा गिनती नहीं करूँगा। मैं सनातनता में विश्वास करता हूँ। मैं अपने ही स्वयं के मन में यूनान, एशिया, इटली, स्पेन और द्वीप—प्रत्येक एवं सभी युगों की प्रतिभा एवं सृजन-सिद्धान्त—को प्राप्त कर सकता हूँ।

इतिहास के प्रबल सत्यों के साथ हमारे वैयक्तिक अनुभवों का सदैव सामंजस्य रहता है और उन्हें हम अपने दैनिक जीवन में साकार होते देखते रहते हैं। सारा इतिहास आत्मनिष्ठ हो जाता है; दूसरे शब्दों में, वास्तव में इतिहास कुछ भी नहीं है—सब जीवन-चरित्र ही है। प्रत्येक व्यक्ति को पूरा सबक स्वयं ही सीखना है—सारे क्षेत्र में उसे स्वयं ही अंकुर की भाँति

फूटना है। जिसे वह नहीं देखता एवं जिसको वह अपने जीवन में अनुप्राणित नहीं पाता उसे वह जान भी नहीं सकेगा। पूर्व युग ने जिसे अपनी सुविधा के लिए सूत्र या नियम के रूप में परिणत कर लिया है वह सिद्धान्त या सत्य एक प्रकार से बन्दी बना दिया गया है और वह मानव-जीवन में व्यक्त होने की सारी क्षमता को खो देता है। कहीं भी और किसी भी समय वह अभिव्यक्ति का तकाजा भी करेगा और अन्ततः स्वतः के स्फोट में ही अपनी क्षति की पूर्ति प्राप्त कर सकेगा। फर्गुसन ने खगोल की बहुत-सी ऐसी बातों का पता लगाया है जो काफी समय पूर्व ढूँढ़ निकाली गई थीं।

यही इतिहास होना चाहिए अन्यथा कुछ नहीं। प्रत्येक कानून, जो राज्य द्वारा बनाया जाता है, मानव-स्वभाव के एक सत्य की ओर ही इंगित करता है। यहीं तो बस है। हमें अपने भीतर प्रत्येक घटना या सत्य का आवश्यक औचित्य देखना होगा। यह भी देखिये कि यह किस प्रकार हो सकता है। आप प्रत्येक सामाजिक एवं वैयक्तिक घटना के सामने खड़े हो जाइए। बर्क के भाषण के सामने, नेपोलियन की विजय के सामने, सर थामस मूर सिडने और मर्माड्यूक राबिन्सन के बलिदानों के सामने खड़े हो जाइये—फ्रांस के आतंकित राज्य और सलेम में फाँसी पर चढ़ी हुई जादूगरनियों के सामने; कठमुल्लों के पुनरावर्तन, और पेरिस या सृष्टि के पशु-चुम्बक के सिद्धान्तों के सामने अपनी हस्ती को खड़ा कर दीजिये। ऐसी स्थिति में हम यह देखेंगे कि वहाँ हम भी वही सोच रहे हैं और बौद्धिक रूप में भी हम वही करना चाहते हैं, उसी प्रकार उन्नत एवं अवनत होना चाहते हैं जैसे कि ये सामने खड़े व्यक्ति चाहते रहे थे।

पुरातत्त्व-सम्बन्धी सारी खोज, पिरामिड, खोदे गए प्राचीन नगरों, स्टोन-हेंज, ओहियो सर्किल्स, मेक्सिको, मेम्फिस आदि का प्रासंगिक कौतूहल वस्तुतः इसीलिए है कि उन पर लगी हुई पुरातन और अतीत की छाप को तोड़ दिया जाय और आधुनिक एवं नवीन की नई छाप उन पर लगाई जाय। बेल्ज़ोनी 'ममी' (रासायनिक मसालों से सुरक्षित शव) क्षेत्र एवं थीब्ज़ के पिरामिडों की खुदाई करते-करते उस हद तक पहुँचना चाहता

है जहाँ इस पुरातन के साथ उसके स्वयं का कोई अन्तर शेष न रह जाय—दोनों एकाकार हो जाएँ। उसकी समस्या उसी समय हल हो जाती है जब वह यह देख लेता है कि उसके जैसे और उसी के समान उद्देश्य को अपनाने वाले व्यक्ति ने यह सब निर्माण किया है—अपने नवीन के साथ उस पुरातन को एक रूप करने पर ही उसे वास्तविक तुष्टि मिलती है। मन्दिरों, स्फींक्सों (नारी के मुख और सिंह के धड़ वाली मिस्र की मूर्तियाँ जो अबूझ पहेलियों की प्रतीक मानी जाती हैं) केटेकाम्बों (रोमनों के शव दफनाने के तहखानों) आदि को पार करते हुए जब उसके किनारे गुजरते हैं, तो उसे बड़ा सन्तोष मिलता है और वे फिर उसके मन में पुनर्जीवित हो जाते हैं—पुरातन नूतन में अवतीर्ण हो उठता है।

एक गोथिक गिरिजाघर इस बात की पुष्टि करता है कि वह हमारे द्वारा निर्मित है और नहीं भी है। निश्चित रूप से वह मनुष्य द्वारा बनाया गया है, लेकिन उस निर्माता को हम अपने भीतर नहीं देख पाते। इतिहास की यही अपेक्षा है। जब हम उसकी बनावट के इतिहास को पढ़ते हैं तो हम अपने-आपको उस निर्माता के स्थान और स्थिति पर अवस्थित कर देते हैं। इतिहास के अध्ययन से ही हम क्रमशः वनवासियों, प्राथमिक मन्दिरों और प्राथमिक शैली के उपयोग का स्मरण करते हैं और जब इतिहास यह बताता है कि उक्त राष्ट्र को समृद्धि एवं वैभव मिल गया है तो सजावट का काम भी हमें स्पष्ट होने लगता है। पहले हम लकड़ी में खोदकर बनाये गए चित्रों को देखते हैं और फिर इस क्रम में आगे बढ़कर पर्वताकार गिरिजों की शिलाओं की खुदाई और चित्रकारी तक पहुँच जाते हैं। जब हम इस प्रक्रिया से गुजरते हैं और आगे चलकर कैथोलिक च्चर्च, उसका क्रास, संगीत, जुलूस-समारोह, उसके पर्व और मूर्ति-पूजा भी जब हमारे मार्ग में आ जाते हैं तो हम ऐसा अनुभव करने लगते हैं मानो हमीं ने वह गिरजा बनाया है। हमने यह देख लिया है कि वह कैसे बन सका है और उसे कैसा बनना चाहिए। इसके काफी कारण हमारे पास एकत्र हो जाते हैं।

प्रसंग के सिद्धान्त पर ही मनुष्यों में भेद-प्रभेद होते हैं। कुछ व्यक्ति

एकरूप नहीं रह सकता। प्रकृति एक ही विचार को अगणित रूपों में ढाल देती है जैसे कि कवि एक ही जीवन-संदेश पर बीस कथाएँ बना सकता है। पदार्थ अर्थात् जड़-प्रकृति में जो बर्बरता एवं कठोरता है उसके भीतर एक ऐसी सूक्ष्म आत्मा भी है जो सभी वस्तुओं को अपनी स्वेच्छा के साँचे में ढालती है। यह आत्मा इतनी बलवती है कि कठोर-से-कठोर पदार्थ भी उसके सामने पिघलकर एक निश्चित रूप धारण कर लेता है और हमारे देखते-देखते उसका यह रूप भी बदल जाता है। रूप से ज्यादा परिवर्तनशील और कुछ नहीं है। लेकिन उसके अस्तित्व से इन्कार नहीं किया जा सकता। आज भी मनुष्य में हमको निम्न नस्लों के प्रभुत लक्षण मिल जाते हैं, लेकिन उनसे उसकी महत्ता एवं गौरव ही बढ़ता है। उदाहरण के लिए एसचिलस (Aeschylus) की 'आइवो' को लीजिए। जब वह गाय का रूप धारण कर लेती है तो हमारी कल्पना पर एक आघात लगता है। लेकिन मिस्र में जब आइसिस के रूप में ओसिरिस-जोव से वह मिलती है तो कितना परिवर्तन हो जाता है। इस समय वह एक सुन्दरी है जिसमें निम्न नस्ल के अवशेष सिर्फ सींग ही बच गए हैं और वे भी चाँद-जैसे चमकीले हैं, जिनसे उसकी भृकुटियों की शोभा अनुपम हो गई है।

इतिहास का साम्य भी समान रूप से तात्विक है और उसी भाँति वैषम्य भी काफी स्पष्ट है। बाहरी सतह पर हम असीम विविधता देखते हैं लेकिन केन्द्र में हमको सिर्फ मूल कारण की सरलता के ही दर्शन होते हैं। एक मनुष्य के कर्मों को देखकर ही हम इस सत्य का साक्षात्कार कर सकते हैं। यूनानी तत्त्व-चिंतन के प्रकाश में आइए हम इस ज्ञान के स्रोत की खोज करें। हिरोडोटस, थूसी डाइडेस, जेनोफन और प्लूटार्क द्वारा प्रणीत यूनानी समाज का नागरिक इतिहास हमारे सामने है। इसमें वहाँ के मनुष्यों और उनके कार्यों का काफी अच्छा विवरण है। यही राष्ट्रीय अंतःकरण उनके साहित्य में भी व्यक्त हो गया है—महाकाव्यों, गीतों, नाटकों और दर्शन में हम उनके चिंतन की परिपूर्ण झाँकी देख लेते हैं। उनकी वास्तु-कला में भी यही बात है—सीधी रेखाओं और वृत्त तक सीमित एक सधी हुई सुन्दरता

के रूप में वहाँ की विकसित ज्यामिति का अभिनव रूप हमारे सामने प्रकट होता है। अब उनके शिल्प को लीजिये जिसे हम 'अत्यन्त संतुलित अभिव्यक्ति' कह सकते हैं। रूप एवं आकृतियों के दर्शन यहाँ हमें होते हैं और कर्म की परिपूर्ण स्वच्छन्दता में इनका निर्माण होते हुए भी उनके उद्वेगहीन लक्ष्य में किसी प्रकार का व्यतिक्रम नहीं पड़ता। यह सब ऐसा प्रतीत होता है मानो कुछ भक्त लोग देवता के सामने नाच रहे हैं, उनके भीतर दर्द या वेदनाएँ उठने लगी हों या वे सांघातिक संघर्ष में उलझ गए हों, लेकिन वे नाच के क्रम एवं गति को भंग नहीं कर सकते! इस प्रकार एक जन-समाज की प्रतिभा का चतुर्मुखी रूप हमारे सामने स्पष्ट होता है। पिंडार के गीत, संगमरमर की ऐसी प्रतिमा जिसका सिर घोड़े का हो, पार्थेनान के मन्दिरों की कला और फोसियन के आखिरी कारनामे हमारे सामने कैसा अजनबीपन पेश कर जाते हैं!

हममें से प्रत्येक ने ऐसे चेहरे और आकृतियाँ देखी हैं जिनके अंग-प्रत्यंगों का कोई सादृश्य नहीं होता, किन्तु वे दर्शक पर वैसा ही प्रभाव डालते हैं। एक खास प्रकार का चित्र और काव्य-पुस्तक अगर उसी प्रकार की प्रतिभाएँ जाग्रत् नहीं करती हैं तो वैसे भावों का अवतरण अवश्य हो जाता है। यद्यपि यह सादृश्य किसी भी रूप में इन्द्रिय-गम्य नहीं होता, किन्तु दिव्य भाव से वह हमारे भीतर विद्यमान रहता है और हम उसे आसानी से समझ नहीं सकते। प्रकृति कुछ बहुत ही थोड़े नियमों का अनन्त मिश्रण और पुनरावृत्ति है। असंख्य परिवर्तनों के रूप में वह उन्हीं पुराने रागों को गुनगुनाती रहती है।

प्रकृति अपने कार्य-कलापों में दिव्य पारिवारिक सादृश्य का परिचय देती है और अनेक अप्रत्याशित साम्यों के प्रदर्शन से हमें चकित करने में आनन्द का अनुभव करती है। मैंने वन के एक वृद्ध मुखिया का सिर देखा है जिसको देखते ही मुझे एक बंजर पर्वत-शिखर का स्मरण हो आता है और उसकी भृकुटियों की झुर्रियाँ शिलाखण्ड के स्तरों की सूचना देने लगती हैं। कई बार ऐसे व्यक्ति हमारी निगाह में आते हैं जो एकदम पार्थेनान के

मनाडक हिल्स को हमारे सामने सजीव कर देते हैं अथवा यूनान की प्रारंभिक कला का स्मरण कराते हैं। सभी युगों की पुस्तकों में ऐसे निर्माण की लड़ियाँ मिलती हैं। गाइडो का 'रासपिगलियोसी अरोरा' (Rospigliosi Aurora) सिर्फ प्रभातकालीन विचार ही तो है—उसमें जो घोड़े हैं वे प्रभात के बादल ही हैं। यदि कोई अपनी रुचि एवं अरुचि के कार्य-कलापों की विविधता पर विचार करे तो उसे मालूम हो जायगा कि पारस्परिक आत्मीयता का सूत्र कितना गहरा है।

एक चित्रकार ने मुझसे कहा था कि किसी-न-किसी रूप में स्वयं वृक्ष बने बिना वृक्ष का चित्र कोई नहीं बना सकता। यही स्थिति एक बालक का चित्र बनाने के विषय में है। सिर्फ बालक के कार्यों एवं मुद्राओं के अध्ययन-मात्र से नहीं, बल्कि स्वयं बालक की मनोवृत्ति में प्रवेश किये बिना कोई भी चित्रकार उसका सही चित्र नहीं बना सकता। रूस इसी प्रकार 'भेड़ की अन्तस्थ मनोवृत्ति में प्रवेश कर गया था।' मैं एक नक्शे-नवीस (ड्राफ्ट्समैन) को जानता हूँ जो पब्लिक सर्वे में काम करता था—वह पत्थरों का नक्शा तब तक नहीं बना सकता था जब तक कि भू-विज्ञान के अनुसार उसे उनकी रचना का पूरा ज्ञान न हो जाय। विचार की किसी खास अवस्था में ही विभिन्न कार्यों की समान उत्पत्ति होती है; बाहरी रचना नहीं बल्कि उनकी आत्मा ही समानता का परिचय देती है। केवल अनेक श्रम-साध्य कारीगरियों को कष्ट के साथ हस्तगत करने से ही नहीं बल्कि एक अत्यन्त गम्भीर अनुभूति के द्वारा कलाकार एक निर्धारित प्रवृत्ति में अन्य आत्माओं को जाग्रत करने की शक्ति प्राप्त करता है।

ऐसा कहा जाता है कि "सामान्य व्यक्ति अपने कर्मों और असामान्य व्यक्ति अपनी अन्तरात्मा के द्वारा अपनी अभिव्यक्ति करते हैं।" ऐसा क्यों होता है? क्योंकि प्रकृति अपने कर्मों एवं शब्दों—अपने रूपों और तरीकों द्वारा हमारे भीतर वही शक्ति एवं सौन्दर्य जाग्रत करती है जो शिल्पों एवं चित्रों की गैलरी के द्वारा हमको मिलती है।

नागरिक एवं प्राकृतिक इतिहास, कला और साहित्य का इतिहास

[illegible] किस [illegible] आलौकिक हो [illegible] । [illegible] —इनमें से कोई ऐसा नहीं है जिसका हमारे [illegible] सम्बन्ध न हो या जो हमसे न आता हो— क्योंकि मनुष्य के भीतर ही तो सब सृजन की जड़ें होती हैं । [illegible] और [illegible] सुन्दर [illegible] की [illegible] है । [illegible] का [illegible] के [illegible] की [illegible] है । [illegible] का आत्मा-कार ही सच्ची कविता है और [illegible] ही सच्चा महान है । जिस प्रकार [illegible] और [illegible] में [illegible] के [illegible] पहले से ही विद्यमान होते हैं उसी प्रकार यदि हम गहराई से विचार करें तो मनुष्य में भी हमें उसके अतीत की झाँकी देखने को मिल सकती है । [illegible] में [illegible] और [illegible] भरी हुई है । सुसंस्कृत व्यक्ति आपका नाम [illegible] कि आपमें उसके अनेक [illegible] एवं गौरव का आभास अनुभव होने लगे ।

हमारे दैनिक जीवन के साधारण अनुभव सहज किसी पुरानी भविष्य-वाणी को हमारे लिए साकार करते हैं और उन शब्दों तथा प्रतीकों को वस्तुओं में परिणत करते हैं जिन पर हमने ध्यान नहीं दिया था । एक महिला, जो मेरे साथ जंगल में जा रही थी, मुझसे कहने लगी कि यह वन मुझे सदैव प्रतीक्षा करता प्रतीत होता है मानो कि उसमें बसने वाले देव यात्रियों के गुज़र जाने तक अपने सब काम स्थगित कर देते हों । कवियों ने परियों के नाच में ऐसा ही विचार रखा है कि जैसे ही मनुष्य उनके निकट जायँ वे अपना नाच बन्द कर देती हैं । जो मनुष्य आधी रात के बादलों के भीतर से चाँद को उदित होते देखता है वह मानो प्रकाश एवं संसार की उत्पत्ति के समय देवदूत के रूप में मौजूद था । एक गरमी के दिन का मुझे स्मरण है कि मेरे एक साथी ने क्षितिज के समानान्तर फैला हुआ एक चौथाई मील लम्बा बादल बताया, जिसकी आकृति उन फरिश्तों-जैसी थी जो गिरजे के ऊपर चित्रांकित थे—केन्द्र में एक गोल ब्लाक था जिसमें आसानी से आँखें एवं मुख देखे जा सकते थे और दोनों तरफ बिलकुल समानान्तर पंख दिखाई

देते थे। एक बार वायु-मण्डल में जो व्यक्त हो चुका है वह अवसर व्यक्त होता है और वह परिचित सजावट की ही अनुकृति बन जाता है। एक बार आकाश में मैंने बिजली चमकती देखी और उसी वक्त मुझे यूनानियों द्वारा चित्रित वज्र थामे हुए जोव के चित्र की याद आ गई। एक जगह पत्थर की दीवार के आस-पास मुझे बर्फ़ का ढेर दिखाई दिया जो एक मीनार की वास्तु-कला के खाके की याद दिलाता था। बुनियादी परिस्थितियों के भीतर अपने-आपको रखने से हम वास्तु-कला के नक्शों और सजावटों को फिर से निर्मित कर लेते हैं, क्योंकि हमको आदिम निवासियों की गृह-सजावट का ज्ञान हो जाता है। मोटे तौर पर तातार खेमों के अनुरूप ही चीनियों के पैगोडा बने हैं। भारतीय और मिस्री मन्दिरों में अभी भी उनके पूर्वजों के टीलों और तहखानों के आभास मिलते हैं। 'इथोपिया में खोज' के लेखक हीरेन ने कहा है: "शिलाओं पर घर और समाधियाँ बनाने की प्रथा न्यूबियन मिस्री स्थापत्य कला की मुख्य विशेषता है जिसके अनुसार वहाँ विशाल आकार के भवन एवं समाधियाँ बनाई गईं। प्रकृति द्वारा निर्मित इन गुफाओं में रहने वाले व्यक्तियों की आँखें विशाल आकार-प्रकार की अभ्यस्त हो गई थीं। इसलिए जब प्रकृति की सहायता के लिए कला का आश्रय लिया गया तो वे लोग छोटे आकार-प्रकार पर उतरकर कला को अपमानित कैसे करते? इन विशाल भवनों के अनुपात में सामान्य आकार की मूर्तियाँ या प्रवेश-द्वार कैसे भद्दे लगते! इन विशाल भवनों के दरबान भी विराट ही होने चाहिएँ जो उनके अनुपात में उचित लगें या जो खम्भों पर झुककर भीतर देख सकें।"

गोथिक चर्च का निर्माण तो एकदम जंगल के पेड़ों के आदर्श पर हुआ है—शाखाओं सहित ये वृक्ष उत्सव के अवसर पर मेहराबदार मार्गों पर खड़े हैं। विभाजित खम्भों की पेटियाँ हरी शाखाओं की ओर ही संकेत करती हैं। पाइन (सदाबहार की प्रकार के पेड़) के जंगलों के बीच से जाने वाली सड़क पर चलने वाले व्यक्ति को कुञ्ज के स्थापत्य की स्मृति आये बिना नहीं रह सकती और खासकर शरद-ऋतु में जबकि दूसरे पेड़ों के पत्ते झड़

जाते हैं और सेनसन मेहरावें स्पष्ट होने लगती हैं। शरद-ऋतु में पत्रहीन एवं एक-दूसरे पर गुजरने वाली पेड़ों की शाखाओं में से पश्चिमी आकाश के रंगों को देखकर गोथिक चर्चों में सुसज्जित रँगे काँचों की उत्पत्ति की स्मृति एकदम ताजी हो जाती है। कोई भी प्रकृति का प्रेमी आक्सफर्ड और अँग्रेजी गिरजों के अवशेषों में प्रवेश करते समय इस अनुभूति को नहीं रोक सकता कि निर्माता के मन में वन का एकाधिपतित्व रहा होगा और उसकी छेनी, उसके आरे और रंदे ने वन के अंग-प्रत्यंगों की प्रेरणा से ही इन शिल्पों पर झाड़ियाँ, फूलों की पंखुड़ियाँ, टिड्डे, बलूत आदि पेड़ बनाये हैं।

गोथिक गिरजा फूल की तरह गिरा हुआ एक पाषाण है जिसे मनुष्य के कला-प्रेम ने एक संतुलित आकृति में बन्दी बना दिया है। पाषाणों का एक पर्वत शाश्वत सुमन की भाँति खिल उठा है जिसमें हल्केपन एवं कोमलता की तरह वायवीय अश्रुपात एवं वनस्पतिक सौन्दर्य के दर्शन भी होते हैं। इसी प्रकार सभी सामाजिक बातें सामाजिक साबित की जा सकती हैं। ऐसी स्थिति में इतिहास प्रवाहमय एवं सच्चा हो उठता है और 'जीवन चरित' गहन एवं व्यापक हो जाता है। जिस प्रकार ईरानियों ने अपने वस्तु एवं स्थापत्य में कमल के फूलों और मृणाल की नकल की है उसी तरह ईरान के दरबार ने भी अपने शानदार युग में बर्बर जातियों की खानाबदोश विशेषताओं का त्याग नहीं किया था। एक वेटना से सूसा और बेबीलोन तक पहुँचने वाली बर्बर जातियों की सभी विशेषताएँ उसमें बद्धमूल हैं।

एशिया और अफ्रीका के प्रारम्भिक इतिहास में खानाबदोश और खेतिहर दो प्रकार की परस्पर विरोधी जीवन-प्रणालियाँ पाई जाती हैं। एशिया और अफ्रीका के भूगोल में ही खानाबदोश जीवन की मजबूरियाँ हैं। लेकिन खेती और व्यापार करने वालों के लिए ये खानाबदोश बड़े भारी खतरे थे— कृषक और व्यापारियों ने नगर बसाकर रहना शुरू कर दिया था। राज्य को खानबदोश जीवन से खतरे थे अतः खेती करना धार्मिक आज्ञा घोषित कर दी गई। इंगलैंड और अमरीका [illegible] गत एवं व्यक्तिगत

रूप इन दोनों मनोवृत्तियों की पुरानी लड़ाई अब भी भड़क उठती है। डाँसों के काटने के कारण पशु पागल हो जाते हैं अतः वर्षा ऋतु में कबीलों को स्थान-परिवर्तन करना पड़ता है और अपने पशुओं को ऊँचे रेतीले प्रदेशों में ले जाना पड़ता है। इस प्रकार अफ्रीका के खानाबदोशों को घूमते रहना एक विवशता है। एशिया के खानाबदोश प्रतिमास चरागाहों की खोज में आगे बढ़ते जाते हैं। अमरीका और यूरोप में व्यापार एवं कौतूहल की खानाबदोशी है—एम्स्टर्डम के डॉमों से बोस्टन खाड़ी के कट्टर अंग्रेजों और इटालियनों के परम्परा-प्रेमियों तक यह एक लम्बी यात्रा है। पवित्र नगरों में धार्मिक यात्राएँ प्रचलित की गईं और व्यक्तियों को एक राष्ट्रीय बन्धन में बाँधने के लिए कड़े कानून और प्रथाएँ बनाई गईं। इस सबका अभिप्राय जनता की घुमक्कड़ प्रवृत्ति को रोकना ही था। एक स्थान पर काफी लम्बे काल तक निवास करते रहने का सामूहिक असर भी व्यक्ति की यायावर-प्रवृत्ति को नियन्त्रित कर देता है। आज भी व्यक्तियों में इन दो प्रवृत्तियों का विरोध निष्क्रिय नहीं हो पाया है। साहसिक कार्य करने की प्रवृत्ति एवं विश्राम की अभिरुचि में यह भली भाँति स्पष्ट है। बहुत अच्छे स्वास्थ्य एवं उद्दण्ड मनोवृत्ति वाले व्यक्ति में जल्दी-जल्दी घर बसाने की स्वाभाविक आदत होती है और वह अपने वेगन में रहकर एक कालमक की भाँति संसार के प्रत्येक जलवायु में निर्द्वन्द्व घूमता रहता है। समुद्र, वन या बर्फ में बड़े आराम से सोता है, पूरी भूख के साथ भोजन करता है और अपने घर की भाँति ही वहाँ के वातावरण में घुल-मिल जाता है। कदाचित् उसकी सुविधा काफी गहरी है—उसका पर्यवेक्षण घटनाओं एवं वस्तुओं की भिन्नता एवं विस्तार चाहता है, जो उसे घुमक्कड़-जीवन में आसानी से प्राप्त हो जाता है। गाँवों में रहने वाली जातियाँ अपनी जरूरतों से बड़ी विवश थीं और यह बौद्धिक खानाबदोशी वस्तुओं की सूची पर ही शक्तिपात के द्वारा मन को बिलकुल दिवालिया बना देती है। घर में रहने की जो चतुराई है वह एक प्रकार का संयम या सन्तोष है जिसमें अपनी ही भूमि के द्वारा जीवनोपयोगी सभी सामग्री प्राप्त हो जाती है। यदि ऐसे जीवन में विदेशी समावेश हो तो उसमें

नीरसता एवं विकृति आने का खतरा भी कम नहीं है।

प्रत्येक व्यक्ति अपने बिना जो कुछ भी देखता है उसकी मानसिक अवस्थाओं के प्रति उसका सामञ्जस्य रहता है और बारी-बारी से प्रत्येक वस्तु उसको बोधगम्य होती जाती है, क्योंकि उसके विचार-प्रवाह की धाराएँ उसे इन वस्तुओं के भीतरी सत्य की ओर बढ़ा ले जाती हैं।

आदिम जगत् या जर्मनों के पूर्व जगत् को मैं अपने ही भीतर देख सकता हूँ अथवा तहखानों, पुस्तकालयों और भवनों के अवशेषों की खोज में उसे पा सकता हूँ।

चार या पाँच सदी के पूर्व के वीरगाथा या होमर-युग से एथेनियमों एवं स्पार्टनों के नागरिक जीवन तक के लम्बे यूनानी इतिहास, साहित्य, कला और काव्य के प्रति लोगों में जो रुचि दिखलाई देती है उसकी बुनियाद क्या है? यही कि प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में यूनानी युगों को साकार करता चलता है। यूनानी राज्य दैहिक प्रवृत्तियों, ऐंद्रिय विकास का युग है—ऐसा युग, जिसमें मनुष्य को अपने कर्मों में आत्मा एवं शरीर की एकरूपता के दर्शन हुए थे। इस युग में वे व्यक्ति साँस लेते थे जिनको आदर्श मानकर शिल्पियों ने हरक्यूलीज, फोबियस एवं जोव की मूर्तियाँ बनाईं—ऐसी मूर्तियाँ नहीं, जो आजकल के नगरों की सड़कों पर मिलती हैं; जिनके चेहरों पर भावों की स्पष्टता का एकदम अभाव होता है—प्रत्युत सुस्पष्ट एवं निखरे तथा संतुलित भावों का ऐसा विन्यास कि उनकी आँखों से दृढ़ संकल्प और विशुद्ध जीवन बरसता है और ऐसा प्रतीत होता है कि व्यक्तित्व की सारी शक्ति आँखों में समाई हुई है। उस युग के संस्कार तेज और स्पष्ट होते थे। साहस, तत्परता, आत्मानुशासन, न्याय, शक्ति, स्फूर्ति, गम्भीर घोष और चौड़े वक्षःस्थल-जैसे गुणों के प्रति लोगों के भीतर आदर की भावना थी। वैभव और विलास अज्ञात थे। थोड़ी जनसंख्या में रहने वाला व्यक्ति स्वयं ही अपना नौकर, रसोइया, कसाई और सैनिक हो जाता है और अपनी आवश्यकताओं की स्वयं पूर्ति करने की आदत से वह अपने शरीर से अद्भुत कार्य सम्पन्न कर सकता है। एगमेमनान और होमर का डायोमेड ऐसे

ही व्यक्ति थे और 'रिट्रीट आफ टेन थाउजेण्ड' (Retreat of Ten Thousand) में जेनाफन ने अपना एवं अपने साथियों का जो विवरण दिया है उसमें भी ऐसे चरित्रनायकों की ही झलक है—"जब सेना ने आर्मेनिया की टेलेबोस नदी पार कर ली तो काफी बर्फ गिरा और सैनिकों को बड़ा कष्ट होने लगा। लेकिन जेनोफन नग्न ही उठ खड़ा हुआ और एक कुल्हाड़ा उठाकर लकड़ियाँ चीरने लगा। उसकी प्रेरणा से दूसरे भी उठे और लकड़ियाँ चीरने लगे।" उसकी सेना में सर्वत्र वाक्-स्वातन्त्र्य का असीम अधिकार प्रचलित था। लूट के माल के लिए वे लड़ते थे, प्रत्येक नई आज्ञा पर वे सेनापतियों से झगड़ते थे और जेनाफन तो अत्यन्त तेज वक्ता था और इसलिए उसने जितना पाया है उतना ही दिया भी है। उक्त विवरण से ऐसा प्रतीत होता है मानो वयस्क लड़कों का यह दल था जिसमें अनुशासन की आवश्यक शिथिलता और सम्मानित जीवन की एक खास नियमावली थी।

प्राचीन ट्रेजेडी (दुःखान्त साहित्य) का एक बहुमूल्य आकर्षण यह है कि उसके पात्रों के वचन बड़े सरल हैं। वे इतनी सरलता से बोलते हैं कि उससे उनकी महत्ता का जैसे उनको पता नहीं हो। वस्तुतः सभी देशों के प्राचीन साहित्य की यही स्थिति है। उस समय तक मनुष्य की विचार-द्वन्द्वात्मक मनोवृत्ति काफी विकसित नहीं हो पाई थी। पुरातन के प्रति हमारी श्रद्धा इसलिए नहीं है कि वह प्राचीन है लेकिन उसकी निर्लिप्त स्वाभाविकता के लिए है। यूनानी लोग विचारवेत्ता नहीं थे लेकिन अपने इन्द्रिय-ज्ञान एवं स्वास्थ्य में अत्यन्त विकसित थे और सारे संसार-भर में उनका शरीर-संगठन सर्वोच्च था। वयस्कों का लोक-व्यवहार बालकों-जैसा सरल था। सुरुचि से प्रेरित होकर वे बरतन और मूर्तियाँ बनाते थे और नाटक लिखते थे। जहाँ भी स्वास्थ्य है वहाँ ये चीजें आज भी प्रचलित हैं। लेकिन यूनानियों ने अपने अपूर्व संगठन के कारण इस दिशा में सबको पीछे छोड़ दिया है। उनके भीतर पौरुष की शक्ति और शैशव की आकर्षक सरलता का अद्भुत समन्वय था। इन आचरणों के प्रति हमारा आकर्षण इसलिए होता है कि उनका सम्बन्ध

मनुष्य से है और प्रत्येक व्यक्ति उनसे इसलिए परिचित होता है कि उसने स्वयं ने अपने विकास-क्रम में शैशव की स्थिति को पार किया है। इसके अलावा, आज भी अनेक ऐसे व्यक्ति देखने में आते हैं जिनमें ये गुण उसी रूप एवं मात्रा में पाये जाते हैं। शिशु-सुलभ बुद्धि एवं स्वाभाविक शक्ति वाला व्यक्ति आज भी एक प्रकार से यूनानी ही है और उसे देखकर हमारे हृदय में फिर से यूनानी काव्य के प्रति प्रेम जाग्रत हो जाता है। 'फिलॉक्टेटीज' (Philoctetes) के प्रकृति-प्रेम की मैं सराहना करता हूँ। निद्रा, नक्षत्र, शिलाओं, पर्वतों और हिलोरों को सम्बोधन करते हुए इस पुस्तक में जो लिखा है उसको पढ़ते हुए मुझे ऐसा प्रतीत होता है मानो भाटे के समुद्र की भाँति समय ढलता जा रहा है। यहाँ मैं मनुष्य की समानता और उसके विचारों का ऐक्य अनुभव करने लगता हूँ। ऐसा प्रतीत होता है मानो यूनानियों के आस-पास भी ऐसे ही व्यक्ति रहा करते थे जैसे मेरे आस-पास रहते हैं। सूर्य, चन्द्र, जल और अग्नि उनके हृदयों का इसी प्रकार स्पर्श करते थे जैसे वे मेरे हृदय का करते हैं। इस प्रकार यूनानी और अंग्रेज तथा महाकाव्य-काल एवं रोमैंटिक-काल के बीच का, इतने अहंकार के साथ घोषित भेद कृत्रिम और प्रमादपूर्ण है। जब प्लेटो का एक विचार मेरा भी विचार बन जाता है—जब पिंडार की आत्मा को उद्दीप्त करने वाला सत्य मेरा भी सत्य बन जाता है—तो काल का कोई महत्त्व नहीं रह जाता। जब मैं यह महसूस करता हूँ कि हम 'दो' एक अनुभूति में मिल जाते हैं, एवं हमारी आत्माएँ एक ही रंग में रँगी हुई हैं और वे एक-जैसे ही कार्य करती हैं तो मैं अक्षांश-देशान्तर क्यों मापता हूँ—मिस्र के पुरातन वर्षों को क्यों गिनता हूँ? विद्यार्थी शौर्य-युग का स्पष्टीकरण अपने ही निजी शौर्य-युग से करता है। इसी प्रकार नाविकों के साहसिक कार्यों एवं जहाजों द्वारा विश्व-भ्रमण का भी वह अपने ही समानान्तर अनुभव से रहस्योद्घाटन करेगा। संसार के पुनीत इतिहास को खोलने की वही कुञ्जी उसके पास रहती है। अब पुरातन की गहराइयों में से किसी पैगम्बर की वाणी उसके भीतर जरा उसके शैशव की कोई भावना या युवावस्था की प्रार्थना ही प्रतिध्वनित कर देती

है तो वह परम्परा के सारे प्रभाव और संस्थाओं की सारी विद्वत्ताओं के भीतर प्रवेश करके सत्य का साक्षात् कर लेता है। -

कभी-कभी विरली और असामान्य आत्माएँ हमारे पास आती हैं जो हमें प्रकृति के नये सत्यों को स्पष्ट कराती हैं। मैं देखता हूँ कि परमेश्वर के भक्त अक्सर मनुष्यों के बीच में रहते हैं और छोटे-से-छोटे श्रोता के हृदय एवं आत्मा तक अपना संदेश पहुँचाते हैं। यही कारण है कि एल्डेफी की निपाई पर बैठने वाले पुरोहित में दिव्य भावों एवं आशा की प्रेरणा जाग उठा करती थी।

ईसा साधारण मनुष्यों को इसी प्रकार चकित और पराजित कर दिया करता था। वे उसे इतिहास के साथ एकाकार नहीं कर सकते थे और न अपने साथ उसकी संगति ही बैठा सकते थे। लेकिन जब वे अपनी संस्थाओं के प्रति श्रद्धा रखने लगे और पुनीत जीवन बिताने की चेष्टा करने लगे तो उनके सदाचार ने ही ईसा के चमत्कार के प्रत्येक सत्य, प्रत्येक शब्द को स्पष्ट कर दिया था।

मूसा, ज़ोरस्टर, मेनू, सुकरात की यह पुरातन पूजा हमारे मन में कितनी जल्दी बस जाती है। मैं उनके भीतर कोई प्राचीनता नहीं पाता। वे जितने उनके हैं उतने ही मेरे भी हैं।

समुद्र को पार करने या सदियों का अतिक्रमण किये बिना ही मैंने आदि सन्तों और संन्यासियों को देखा है। कई बार कोई व्यक्ति इतनी निश्चित और प्रेरक मुद्रा में मुझसे मिला है और भगवान् के नाम पर कल्याण-कार्य के लिए उसने इस स्वाभिमान के साथ याचना की है कि क्षण-भर में १६वीं सदी का सीमिओन, थेबायस और प्रथम के पूर्विस के चित्र मेरी स्मृति में झूल गए हैं।

मेजियन, ब्राह्मण, ड्रूइड और इंका के रूप में, जो पूर्व एवं पश्चिम में पुजारी हैं, वे अपने वैयक्तिक जीवन में कार्यान्वित करते हैं। लेकिन बालकों पर इस परम्परा का प्रभाव हानिकर पड़ता है। उनके साहस, उत्साह एवं स्वाभाविक विकास को प्रथाओं और विधि-विधानों के अस्वस्थ भार से कुचल

दिया जाता है। जब यह बालक होता है तो उसे विभिन्न देवताओं के नाम एवं पूजा के शुष्क नियमों की सीमित जानकारी के सिवाय अपने कानों में कोई उत्साह-उमंग नहीं रहती। किशोर के निर्माण, मेजुर की पूजा एवं आशीर्वाद के दोनों का महत्व उसे ज्ञात रहता है और आगे चलकर वह स्वयं एक अध्यापक बन जाता है। लेकिन कुछ बालक इस परम्परा के विरोधी बन जाते हैं और सारी परम्परा के दोषों का निरीक्षण करने लगते हैं। जब कोई विचारवान व्यक्ति अपने समय के अन्य विचारों का विरोध करता है तो वह पग-पग पर प्राचीन सुधारकों के मार्ग का ही अवलम्ब लेता है और सत्या-न्वेषण में उनकी भाँति ही नये रास्ते जाता है। यहीं उसे यह भी ज्ञान हो जाता है कि अन्धविश्वास के घेरे के लिए कितनी बड़ी नैतिक शक्ति की जरूरत रहती है। सुधार के कदमों पर अत्यन्त भयावह पतन का पीछा करता हुआ चलता है। संसार के इतिहास में कितनी बार अपने युग के लूथर को अपने स्वयं के घर में धर्म-श्रद्धा का पतन देखना पड़ता है! एक रोज़ मार्टिन लूथर की पत्नी ने उनसे कहा, "डॉक्टर, पोप के चेले रहकर हमने कितने भक्ति-भाव से और कितनी बार प्रार्थनाएँ की हैं! लेकिन अब जब हम प्रार्थना करते हैं तो वह कितनी विरली और शुष्क होती जाती है।"

विकासोन्मुख व्यक्ति पता लगाता है कि साहित्य, सभी पुराण-कथाओं और इतिहास की गहराई में उसकी कितनी सम्पत्ति भरी पड़ी है। वह मालूम करता है कि विचित्र और असम्भव परिस्थितियों का विवरण देने वाला कवि कोई असंतुलित व्यक्ति नहीं है; बल्कि विश्व-मानव ने स्वयं उसकी लेखनी से एक आत्मानुभव लिखा है जो जितना ही एक के लिए सत्य है उतना ही सबके लिए भी। उसके स्वयं का गोपनीय आत्म चरित्र वह कवि की पंक्तियों में अद्भुत सुगमता से पढ़ सकता है और यह उसके जन्म से पूर्व ही लिपिबद्ध किया जा चुका है, ईसप, होमर, हाफिज, अरस्तू चौसर व स्काट की कथाओं में वह एक के बाद एक अपने स्वयं के साहसिक कार्यों को चरितार्थ पाता है और उसकी जाँच भी कर लेता है।

यूनानियों की कहानियाँ खयाली-पुलाव होने के बजाय कल्पना की सही

रचनाएँ हैं और इसलिए वे विश्व-व्यापक हैं। प्रोमेथियस की कहानी कितने व्यापक अर्थों से पूर्ण है और कैसे शाश्वत औचित्य को व्यक्त करती है। यूरोपीय इतिहास का प्रथम अध्याय होने के अलावा (पोश आख्यान के अवगुण्ठन में इतिवृत्त, मशीन का निर्माण और औपनिवेशीकरण छिपे हुए हैं) वह आगामी युगों के धार्मिक विश्वास को स्पर्श करती हुई धर्म का इतिहास भी स्पष्ट करती है। पुरातन पुराण-साहित्य का 'ईसा' प्रोमेथियस ही है। वह मानव-मित्र है। भगवान के अनुचित 'न्याय' और मर्त्यों के बीच में खड़ा होकर वह तत्परता से इस प्रसंग के सारे कष्टों को सहता है। लेकिन जहाँ यह कहानी काल्विन की ईसाइयत से विभिन्न मार्ग ग्रहण करती है और प्रोमेथियस को जोव के विरुद्ध विद्रोही प्रदर्शित करती है वहाँ यह ऐसी मानसिक स्थिति का परिचय देती है, जो ईश्वरवाद के विकास में अक्सर देखने को मिलती है—जहाँ कहीं ईश्वरवाद का सिद्धान्त भद्दे और वस्तुनिष्ठ तरीके से सिखाया जाता है वहाँ इस मिथ्या के विरुद्ध मनुष्य की अपनी आत्म-रक्षा की भावना जाग उठती है—ऐसी मनःस्थिति में स्वभावतः ही ईश्वर के अस्तित्व के प्रति असन्तोष और ईश्वर-श्रद्धा में अविश्वास का भाव पैदा हो जाता है। यहाँ प्रोमेथियस की भाँति स्रष्टा की अग्नि को चुराने और उसके आधिपत्य से अलग एवं स्वतन्त्र रहने की चेष्टा की जाती है। 'प्रोमेथियस विक्टस' परम्परा में अविश्वास की मधुर कहानी है। युग-युगों के लिए उसके उत्कृष्ट नैतिक उपदेश भी कम सत्य नहीं हैं। कवियों ने कहा है कि अपोलो ने एडमिट्स के पशुओं की देख-भाल की थी। देवता अज्ञात रूप में मनुष्य के बीच आते हैं। लेकिन ईसा, सुकरात और शेक्सपियर ने ऐसा नहीं किया। हरक्यूलिज़ की पकड़ से एंटायस का दम घुट गया था, किन्तु जैसे ही प्रत्येक बार वह धरती माता का स्पर्श करता था उसकी शक्ति फिर से नई हो जाया करती थी। मनुष्य भी टूटा-फूटा दैत्य है और प्रकृति के सम्पर्क में आने की आदतों के द्वारा ही उसकी शारीरिक एवं मानसिक दुर्बलताएँ मिट जाती हैं। संगीत की शक्ति कविता की शक्ति, जो बहु प्रकृति के पंखों में उड़ानों की गति और तत्परता

भर देती है वही आरफियस की पहेली का अर्थ भी है। रूप के अनन्त आवर्तन द्वारा साम्य के दार्शनिक अनुभव की प्राप्ति ने उसे प्रोटियस का ज्ञान कराया। इससे अन्यथा मैं भी क्या हूँ, जो कल हँसा या रोया था, जो रात को शव की भाँति सोया था और आज सवेरे उठकर दौड़ने लगा है ? और मैं अपने आस-पास प्रोटियस के पुनर्जन्म के सिवाय और क्या देखता हूँ ? किसी भी प्राणी या घटना का नाम लेकर मैं अपने विचारों के प्रतीक खड़े कर सकता हूँ, क्योंकि प्रत्येक प्राणी सक्रिय या निष्क्रिय रूप में मनुष्य ही तो है। टैंटालस आपके व मेरे लिए सिर्फ एक नाम है। टैंटालस का अर्थ है विचारों के उन जलाशयों की पीने की असम्भवता जो हमारी आत्मा के सामने सदैव चमचमाते रहते हैं और जो हमें सदैव आमन्त्रित करते रहते हैं। आत्माओं का आवागमन कपोल-कथा नहीं है। मैं तो ऐसा ही चाहता था। लेकिन सत्य जो मेरे सामने है कि पुरुष एवं नारी आधे मानव हैं। खेत, जंगल, पानी एवं भूगर्भ के प्रत्येक पशु, पक्षी, कीड़े-मकोड़े और जलचर ने मनुष्य पर अपने अंगों एवं रूप की छाप छोड़ रखी है, 'ओ, भाई आत्मा का यह पतन रोक दो—निम्नतर योनियों में आत्मा को वापस मत जाने दो।' स्फिंक्स की पुरानी कथा भी हमारे लिए बड़ी उपादेय है—कहा जाता है कि वह सड़क के किनारे बैठकर यात्रियों से पहेलियाँ पूछा करती थी। यदि कोई उनके उत्तर नहीं दे सकता तो वह उसको जीवित ही निगल जाया करती थी। यदि वह उसकी पहेली का उत्तर दे देता तो स्फिंक्स मर जाती। और हमारा जीवन भी पंखों वाले कर्मों एवं घटनाओं की अनन्त उड़ान के सिवाय और क्या है ? मानवीय अन्तःकरण से प्रश्न पूछते हुए ये परिवर्तन अजीब विविधता में प्रकट होते हैं। जो व्यक्ति अपने गहरे विवेक के द्वारा समय के इन प्रश्नों का उत्तर नहीं दे सकता है तो उसे उनका गुलाम बनना पड़ता है। घटनाएँ उसे घेर लेती हैं; उस पर अत्याचार करती हैं और उसे अपनी निर्दिष्ट रेखा में इस प्रकार चलाती हैं कि वह यन्त्र-मात्र रह जाता है—ऐसे व्यक्ति में घटनाओं के दास बनने के कारण प्रकाश की वे सब चिनगारियाँ बुझ जाती हैं जो मनुष्य को सच्चे अर्थों में मनुष्य बनाये रखती हैं। लेकिन

अगर मनुष्य अपनी अन्तर्बुद्धि या भावनाओं के प्रति ईमानदार बना रहता है और एक ऊँची नस्ल से आने वाले प्राणी की हैसियत को स्मरण में लाते हुए यदि घटनाओं के आधिपत्य को अस्वीकार करता है—आत्मा के साथ दृढ़ता से सम्बद्ध रहता है और आन्तरिक तत्त्व को पहचान लेता है—तो घटनाएँ तत्काल ही अपने सही स्थानों में चली जाती हैं। क्योंकि वे अपने स्वामी को पहचानती हैं और स्वामि-भक्त वे इतनी होती हैं कि क्षुद्रातिक्षुद्र घटना भी अपने स्वामी का गौरव बढ़ाती है।

गेटे की 'हेलेना' में भी यही आकांक्षा देखिये कि प्रत्येक शब्द द्वारा एक निश्चित रूप किया जाना चाहिए। ऐसा प्रतीत होता है कि गेटे मानो यह कहता है कि किरोंस, ग्रिफिन्स, फोर्क्यास्, हेलेन और लेडा की ये शक्लें किसी-न-किसी रूप में मन पर निश्चित प्रभाव डालती हैं। ये सब वस्तुतः सनातन शक्लें हैं, लेकिन आज भी ये उतनी ही सत्य हैं जितनी कि प्रथम ओलिम्पाड के समय थीं। उन्हें काफी घुमा-फिराकर वह अपने व्यंग्य एवं हास्य को व्यक्त करता है और अपनी कल्पना के अनुरूप उन्हें वह शरीर देता है। यद्यपि यह काव्य स्वप्न की भाँति अस्पष्ट एवं असंगत है किन्तु लेखक के अन्य नाटकों की अपेक्षा यह कहीं अधिक आकर्षक है, क्योंकि यह सदैव परिचय में आने वाली नीरस प्रतिमाओं की बनिस्बत नई प्रतिमाएँ जुटाकर मन को अलौकिक सान्त्वना देती है—निर्माण या रचना के प्रसंग में पूरी स्वच्छन्दता देकर यह पाठकों की कल्पना को बड़ी सुखद स्फूर्ति देती है और इसके भीतर आकस्मिक आश्चर्य के तेज आघातों का जो अबाध क्रम है उससे तो पाठक मानो इसमें खो ही जाते हैं।

गायक की सीमित प्रकृति से अत्यन्त सबल विश्व-प्रकृति उसकी गरदन पर बैठती है और कवि की लेखनी से स्वयं लिखती है। फलतः जब कवि केवल प्रवृत्तियों की चंचलता और प्रणय की स्वच्छन्दता का वर्णन करने लगता है, तो सारा विवरण अकस्मात् ही एक प्रतीक-कथा का रूप ग्रहण कर लेता है। इसीलिए प्लेटो ने कहा है कि "कवि ऐसी महान् और ज्ञान-गाम्भीर बातें कहते हैं कि जिन्हें वे स्वयं नहीं समझते हैं।" मध्य युग की सब कथाएँ उस

हैं। लूसी श्राइटन तो मानो सच्चरित्रता की प्रतिमूर्ति ही है—क्योंकि सदाचरण सदैव सुन्दर होता है और संसार के शूलपथ से उसे गुजरना पड़ता है।

लेकिन मनुष्य के सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक इतिहास के अलावा दूसरा इतिहास भी उसके दैनिक जीवन में चरितार्थ होता चलता है—यह है बाह्य जगत् का इतिहास—इसमें भी उसका कर्म-सम्पर्क कम नहीं है। मनुष्य समय या काल का सारांश है और प्रकृति के साथ उसका गहरा सम्बन्ध भी सदैव रहता आया है। अपने अनुरागों को अनेक रूपों में विस्तृत करने में ही उसकी शक्ति का रहस्य है—इस प्रकार उसका जीवन जड़ एवं चेतन के सभी अंग-प्रत्यंगों के साथ गुँथा हुआ रहता है। प्राचीन रोम में सड़कें 'फोरम' (सभा-भवन) से प्रारम्भ होकर साम्राज्य के प्रत्येक प्रान्त के केंद्र को, पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण में जाती थीं और इस प्रकार फारस, स्पेन और ब्रिटेन के प्रत्येक बाजार सिपाहियों के लिए सुलभ हो जाते थे। इसी प्रकार मानव हृदय से मार्ग प्रारम्भ होकर प्रकृति की प्रत्येक वस्तु के हृदय तक पहुँचते हैं—अर्थात् मनुष्य अपने साम्राज्य भर में अपनी पहुँच के मार्ग फैला देता है। मनुष्य सम्बन्धों की गठरी है, जड़ों की एक ग्रन्थि है जिसका फल फूल यह संसार है। उसकी क्षमताएँ उससे बाहर की प्रकृति का प्रसंग लाती हैं और उसके द्वारा बसाये जाने वाले जंगल के लिए भविष्यवाणी करती हैं जैसे कि मछलियों के पंखों को देखकर पानी के अस्तित्व का पता लगता है या अंडे में ही उकाब के परों से पता लग जाना चाहिए कि हवा का बाहर अस्तित्व है। मनुष्य एक संसार के बिना जी नहीं सकता। लेकिन जो एक द्वीप के बन्दीगृह में रख दीजिए। उसकी क्षमताओं की सक्रियता के लिए वहाँ मनुष्य न रखिए, चढ़ने के लिए आल्प्स न हो और जीवन की बाजी लगाने का कोई कर्म-क्षेत्र मत रखिए—अब वह क्या वायु को पराजित करेगा? अब उसे विशाल देशों, घनी जन-संख्या, विविध कार्य-क्रमों और विरोधी शक्ति के बीच में खड़ा कीजिए और यहाँ नेपोलियन नामक व्यक्ति की शक्तियों का चमत्कार देखिए। लेकिन असली नेपोलियन को और भी व्यापक कर्म-क्षेत्र चाहिए। यह तो टालबट की छायामात्र है:

उसका वास्तविक कर्म-शीर्ष यहाँ नहीं है।
क्योंकि जो आपके सामने है वह तो उसका अत्यन्त छोटा अंश है,
और मानवता का गौणतम भाग है;
यदि उसका पूरा रूप यहाँ पर होता,
तो वह इतना व्यापक एवं ऊँचा है कि
उसे खड़ा भर करने के लिए आपकी छत छोटी है।"

—हेनरी षष्ठम

कोलम्बस को अपनी यात्रा के लिए एक सारा ग्रह चाहिए। न्यूटन एवं लेपलेस को करोड़ों युग और घने आकाशों की आवश्यकता है। कोई यह कह सकता है कि न्यूटन के मानस में सूर्य-मण्डल के गुरुत्वाकर्षण की भविष्यवाणी पहले से ही स्पष्ट हो गई थी। डेवी या गेलुसाक के दिमाग भी शैशव से ही कणों के राग-विराग का अन्वेषण में लग गए थे और प्राकृतिक विन्यास के नियमों के पूर्वाभास पाने की सूचना देते थे। क्या मानव के भ्रूण की आँख प्रकाश की भविष्य-वाणी नहीं करती है? येंडल के कान समरस ध्वनि का जादू पहले से व्यक्त नहीं करते क्या? क्या वाट, फूल्टन, विटेमोर और आर्कराइट की रचनात्मक उँगलियाँ कोमल एवं कठोर धातुओं की बनावट तथा पाषाण, जल और लड़की के गुणों की भविष्य-वाणी नहीं करतीं? क्या बालिका के मोहक गुण सभ्य समाज की सुरुचियों एवं सुसंस्कारों की पूर्व सूचना नहीं देते। यहाँ भी मनुष्य पर मनुष्य के कर्मों के प्रभाव की याद हमें दिलाई जाती है। मन अपने विचारों में युगों तक मँडराकर भी वह आत्म-ज्ञान नहीं प्राप्त कर पाता जिसे प्रेम का आवेश एक दिन में ही सिखा देता है। अत्याचार पर आग-बबूला होने या ओजस्वी भाषण सुनने या लाखों व्यक्तियों के साथ राष्ट्रीय समारोह या खतरे में भाग लेने के पूर्व हम भी अपने-आपके विषय में क्या जानते हैं? जिस प्रकार हम कल मिलने वाले व्यक्ति का चित्र आज नहीं बना सकते उसी प्रकार हम अपने अनुभव को भी समय से पूर्व व्यक्त नहीं कर सकते या यह नहीं कह सकते कि हमारे पथ में आने वाली नई वस्तु हमारी कौन सी शक्ति या भावना को जाग्रत कर देगी।

इन पारस्परिक विनिमय के कारणों के आगे मैं नहीं जाऊँगा। हम को सिर्फ यह दो बातें मान लेना ही काफी है कि मानस एक है और प्रकृति का उसके साथ विनिमयात्मक सम्बन्ध है—इन दो सत्यों के प्रकाश में इतिहास लिखा और पढ़ा जाना चाहिए।

इस प्रकार अगणित तरीकों से आत्मा प्रत्येक छात्र के लिए अपने कोष को केन्द्रित और निर्मित करती है। अनुभव के सारे क्रम से उसे भी गुज़रना पड़ेगा। वह प्रकृति की किरणों को एक केन्द्र में एकत्र करेगा। इतिहास तब एक नीरस पुस्तक नहीं रहेगी। मैं प्रत्येक बुद्धिमान एवं सच्चे व्यक्ति में अवतीर्ण होऊँगा। आपके द्वारा पढ़े गए ग्रन्थों की सूची को आप भाषाओं और पदवियों द्वारा नहीं बतायेंगे। जो जिन समयों में आप रहे हैं उनका अनुभव आप मुझे करायेंगे। एक व्यक्ति कीर्ति का मन्दिर बनेगा। जिस प्रकार कवियों ने वर्णित किया है वह व्यक्ति घटनाओं और अनुभवों में सर्वत्र रंगी हुआ देवी की भाँति विचरण करेगा—उसका स्वयं का रूप एवं अंग-प्रत्यंग अपनी स्वयं की प्रतिमा से सुसज्जित हो उठेगा और मैं उसमें आगामी जगत् के दर्शन करूँगा। उसके शैशव में मुझे स्वर्ण युग, ज्ञान के चमत्कार, आर्गो में जेसन की यात्रा (Argonautic Expedition) एब्राह्म को आमन्त्रण, मंदिर की इमारत ईसा का अवतरण, अन्धकार के युग, साहित्य का पुनरावतरण, धर्म-सुधार नये देशों की खोज, और मनुष्य में नये विज्ञान और नये क्षेत्रों का उद्घाटन—ये सब मुझे उस व्यक्ति के भीतर मिलेंगे वह प्रकृति का पुजारी होगा और अपने साथ सरल कुटीरों में प्रभातकालीन सितारों के वरदान और पृथ्वी एवं स्वर्ग के सभी लिपिबद्ध उपहार लेकर आयगा।

मेरी इस स्थापना में क्या आपको अहंकार दिखाई पड़ता है? तो मैं, जो कुछ लिखा है उसे अस्वीकार करता हूँ क्योंकि जिसे हम नहीं जानते उसे जानने का बहाना करने से क्या लाभ? लेकिन यह तो हमारे भाषण का दोष है कि हम एक वस्तु को झुठलाते हुए ही दूसरी की स्थापना करते दिखाई देते हैं। मैं अपनी वास्तविक जानकारी को बहुत सस्ती समझता हूँ। दीवार पर जाते हुए चूहे को सुनिये, झाड़ियों पर छिपकली को देखिये, आपके

उसका वास्तविक कर्म-शौर्य यहाँ नहीं है।
क्योंकि जो आपके सामने है वह तो उसका अत्यन्त छोटा अंश है,
और मानवता का गौणतम भाग है;
यदि उसका पूरा रूप यहाँ पर होता,
तो वह इतना व्यापक एवं ऊँचा है कि
उसे खड़ा भर करने के लिए आपकी छत छोटी है।"

—हेनरी पष्ठम

कोलम्बस को अपनी यात्रा के लिए एक सारा ग्रह चाहिए। न्यूटन एवं लेपलेस को करोड़ों युग और घने आकाशों की आवश्यकता है। कोई यह कह सकता है कि न्यूटन के मानस में सूर्य-मण्डल के गुरुत्वाकर्षण की भविष्यवाणी पहले से ही स्पष्ट हो गई थी। डेवी या गेलुसाक के दिमाग भी शैशव से ही कणों के राग-विराग का अन्वेषण में लग गए थे और प्राकृतिक विन्यास के नियमों के पूर्वाभास पाने की सूचना देते थे। क्या मानव के भ्रूण की आँख प्रकाश की भविष्य-वाणी नहीं करती है ? येडल के कान समरस ध्वनि का जादू पहले से व्यक्त नहीं करते क्या ? क्या वाट, फूल्टन, विटेमोर और आर्कराइट की रचनात्मक उँगलियाँ कोमल एवं कठोर धातुओं की बनावट तथा पाषाण, जल और लड़की के गुणों की भविष्य-वाणी नहीं करतीं ? क्या बालिका के मोहक गुण सभ्य समाज की सुरुचियों एवं सुसंस्कारों की पूर्व सूचना नहीं देते। यहाँ भी मनुष्य पर मनुष्य के कर्मों के प्रभाव की याद हमें दिलाई जाती है। मन अपने विचारों में युगों तक मँडराकर भी वह आत्म-ज्ञान नहीं प्राप्त कर पाता जिसे प्रेम का आवेश एक दिन में ही सिखा देता है। अत्याचार पर आग-बबूला होने या ओजस्वी भाषण सुनने या लाखों व्यक्तियों के साथ राष्ट्रीय समारोह या खतरे में भाग लेने के पूर्व हम भी अपने-आपके विषय में क्या जानते हैं ? जिस प्रकार हम कल मिलने वाले व्यक्ति का चित्र आज नहीं बना सकते उसी प्रकार हम अपने अनुभव को भी समय से पूर्व व्यक्त नहीं कर सकते या यह नहीं कह सकते कि हमारे पथ में [illegible] को जाग्रत कर देगी।

इस पारस्परिक विनिमय के कारणों के आगे मैं नहीं जाऊँगा। हम को सिर्फ यह दो बातें जान लेना ही काफी है कि मानस एक है और प्रकृति का उसके साथ विनिमयात्मक सम्बन्ध है—इन दो सत्यों के प्रकाश में इतिहास लिखा और पढ़ा जाना चाहिए।

इस प्रकार अगणित तरीकों से आत्मा प्रत्येक छात्र के लिए अपने कोष को केन्द्रित और निर्मित करती है। अनुभव के सारे क्रम से उसे भी गुजरना पड़ेगा। वह प्रकृति की किरणों को एक केन्द्र में एकत्र करेगा। इतिहास तब एक नीरस पुस्तक नहीं रहेगी। मैं प्रत्येक बुद्धिमान एवं सच्चे व्यक्ति में अवतीर्ण होऊँगा। आपके द्वारा पढ़े गए ग्रन्थों की सूची को आप भाषाओं और पदवियों द्वारा नहीं बतायेंगे। जो जिन समयों में आप रहे हैं उनका अनुभव आप मुझे करायेंगे। एक व्यक्ति कीर्ति का मन्दिर बनेगा। जिस प्रकार कवियों ने वर्णित किया है वह व्यक्ति घटनाओं और अनुभवों में सर्वत्र रंगी हुआ देवी की भाँति विचरण करेगा—उसका स्वयं का रूप एवं अंग-प्रत्यंग अपनी स्वयं की प्रतिभा से सुसज्जित हो उठेगा और मैं उसमें आगामी जगत् के दर्शन करूँगा। उसके शैशव में मुझे स्वर्ण युग, ज्ञान के चमत्कार, आर्गो में जेसन की यात्रा (Argonautic Expedition) एब्राहम को आमन्त्रण, मंदिर की इमारत ईसा का अवतरण, अन्धकार के युग, साहित्य का पुनरावतरण, धर्म सुधार नये देशों की खोज, और मनुष्य में नये विज्ञान और नये क्षेत्रों का उद्घाटन—ये सब मुझे उस व्यक्ति के भीतर मिलेंगे वह प्रकृति का पुजारी होगा और अपने साथ सरल कुटीरों में प्रभातकालीन सितारों के वरदान और पृथ्वी एवं स्वर्ग के सभी लिपिबद्ध उपहार लेकर आयगा।

मेरी इस स्थापना में क्या आपको अहंकार दिखाई पड़ता है? तो मैं, जो कुछ लिखा है उसे अस्वीकार करता हूँ क्योंकि जिसे हम नहीं जानते उसे जानने का बहाना करने से क्या लाभ? लेकिन यह तो हमारे भाषण का दोष है कि हम एक वस्तु को झुठलाते हुए ही दूसरी की स्थापना करते दिखाई देते हैं। मैं अपनी वास्तविक जानकारी को बहुत सस्ती समझता हूँ। दीवार पर जाते हुए चूहे को सुनिये, झाड़ियों पर छिपकली को देखिये, आपके

: ६ :

राजनीति

राज्य-सम्बन्धी विषयों की चर्चा करते समय हमें यह न भूलना चाहिए राजकीय समस्याएँ आदिकाल से नहीं चली आ रही हैं, यद्यपि वे हमारे . . से पूर्व मौजूद थीं, कि वे एक श्रेष्ठतर नागरिक नहीं हैं; कि इनमें से प्रत्येक संस्था किसी समय केवल एक व्यक्ति के कार्यों की ही उपज थी; कि प्रत्येक नियम, प्रत्येक रीति किसी एक विशेष कार्य को सम्पन्न करने के लिए मानव की साधन-मात्र थी; कि सब संस्थाओं की नकल की जा सकती है और उन्हें बदला भी जा सकता है; कि उतनी ही अच्छी या उससे भी बेहतर नई संस्थाएँ कायम की जा सकती हैं। युवा नागरिक के लिए समाज एक भ्रम है। यह उसके सामने अविचल रूप में अवस्थित है जिसके मध्य में विभिन्न नाम व्यक्ति और संस्थाएँ बलूत के पेड़ों की भाँति बद्धमूल हैं, जिसके चारों ओर सभी अपने-आपको अच्छी-से-अच्छी सम्भव अवस्था में व्यवस्थित कर लेते हैं। किन्तु प्रौढ़ राजनेता जानता है कि समाज एक तरल पदार्थ की मानिन्द है; वहाँ इस प्रकार का कोई भी केन्द्र या मूल नहीं है, पर कोई भी कण यकायक हलचल का केन्द्र बनकर सारी व्यवस्था को अपने चारों ओर घूमने के लिए बाध्य कर सकता है; जैसे कि पिसिस्ट्रेटस या क्रोमवेल के समान दृढ़ संकल्प वाला प्रत्येक व्यक्ति कुछ समय के लिए और प्लेटो या पॉलस-जैसा सत्य अनुयायी प्रत्येक व्यक्ति सदैव करता है। किन्तु राजनीति आवश्यक आधारों पर स्थिर है और उसके साथ लघुता का व्यवहार नहीं

किया जा सकता। गणतन्त्रों में ऐसे युवा नागरिकों की कमी नहीं है कि जिनका विश्वास है कि कानूनों से ही नगर का निर्माण होता है कि रहन-सहन के रीति-रिवाज और जनता के काम-धन्धों से सम्बन्धित नीतियों में गम्भीर संशोधन तथा व्यापार, शिक्षा और धर्म आदि में परिवर्तन वोटों से किया जा सकता है, कि कोई भी कदम, चाहे वह बुरा हो, जनता पर थोपा जा सकता है यदि केवल उसे कानून बनाने के लिए पर्याप्त वोट मिल जायँ। किन्तु बुद्धिमान् लोग जानते हैं कि मूर्खतापूर्ण कानून एक बालू की रस्सी के समान है जो ऐंठते ही नष्ट हो जाती है; कि राज्य को नागरिक के चरित्र तथा उसकी प्रगति का नेतृत्व न करके अनुसरण करना चाहिए; कि सम्पति हड़पने वाला सबसे अधिक बलशाली व्यक्ति जल्दी ही नष्ट हो जाता है; और केवल वे, जो विचारों के आधार पर निर्माण करते हैं, अनन्त काल के लिए निर्माण करते हैं; तथा शासन का प्रचलित रूप जनता के विचारों पर निर्भर है और उसी की अभिव्यक्ति है। कानून केवल एक स्मृति-पत्र है। हम अन्ध-विश्वासी हैं तथा व्यवस्था को बहुत-कुछ महत्त्व देते हैं : व्यक्ति के चरित्र में जितना जीवन है वही इसकी शक्ति है। व्यवस्था वहाँ यह कहने के लिए खड़ी है कि कल हम इस बात पर सहमत थे, आज तुम इस वस्तु के विषय में कैसा अनुभव करते हो ? हमारी व्यवस्था एक मुद्रा के समान है जिस पर हम अपनी ही मोहर लगाते हैं किन्तु यह शीघ्र ही न पहचानी जा सकने वाली स्थिति में हो जाती है और कालक्रम में टकसाल वापस चली आएगी। प्रकृति न जनतन्त्रवादी है, और न सीमित सामन्तवादी है, किन्तु निरंकुश स्वेच्छाचारिणी है, और वह अपने पुत्रों (मनुष्यों) द्वारा अपनी शक्ति के किसी भी विरोध से बेवकूफ नहीं बनेगी, और जैसे-जैसे जनता का मस्तिष्क अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण होता जाता है, कानून की किताब कठोर और अस्पष्ट होती देखी गई है। यह स्पष्ट भाषा में नहीं बोलती।

किन्तु इस दौरान में आम मस्तिष्क की शिक्षा कभी नहीं रुकती। सत्य और सरल व्यक्तियों का चिन्तन दूरदर्शी होता है। सुकुमार कवित्वमय युवक आज जो स्वप्न देखता है, जिसकी प्रार्थना करता है और जिसे निश्चित करता

है किन्तु उसे उच्च स्वर में व्यक्त करने के कारण होने वाले उपहास से दूर रहना चाहता है, यही बातें कुछ समय बाद सार्वजनिक सभाओं के प्रस्ताव का विषय होंगी; बाद में संघर्ष तथा युद्ध द्वारा यही बातें सामूहिक शिकायतों और अधिकारों के बिल का रूप लेंगी, और अन्त में इन्हीं बातों के आधार पर सर्वोन्नत नियम बनाये जायेंगे और सौ वर्ष का शासन तब तक चलता रहेगा, जब तक कि इसके स्थान पर नई प्रार्थना और नए विश्व नहीं आ जाते। राज्य का इतिहास मोटी रेखाओं में विचार की प्रगति अंकित करता है तथा संस्कृति व अभिलाषाओं की सुकुमारता का दूर से अनुसरण करता है।

राजनीति की परिभाषा, जिसने मनुष्य के मस्तिष्क पर अधिकार कर लिया है तथा जिसे उन्होंने अपने कानूनों व अपनी क्रांतियों में सर्वोत्तम सम्भव रूप में व्यक्त किया है, व्यक्तियों तथा सम्पत्ति को दो वस्तु मानती है, जिनकी रक्षा के लिए सरकार की आवश्यकता है। मनुष्यों को समान प्रकृति के गुण वाले होने के नाते समान अधिकार प्राप्त हैं। यही हित अपनी पूरी शक्ति के साथ जनतन्त्र की माँग करता है। जबकि मनुष्य होने के नाते सभी के अधिकार समान हैं, उनकी युक्तियों के आधार पर सम्पत्ति-विषयक उनके अधिकार अत्यधिक असमान हैं। एक मनुष्य के पास केवल अपने कपड़े हैं तथा दूसरा एक देश का मालिक है। यह घटना जो मुख्यतः व्यक्तियों की चतुरता व गुणों पर जिसकी कई क्रमिक अवस्थाएँ हैं—तथा पैतृक सम्पत्ति पर निर्भर है, असमान रूप में घटित होती है और इसके अपने अधिकार भी असमान होते हैं। व्यक्तिगत अधिकार, जो विश्व में समान हैं, एक ऐसी सरकार की माँग करते हैं जो जन-गणना के अनुपात पर निर्मित हो; सम्पत्ति-पतियों के तथा जायदादों के अनुपात के आधार पर सरकार की माँग करती है। लेबॉन, जिसके पास भेड़ों के झुण्ड हैं, चाहता है कि उनकी देख-भाल सीमान्त का एक अफसर करे ताकि कहीं मिडिए-माईट उन्हें न ले जाय; इसके लिए वह कर भी देता है। जेकोब के पास भेड़ों का कोई झुण्ड नहीं, उसे मिडियनाईट का कोई भय नहीं और वह अफसर को कोई कर नहीं देता। यह उचित जाना गया है कि लेबॉन तथा

अच्छाई में इसकी लगन है, न किसी अपराध पर यह प्रतिबन्ध लगाता है, न किसी उदार नीति को प्रस्तावित करता है, न निर्माण करता है, न लिखता है, न कला चाहता है, न धर्म को पोषण करता है, न स्कूलों की स्थापना करता है, न विज्ञान को प्रोत्साहित करता है, न गुलाम को मुक्त करता है, न गरीब को या इण्डियन को या किसी निष्क्रांत को मित्र बनाता है। संसार किसी भी दल से, जब वह सत्ता में हो, विज्ञान, कला या मानवता के लिए राष्ट्र के तमाम साधनों को देखते हुए किसी भी प्रकार के लाभ की आशा नहीं कर सकता।

मैं इन दोषों के लिए अपने गणतन्त्र के प्रति नैराश्य प्रकट नहीं करता। हम अवसर की किसी लहर पर निर्भर नहीं हैं। क्रोधी दलों के संघर्ष में मानव-प्रकृति सदैव अपने को सन्तुष्ट पाती है, जैसे कि बोहनी ने में अपराधी के बच्चों में भी अन्य बच्चों के समान ही अच्छा नैतिक विचार पाया गया है। सामन्तशाही राज्यों के नागरिक हमारी जनतन्त्री व्यवस्थाओं को अराजकता में पड़ता देख कर सतर्क हो उठे हैं, तथा हमसे अधिक सशंक तथा वृद्ध यूरोपियनों से हमारी अपनी अशान्तिपूर्ण स्वतन्त्रता को भय के साथ देखना सीख रहे हैं। ऐसा कहा जाता है कि हमारे संविधान के निर्माण करने की स्वच्छन्दता में तथा जनता के विचारों की अराजकता में कोई हमें सहारा नहीं मिल सकता। और एक विदेशी विचारक का खयाल है कि हमारे यहाँ के विवाहों की पवित्रता में उसे सुरक्षा दिखाई देती है; दूसरा सोचता है कि यह सुरक्षा काल्विनवाद में मिलती है। फिशर एम्स ने लोकप्रिय सुरक्षा की अधिक अच्छी व्याख्या की है। उसने एक सामन्तवादी राज्य व एक गणतन्त्र की तुलना करते हुए कहा है कि सामन्तवादी राज्य एक व्यापारी जहाज की भाँति है, जो अच्छी तरह चलता है किन्तु किसी समय चट्टान से टकराकर डूब जायगा; जब कि गणतन्त्र एक बेड़ा है जो कभी भी नहीं डूबेगा किन्तु आपके पैर सदैव पानी में रहेंगे। वस्तुओं के कानूनों के साथ मैत्री रखने पर कोई भी रूप खतरनाक महत्त्व प्राप्त नहीं कर सकता। उस समय तक इस बात से कोई अन्तर नहीं पड़ता कि वायुमण्डल का

जितना भार हमारे ऊपर दबाव डाल रहा है जब तक कि उतना ही दबाव हमारे भीतर उसे रोकता है। इस पिंड में चाहे हजार गुनी वृद्धि कर दो, यह हमें तब तक नष्ट नहीं कर सकता जब तक कि प्रतिक्रिया क्रिया के बराबर है। दो ध्रुवों, दो शक्तियों, केन्द्र के तथा उससे बाहर के आकर्षण का तथ्य विश्व-व्यापी है तथा प्रत्येक शक्ति अपनी हलचल से दूसरी शक्ति को विकसित करती है। जंगली स्वतन्त्रता लौह-आत्मा का विकास करती है। स्वतन्त्रता का अभाव कानून व मर्यादा को दृढ़ करने पर चेतना को जड़ कर देता है। 'लिंच लॉ' (हब्शियों को जिंदा मारने का कानून) केवल वहीं होता है जहाँ नेताओं में अधिक कठोरता व अपने-आपको बनाए रखने की भावना अधिक होती है। एक भीड़ कभी भी स्थायी नहीं हो सकती, प्रत्येक व्यक्ति का हित इसी में है कि यह भीड़ न रहे और केवल न्याय ही सबको सन्तुष्ट करता है।

हमें कानूनों से प्रकट होने वाली लाभपूर्ण आवश्यकता पर अनन्त विश्वास रखना चाहिए। मानव-प्रकृति उनमें भी उतनी ही विशेषता से अपने-आपको प्रकट करती है जितनी कि प्रतिमाओं या गीतों या रेल की लाइनों में; और राष्ट्रों के विधान का स्तर सार्वजनिक चेतना का प्रतिलेख होगा। सरकारें मनुष्यों की नैतिकता के सारूप्य से उत्पन्न हुई हैं। एक कारण दूसरे का तथा अन्य सबों का कारण देखा गया है। एक बीच का रास्ता है, जो सब दलों को सन्तुष्ट करता है चाहे वे कभी भी अपने लिए विशेष दृढ़ न रहे हों। प्रत्येक व्यक्ति अपने साधारण अधिकारों तथा कार्यों की अपने मस्तिष्क में किये गए निर्णयों के आधार पर स्वीकृति पाता है, जिसे वह सत्य तथा पवित्रता का नाम देता है। इन निर्णयों में समस्त नागरिक एक पूर्ण समझौता पाते हैं, और केवल इन्हीं में; इसमें नहीं कि खाने के लिए क्या अच्छा है, पहनने के लिए क्या अच्छा है, समय का क्या सदुपयोग है या कौन कितनी जमीन या सार्वजनिक सहायता का हकदार है। इस सत्य तथा न्याय की भूमि को मापने व जीवन तथा सम्पत्ति की रक्षा करने में मनुष्य प्रयुक्त करने का प्रयत्न करता है। इसमें सन्देह नहीं कि उनके

प्रथम प्रकार बेढंगे होते हैं। फिर भी सर्वाधिकारी प्रथम शासक होता है; या प्रत्येक सरकार एक अपवित्र धार्मिक सत्ता है। जिस विचार को लेकर प्रत्येक समुदाय का लक्ष्य अपने कानूनों को बनाना और उनमें संशोधन करना है, वह बुद्धिमान मनुष्य की इच्छा है। प्रकृति में समुदाय को मनुष्य नहीं मिल सकता और वह बुद्धिमान का शासन प्राप्त करने के लिए कपट द्वारा भद्दे किन्तु सच्चे प्रयत्न करता है, जैसे कि सारे व्यक्तियों से प्रत्येक कार्य पर मत लेना, या सबका प्रतिनिधित्व प्राप्त करने के लिए दोहरे मतों का प्रयोग करना, सर्वश्रेष्ठ नागरिकों को चुनना या किसी एक व्यक्ति को सरकार को सौंप-कर कार्य-क्षमता के लाभ व गृह-शान्ति को प्राप्त करना जोकि बाद में स्वयं अपने प्रतिनिधियों को चुन लेगा। शासन के तमाम रूप एक अनैतिक शासन के प्रतीक हैं, जो तमाम राजवंशों में समान रूप से पाया जाता है और जो वहाँ भी पूर्णतया अनैतिक है जहाँ दो आदमी हैं तथा वहाँ भी जहाँ केवल एक ही व्यक्ति है।

प्रत्येक मनुष्य की अपनी प्रकृति उसके लिए अपने साथियों के चरित्र का पर्याप्त विज्ञापन है। मेरा गलत और ठीक उनका ठीक और गलत है। जब मैं वह कार्य करता हूँ जो मेरे लिए उपयुक्त है तथा वह नहीं करता जो अनुपयुक्त है तो प्रायः मेरा पड़ोसी और मैं अपने साधनों पर सहमत हो जाते हैं और एक लक्ष्य के लिए संयुक्त रूप से कुछ समय के लिए कार्य करते हैं। किन्तु जब कभी मैं अपना प्रभुत्व अपने ऊपर अपर्याप्त पाता हूँ, तथा अपने पड़ोसी के निर्देशन का उत्तरदायित्व भी अपने ऊपर ले लेता हूँ तब मैं सत्य का उल्लंघन कर जाता हूँ और उसके साथ मेरे मिथ्या सम्बन्ध हो जाते हैं। मुझमें उसकी अपेक्षा इतनी अधिक चतुरता तथा शक्ति हो सकती है कि वह उचित रूप से अपनी गलती की भावना को व्यक्त नहीं कर सकता, किन्तु यह एक झूठ है और इससे मुझे और उसे दोनों को चोट पहुँचती है। प्रेम और प्रकृति एक कल्पित बात को कायम नहीं रख सकते, इसको कायम रखने या कार्यान्वित करने के लिए एक ... रक बल की आवश्यकता है। दूसरे के लिए भार उठा...

संसार की सरकारों में अत्यन्त कुरूपता के साथ विद्यमान है। यह वही चीज है जो एक या दो के जोड़े में मिलती है, उसका रूप केवल इतना स्पष्ट नहीं होता। मैं स्वयं अपने लिए आत्म-संयम के कार्य करने में तथा दूसरे को अपने विचारों पर चलने के लिए प्रेरित करने में बड़ा भारी अन्तर देखता हूँ, किन्तु जब मानव-जाति का एक चौथाई भाग मुझे यह बताने का भार अपने ऊपर ले लेता है कि मुझे क्या करना चाहिए तब मैं परिस्थितियों द्वारा अत्यन्त क्षुब्ध हो उनके आदेश की अनर्थता को इतनी स्पष्टता से शायद न देख सकूँ। इसलिए व्यक्तिगत उद्देश्यों के सामने तमाम सार्वजनिक उद्देश्य अस्पष्ट तथा विलक्षण जान पड़ते हैं, क्योंकि मनुष्य द्वारा अपने लिए बनाये गए कानून को छोड़कर अन्य कोई भी कानून उपहासास्पद होता है। अगर मैं अपने-आपको अपने बच्चे की जगह रखता हूँ और हम एक ही विचार करते हैं तथा एक ही प्रकार से देखते हैं कि वस्तुएँ इस प्रकार की या उस प्रकार की हैं, तो उसके तथा मेरे लिए एक ही कानून है। हम दोनों एक जगह हैं और दोनों ही कार्य करते हैं। किन्तु यदि मैं उसे विचार में लाए बिना उसके क्षेत्र में दखल देता हूँ और उसकी स्थिति को जानना चाहता हूँ या उसे यह या वह करने का आदेश देता हूँ तो वह कभी भी मेरी आज्ञा नहीं मानेगा। सरकारों का यही इतिहास है—एक मनुष्य जो-कुछ करता है वह दूसरे को बाँधने के लिए होता है। एक मनुष्य जो मुझसे परिचित नहीं हो सकता मेरे ऊपर कर लगाता है, दूर से ही मुझे देखकर अपनी मरजी के मुताबिक आदेश देता है कि मेरे श्रम का एक भाग इस या उस उद्देश्य में लगेगा—ऐसा वह मेरे अनुरूप नहीं अपितु अपनी इच्छा से करता है। परिणाम देखिए। तमाम ऋणों में एक कर ऐसा है जिसे मनुष्य देने के लिए सबसे कम तैयार हैं। सरकार के प्रति यह एक कैसा व्यंग्य है! लोग सोचते हैं कि उनको अपने धन की पूरी कीमत मिलती है—सिर्फ इन करों को छोड़कर।

अतः कम शासन हो तो अधिक अच्छा, कानून कम हों तो प्रदत्त-शक्ति भी कम होगी। औपचारिक सरकार के इस दोष का प्रत्युपाय व्यक्तिगत

चरित्र का प्रभाव व व्यक्ति का विकास है; प्रतिनिधि के स्थान पर प्रधान का आना है, बुद्धिमान मनुष्य का प्रकट होना है; जिसकी भी वर्तमान सरकार है, उसको मानना चाहिए, किन्तु है यह एक भद्दा अनुकरण। वह चीज, जिसे सब वस्तुएँ विकसित करने का प्रयत्न करती हैं तथा जिसके लिए स्वतन्त्रता, वृद्धि, समागम और क्रान्तियाँ होती हैं, चरित्र है, प्रवृत्ति द्वारा अपने सम्राट् का राज्याभिषेक करना हो तो उसका अन्त है। बुद्धिमान मनुष्य को शिक्षा देने के लिए राज्य कायम है अतः बुद्धिमान मनुष्य के प्रकट होने पर राज्य समाप्त हो जाता है। चरित्र के प्रकट होने पर राज्य अनावश्यक हो जाता है। बुद्धिमान मनुष्य ही राज्य है। उसे किसी सेना, किले या नौसेना की आवश्यकता नहीं; वह मनुष्यों से अत्यन्त प्रेम करता है; मित्र बनाने के लिए उसे रिश्वत, भोज या महल की जरूरत नहीं; किसी सुविधाजनक स्थान या किसी लाभदायक परिस्थिति की भी उसे जरूरत नहीं। उसे पुस्तकालय की भी आवश्यकता नहीं, क्योंकि उसने विचार नहीं किया है; किसी चर्च की भी उसे आवश्यकता नहीं, क्योंकि वह स्वयंसिद्ध है; किसी कानूनी पुस्तक की भी उसे जरूरत नहीं, क्योंकि वह खुद कानून बनाने वाला है; किसी धन की भी जरूरत नहीं, क्योंकि वह स्वयं मूल्य है; किसी मार्ग की भी उसे आवश्यकता नहीं, क्योंकि जहाँ कहीं भी वह है, अपने घर पर ही है; किसी अनुभव की आवश्यकता नहीं, क्योंकि सृष्टिकर्ता का जीवन उसमें से प्रस्फुटित होता है और उसकी आँखों द्वारा देखता है। उसके कोई व्यक्तिगत मित्र नहीं, क्योंकि जो तमाम आदमियों की प्रार्थना व पवित्रता को अपने तक खींचने की शक्ति रखता है उसे कुछ व्यक्तियों को अपने साथ एक चुना हुआ तथा कवित्वमय जीवन बिताने के लिए शिक्षित करने की आवश्यकता नहीं। मनुष्यों के साथ उसके सम्बन्ध एक देवता के समान हैं, उनकी स्मृति उनके लिए कथानक है, उसकी उपस्थिति लोहबान तथा फूल हैं।

हम समझते हैं कि हमारी सभ्यता मध्याह्न के सूर्य की भाँति परिपक्व हो चुकी है किन्तु अभी हम वास्तव में उषाकाल की स्थिति में ही हैं, अभी

तो कुत्तों ने भौंक देना ही शुरू किया है। हमारे बर्बर समाज में चरित्र का प्रभाव अभी अपनी प्रारम्भिक अवस्था में ही है। एक राजनीतिक शक्ति के रूप में, एक अधिकारी स्वामी के रूप में, जिसे सभी शासकों को उनकी गद्दियों से नीचे गिराना है। चरित्र के अस्तित्व को अभी लोगों को मान नहीं है। हालम तथा रिकार्डो ने इसे पूर्णतः छोड़ रखा है; वार्षिक रजिस्टर भी इस बारे में मौन है; 'कनवर्सेशन्स लेक्सीकन' ने भी इसका उल्लेख नहीं किया है, राष्ट्रपति के सन्देश या महारानी के भाषण में भी इसका ज़िक्र नहीं आया है, और फिर भी यह सर्वथा महत्त्वहीन नहीं है। प्रत्येक विचार, जिसका बुद्धि तथा पवित्रता से संसार में आविर्भाव होता है, संसार को परिवर्तित करता है। शक्तियों की सूची में योद्धा अपने तमाम सैन्य-समूहों व आडम्बरों के साथ अपनी कीमत की अनुपस्थिति जानते हैं। मैं समझता हूँ कि व्यापार तथा इच्छा के बीच का सारा संघर्ष इस स्थिरता को स्वीकार करता है और इन देशों में पाई हुई सफलताएँ केवल क्षुद्र संशोधन-मात्र हैं, एक अंजीर के पत्ते की भाँति हैं जिनके नीचे लज्जित आत्मा अपनी नग्नता को छिपाने का प्रयत्न करती है। मैं सभी दिशाओं में अनिश्चित उपासना देखता हूँ। इसका कारण यह है कि हम जानते हैं कि हमें कितना देना है और हम इस योग्यता के बदले में एक साधारण-सी प्रतिमा को दिखाने के लिए अधीर हैं। चरित्र को महान् बनाने के अधिकार की भावना हमारा पीछा कर रही है और हम इसके प्रति झूठे हैं। किन्तु हममें से हर एक में कुछ प्रतिमा है और वह कुछ लाभदायक या शानदार या भयंकर या प्रसन्न करने वाला कोई कार्य कर सकता है। यह हम अपने तथा दूसरों के प्रति एक क्षमा-भाव के तौर पर करते हैं, क्योंकि हम एक अच्छे व समान जीवन के स्तर पर नहीं पहुँच पाए हैं। किन्तु जिस समय हम इसे बलात् अपने साथियों के ध्यान में लाते हैं तो यह हमें सन्तुष्ट नहीं करता। इससे दूसरों की आँखों में धूल पड़ सकती है किन्तु हमारी अपनी प्रकृति को यह निष्कलंक नहीं रख सकता या हमें बाहर निर्द्वन्द्व घूमने की शान्ति प्रदान नहीं कर सकता। हमारी प्रतिमा एक प्रकार का प्रायश्चित्त है और हम अपने शाम–

चरित्र का प्रभाव व व्यक्ति का विकास है; प्रतिनिधि के स्थान पर प्रधान का आना है, बुद्धिमान मनुष्य का प्रकट होना है; जिसकी भी वर्तमान सरकार है, उसको मानना चाहिए, किन्तु है यह एक भद्दा अनुकरण। वह चीज, जिसे सब वस्तुएँ विकसित करने का प्रयत्न करती हैं तथा जिसके लिए स्वतन्त्रता, वृद्धि, समागम और क्रान्तियाँ होती हैं, चरित्र है, प्रवृत्ति द्वारा अपने सम्राट् का राज्याभिषेक करना हो तो उसका अन्त है। बुद्धिमान मनुष्य को शिक्षा देने के लिए राज्य कायम है अतः बुद्धिमान मनुष्य के प्रकट होने पर राज्य समाप्त हो जाता है। चरित्र के प्रकट होने पर राज्य अनावश्यक हो जाता है। बुद्धिमान मनुष्य ही राज्य है। उसे किसी सेना, किले या नौसेना की आवश्यकता नहीं; वह मनुष्यों से अत्यन्त प्रेम करता है; मित्र बनाने के लिए उसे रिश्वत, भोज या महल की जरूरत नहीं; किसी सुविधाजनक स्थान या किसी लाभदायक परिस्थिति की भी उसे जरूरत नहीं। उसे पुस्तकालय की भी आवश्यकता नहीं, क्योंकि उसने विचार नहीं किया है; किसी चर्च की भी उसे आवश्यकता नहीं, क्योंकि वह स्वयंसिद्ध है; किसी कानूनी पुस्तक की भी उसे जरूरत नहीं, क्योंकि वह खुद कानून बनाने वाला है; किसी धन की भी जरूरत नहीं, क्योंकि वह स्वयं मूल्य है; किसी मार्ग की भी उसे आवश्यकता नहीं, क्योंकि जहाँ कहीं भी वह है, अपने घर पर ही है; किसी अनुभव की आवश्यकता नहीं, क्योंकि सृष्टिकर्ता का जीवन उसमें से प्रस्फुटित होता है और उसकी आँखों द्वारा देखता है। उसके कोई व्यक्तिगत मित्र नहीं, क्योंकि जो तमाम आदमियों की प्रार्थना व पवित्रता को अपने तक खींचने की शक्ति रखता है उसे कुछ व्यक्तियों को अपने साथ एक चुना हुआ तथा कवित्वमय जीवन बिताने के लिए शिक्षित करने की आवश्यकता नहीं। मनुष्यों के साथ उसके सम्बन्ध एक देवता के समान हैं, उसकी स्मृति उनके लिए कथानक है, उसकी उपस्थिति लोहबान तथा फूल हैं।

हम समझते हैं कि हमारी सभ्यता मध्याह्न के सूर्य की भाँति परिपक्व हो चुकी है किन्तु अभी हम वास्तव में ऊषाकाल की स्थिति में ही हैं, अभी

तो मुर्गों ने बाँग देना ही शुरू किया है। हमारे जर्जर समाज में चरित्र का प्रभाव अभी अपनी प्रारम्भिक अवस्था में ही है। एक राजनीतिक शक्ति के रूप में, एक अधिकारी स्वामी के रूप में, जिसे सभी शासकों को उनकी गद्दियों से नीचे गिराना है। चरित्र के अस्तित्व का अभी लोगों को मान नहीं है। मालथस तथा रिकार्डो ने इसे पूर्णतः छोड़ रखा है; वार्षिक रजिस्टर भी इस बारे में मौन है; 'कनवर्सेशन्स लेक्सीकन' ने भी इसका उल्लेख नहीं किया है; राष्ट्रपति के सन्देश या महारानी के भाषण में भी इसका जिक्र नहीं आया है, और फिर भी यह सर्वथा महत्त्वहीन नहीं है। प्रत्येक विचार, जिसका बुद्धि तथा पवित्रता से संसार में आविर्भाव होता है, संसार को परिवर्तित करता है। शक्तियों की सूची में योद्धा अपने तमाम सैन्य-समूहों व आडम्बरों के साथ अपनी कीमत की अनुपस्थिति जानते हैं। मैं समझता हूँ कि व्यापार तथा इच्छा के बीच का सारा संघर्ष हम स्थिरता को स्वीकार करना है और इन क्षेत्रों में पाई हुई सफलताएँ केवल क्षुद्र संशोधन-मात्र हैं, एक अंजीर के पत्ते की भाँति है जिनके नीचे लज्जित आत्मा अपनी नग्नता को छिपाने का प्रयत्न करती है। मैं सभी दिशाओं में अनिश्चित उपासना देखता हूँ। इसका कारण यह है कि हम जानते हैं कि हमें कितना देना है और हम इस योग्यता के बदले में एक साधारण-सी प्रतिमा को दिखाने के लिए अधीर हैं। चरित्र को महान् बनाने के अधिकार की भावना हमारा पीछा कर रही है और हम इसके प्रति झूठे हैं। किन्तु हममें से हर एक में कुछ प्रतिमा है और वह कुछ लाभदायक या शानदार या भयकर या प्रसन्न करने वाला कोई कार्य कर सकता है। यह हम अपने तथा दूसरों के प्रति एक क्षमा-भाव के तौर पर करते हैं, क्योंकि हम एक अच्छे व समान जीवन के स्तर पर नहीं पहुँच पाए हैं। किन्तु जिस समय हम इसे बलात् अपने साथियों के ध्यान में लाते हैं तो यह हमें सन्तुष्ट नहीं करता। इससे दूसरों की आँखों में धूल पड़ सकती है किन्तु हमारी अपनी भृकुटि को यह निष्कलंक नहीं रख सकता या हमें बाहर निर्द्वन्द्व घूमने की शान्ति प्रदान नहीं कर सकता। हमारी प्रतिमा एक प्रकार का प्रायश्चित है और हम अपने शान-

दार त्याग को एक विशेष विनम्रता के साथ देखने के लिए विवश हैं, जैसे वह कुछ बहुत अच्छा हो और अन्य कार्यों-जैसा न हो, जैसे हमारी स्थायी शक्ति की वह एक उचित अभिव्यक्ति हो। अधिकांश योग्य व्यक्ति समाज में एक मौन अपील के साथ मिलते हैं। प्रत्येक ऐसा कहता जान पड़ता है कि "मैं यहाँ सब-कुछ नहीं हूँ।" सिनेटर तथा प्रेसीडेण्ट इतने ऊँचे स्थानों पर काफी कहर के साथ पहुँचे हैं। किन्तु इसलिए नहीं कि वे उस स्थान को अनुकूल समझते हैं बल्कि वास्तविक योग्यता के बदले में एक क्षमा-भाव दरसाते हुए हमारी दृष्टि में अपने व्यक्तित्व को प्रमाणित करने के लिए वे उन ऊँचे पदों पर हैं। यह ऊँचा पद उनकी गरीबी, रूक्षता तथा कठोर स्वभाव की क्षतिपूर्ति के रूप में है। जो कुछ वह कर सकते हैं उन्हें वह अवश्य करना चाहिए। जंगल के जानवरों की एक किस्म की तरह उनमें सिवाय एक दुम के पकड़ने योग्य और कोई चीज नहीं है लेकिन फिर भी उन्हें पेड़ों पर चढ़ना या जमीन पर रेंगना तो पड़ेगा ही। यदि एक मनुष्य इतना अधिक सम्पन्न स्वभाव का है कि वह सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों के साथ अपने सम्बन्ध स्थापित करके अपने चारों ओर के जीवन को अपने व्यवहार की उज्ज्वलता व मधुरता से शान्ति प्रदान कर सकता है तो क्या वह चुनाव लड़ने वाले दल तथा समाचार-पत्रों के समर्थन को अपने लिए जीत सकेगा या एक राजनीतिज्ञ-जैसे खोखले तथा आडम्बरपूर्ण सम्बन्ध रखने वाले व्यक्ति से सम्बन्ध स्थापित करने के लिए उत्सुक होगा ? निश्चय ही कोई भी ऐसा कपटी ईमानदार न हो सकेगा।

आज के समय की प्रवृत्तियाँ स्वायत्त-शासन के पक्ष में हैं तथा वह व्यक्ति को अपने ही संविधान के पुरस्कारों व दण्डों पर छोड़ देती हैं, जोकि हमारे विश्वास की अपेक्षा कहीं अधिक शक्ति के साथ कार्य करता है, जबकि हम अप्राकृतिक संयमों पर निर्भर करते हैं। आधुनिक इतिहास में इस दिशा में बहुत प्रगति हुई है। बहुत-कुछ बातें बुरी और शोचनीय हैं किन्तु विद्रोहियों के दोषों के कारण क्रान्ति की प्रकृति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, क्योंकि यह पूर्ण रूप से नैतिक बल है। इतिहा[illegible] दल ने इसे

नहीं अपनाया और न इसे अपनाया हो जा सकता है। यह व्यक्ति को सभी दलों से पृथक् कर देता है किन्तु साथ ही उसे जाति से संयुक्त भी कर देता है। यह व्यक्तिगत स्वतन्त्रता या सम्पत्ति की रक्षा की अपेक्षा अधिक उच्चतर अधिकारों को देने का वचन देता है। एक मनुष्य को कार्य पर लगने, विश्वास किये जाने, प्रेम किये जाने तथा सम्मानित होने का अधिकार है। प्रेम की शक्ति को राज्य के आधार के रूप में कभी भी परीक्षित नहीं किया गया है। हमें यह नहीं सोचना चाहिए कि यदि प्रत्येक प्रोटेस्टेण्ट की कुछ विशेष सामाजिक परम्पराओं में अपना योग देने के लिए बाध्य न किया जाय तो समस्त वस्तुएँ भ्रान्ति में पड़ जायेंगी; न इसमें ही सन्देह करना चाहिए कि बदकि बल के आधार पर निर्मित सरकार समाप्ति पर है सड़कें बन सकती हैं, डाक जा सकती है तथा परिश्रम का फल सुरक्षित हो सकता है। क्या हमारे तरीके इतने अधिक अच्छे हो चुके हैं कि तमाम प्रतियोगिताएँ व्यर्थ हो चुकी हैं? क्या मित्रों का एक राष्ट्र इससे अच्छे उपाय नहीं खोज सकता? दूसरी ओर अत्यधिक अनुदार व दरबोहों को संगीनों तथा बल पर आधारित पद्धति के समय से पूर्व ग्रुरू जाने के कारण किसी प्रकार का भय नहीं होना चाहिए। क्योंकि प्रकृति के नियमानुसार, जो सदैव हमारी इच्छा से श्रेष्ठ है, जब तक मनुष्य स्वार्थी होंगे बल पर अधिकारिणी सरकार भी सदैव बनी रहेगी, और जब वे शक्ति के विधान को अस्वीकार कर सकने के लिए पर्याप्त रूप में पवित्र हैं तो वे यह देखने के लिए काफी बुद्धिमान होंगे कि किस प्रकार डाकखानों, मार्गों, व्यापार तथा सम्पत्ति-विनिमय के कार्यों, अजायबघरों व पुस्तकालयों, कला-संस्थाओं व विज्ञान के सार्वजनिक उद्देश्यों को पूरा किया जा सकता है।

हम संसार की एक अत्यन्त दीनावस्था में रहते हैं और शक्ति के आधार पर निर्मित सरकारों का अनिच्छापूर्वक लोहा मानते हैं। सर्वाधिक धार्मिक एवं सर्वाधिक सभ्य राष्ट्रों के सर्वाधिक धार्मिक व संस्कृत व्यक्तियों में नैतिक भावना तथा वस्तुओं की एकता में पर्याप्त विश्वास नहीं है ताकि उन्हें समझाया जा सके कि समाज को अप्राकृतिक प्रतिबन्धों के बिना भी चलाया

दार तृण को एक विशेष विनम्रता के साथ देखने के लिए विवश हैं, जैसे वह कुछ बहुत अच्छा हो और अन्य कार्यों-जैसा न हो, जैसे हमारी स्थायी शक्ति की वह एक उचित अभिव्यक्ति हो। अधिकांश योग्य व्यक्ति समाज में एक मौन अपील के साथ मिलते हैं। प्रत्येक ऐसा कहता जान पड़ता है कि "मैं यहाँ सब-कुछ नहीं हूँ।" सिनेटर तथा प्रेसीडेण्ट इतने ऊँचे स्थानों पर काफी कद्र के साथ पहुँचे हैं। किन्तु इसलिए नहीं कि वे उस स्थान को अनुकूल समझते हैं बल्कि वास्तविक योग्यता के बदले में एक क्षमा-भाव दरसाते हुए हमारी दृष्टि में अपने व्यक्तित्व को प्रमाणित करने के लिए वे उन ऊँचे पदों पर हैं। यह ऊँचा पद उनकी गरीबी, रूक्षता तथा कठोर स्वभाव की क्षतिपूर्ति के रूप में है। जो कुछ वह कर सकते हैं उन्हें वह अवश्य करना चाहिए। जंगल के जानवरों की एक किस्म की तरह उनमें सिवाय एक दुम के पकड़ने योग्य और कोई चीज़ नहीं है लेकिन फिर भी उन्हें पेड़ों पर चढ़ना या जमीन पर रेंगना तो पड़ेगा ही। यदि एक मनुष्य इतना अधिक सम्पन्न स्वभाव का है कि वह सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों के साथ अपने सम्बन्ध स्थापित करके अपने चारों ओर के जीवन को अपने व्यवहार की उज्ज्वलता व मधुरता से शान्ति प्रदान कर सकता है तो क्या वह चुनाव लड़ने वाले दल तथा समाचार-पत्रों के समर्थन को अपने लिए जीत सकेगा या एक राजनीतिज्ञ-जैसे खोखले तथा आडम्बरपूर्ण सम्बन्ध रखने वाले व्यक्ति से सम्बन्ध स्थापित करने के लिए उत्सुक होगा? निश्चय ही कोई भी ऐसा कपटी ईमानदार न हो सकेगा।

आज के समय की प्रवृत्तियाँ स्वायत्त-शासन के पक्ष में हैं तथा वह व्यक्ति को अपने ही संविधान के पुरस्कारों व दण्डों पर छोड़ देती हैं, जोकि हमारे विश्वास की अपेक्षा कहीं अधिक शक्ति के साथ कार्य करता है, जबकि हम अप्राकृतिक संयमों पर निर्भर करते हैं। आधुनिक इतिहास में इस दिशा में बहुत प्रगति हुई है। बहुत-कुछ बातें बुरी और शोचनीय हैं किन्तु विद्रोहियों के दोषों के कारण क्रान्ति की प्रकृति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, क्योंकि यह पूर्ण रूप से नैतिक बल है। इतिहास में किसी भी दल ने इसे

नहीं अपनाया और न इसे अपनाया ही जा सकता है। यह व्यक्ति को सभी दलों से पृथक् कर देता है किन्तु साथ ही उसे जाति से संयुक्त भी कर देता है। यह व्यक्तिगत स्वतन्त्रता या सम्पत्ति की रक्षा की अपेक्षा अधिक उच्चतर अधिकारों को देने का वचन देता है। एक मनुष्य को कार्य पर लगने, विश्वास किये जाने, प्रेम किये जाने तथा सम्मानित होने का अधिकार है। प्रेम की शक्ति को राज्य के आधार के रूप में कभी भी परीक्षित नहीं किया गया है। हमें यह नहीं सोचना चाहिए कि यदि प्रत्येक प्रोटेस्टेण्ट को कुछ विशेष सामाजिक परम्पराओं में अपना योग देने के लिए बाध्य न किया जाय तो समस्त वस्तुएँ भ्रान्ति में पड़ जायेंगी; न इसमें ही सन्देह करना चाहिए कि जबकि बल के आधार पर निर्मित सरकार समाप्ति पर है सड़कें बन सकती हैं, डाक आ सकती है तथा परिश्रम का फल सुरक्षित हो सकता है। क्या हमारे तरीके इतने अधिक अच्छे हो चुके हैं कि तमाम प्रतियोगिताएँ व्यर्थ हो चुकी हैं? क्या मित्रों का एक राष्ट्र इससे अच्छे उपाय नहीं खोज सकता? दूसरी ओर अत्यधिक अनुदार व डरपोकों को संगीनों तथा बल पर आधारित पद्धति के समय से पूर्व ख़त्म जाने के कारण किसी प्रकार का भय नहीं होना चाहिए। क्योंकि प्रकृति के नियमानुसार, जो सदैव हमारी इच्छा से श्रेष्ठ है, जब तक मनुष्य स्वार्थी होंगे बल पर अधिकारिणी सरकार भी सदैव बनी रहेगी, और जब वे शक्ति के विधान को अस्वीकार कर सकने के लिए पर्याप्त रूप में पवित्र हैं तो वे यह देखने के लिए काफी बुद्धिमान होंगे कि किस प्रकार डाकखानों, मार्गों, व्यापार तथा सम्पत्ति-विनिमय के कार्यों, अजायबघरों व पुस्तकालयों, कला-संस्थाओं व विज्ञान के सार्वजनिक उद्देश्यों को पूरा किया जा सकता है।

हम संसार की एक अत्यन्त दीनावस्था में रहते हैं और शक्ति के आधार पर निर्मित सरकारों का अनिच्छापूर्वक लोहा मानते हैं। सर्वाधिक धार्मिक एवं सर्वाधिक सभ्य राष्ट्रों के सर्वाधिक धार्मिक व संस्कृत व्यक्तियों में नैतिक भावना तथा वस्तुओं की एकता में पर्याप्त विश्वास नहीं है ताकि उन्हें समझाया जा सके कि समाज को अप्राकृतिक प्रतिबन्धों के बिना भी चलाया

जा सकता है; जैसे कि सूर्य-मण्डल चलता है या जैसे कि एक नागरिक जेल या कैद का संकेत किये बिना ही एक अच्छा पड़ोसी हो सकता है। विचित्र बात यह है कि किसी भी व्यक्ति का कभी भी सदाचार की शक्ति में इतना विश्वास नहीं था जो उसे राज्य का औचित्य तथा प्रेम के सिद्धान्तों पर व्यापक रूप में पुनर्निर्माण करने के लिए प्रोत्साहित करता। वे सभी, जिन्होंने इस प्रकार की व्यवस्था में आस्था दिखाने का बहाना किया है, आंशिक सुधारक रहे हैं और उन्होंने किसी-न-किसी रूप में बुरे राज्य की महत्ता को स्वीकार किया है। मुझे कोई भी ऐसा व्यक्ति स्मरण नहीं आता जिसने अपनी नैतिक प्रवृत्ति के सरल कारणवश कानूनों की शक्ति मानने से इन्कार किया हो। इस प्रकार के बुद्धि तथा विश्वासयुक्त उद्देश्यों को केवल हवाई चित्र के रूप में देखने के अतिरिक्त उन पर अधिक विचार नहीं किया जाता। यदि उन्हें प्रदर्शित करने वाला व्यक्ति उन्हें व्यावहारिक समझता है तो वह विद्वानों तथा धार्मिक व्यक्तियों को निराश करता है; और कुशल-पुरुष तथा ऊँचे विचारों की स्त्रियाँ उसके प्रति अपनी घृणा छिपाए बिना नहीं रह सकतीं। प्रकृति भी नवयुवकों का हृदय इस उत्साह से कम नहीं भरती रहती, और अब इस प्रकार के व्यक्ति हैं—यदि मैं बहु वचन की संख्या में कह सकता हूँ तो मैं और अधिक अच्छी तरह कहूँगा कि मैं अभी एक ऐसे व्यक्ति से बातचीत कर रहा था जिसे किसी भी विपरीत अनुभव का दबाव क्षण-भर को भी यह असम्भव प्रतीत नहीं होने देगा कि हजारों मनुष्य सम्भवतः परस्पर सर्वोत्कृष्ट व सबसे सरल भावनाओं का प्रयोग कर सकते हैं जैसा कि मित्रों की एक मण्डली या प्रेमियों का जोड़ा भी आपस में कर सकता है।

शिक्षा

बौद्धिक क्षमता का नया स्तर किसी भी मूल्य पर सस्ता प्रतीत होता है। संसार की उपयोगिता यही है कि मनुष्य उसके नियमों को जान सके। मनुष्य जाति ने बड़े विवेक के साथ इस शर्त को पूरा किया है। इसकी पूर्ति के लिए उसने सम्पत्ति को साधन बनाया है और मनुष्यत्व को साध्य। मापा तो सदैव विवेकपूर्ण होती ही है।

इसीलिए मैं न्यू इंगलैण्ड की सराहना करता हूँ; क्योंकि, संसार में यही ऐसा देश है जहाँ शिक्षा के लिए अत्यन्त मुक्तहस्त से अर्थ व्यय किया गया है। इन उपनिवेशों के शिलान्यास के समय हमने जो योजना कार्यान्वित की थी वह (मुझे कहना चाहिए कि वह संसार में अन्यतम थी) अपनी महत्ता में ऐसी क्रान्तिकारिणी थी कि अन्यत्र विप्लव समझकर उसका प्रतिरोध किया जा सकता था। प्रारम्भ से ही हमने इस देश की यह भाग्यलिपि घोषित की है कि एक निर्धन व्यक्ति, जो भूखों मरते हुए भी कानून के प्रतिबन्ध के कारण अनाज की एक बाली न ले सके, जो सर्दी में ठिठुरते अपने पैरों के लिए एक जोड़ी जूता भी न ले सके, वह यह अधिकार पा जाता है कि वह धनवान की जेब में हाथ डाले और कहे कि तुम्हें मुझे शिक्षित बनाना है— अपनी इच्छा के अनुसार नहीं, बल्कि मेरी इच्छा के अनुसार; और केवल प्राथमिक शिक्षा ही नहीं, लेकिन इससे भी आगे, भाषाओं, विभिन्न विज्ञानों एवं उपयोगी और ललित कलाओं की शिक्षा भी तुम्हें मुझे देनी होगी।

है तब भी हमें कोई प्रोत्साहन नहीं मिलता। शिक्षा तो मनुष्य की भाँति ही व्यापक होनी चाहिए। मनुष्य के सारे तत्त्वों को पोषण और प्रदर्शन मिलना चाहिए। यदि वह निपुण है तो शिक्षा से उसका नैपुण्य स्पष्ट होना चाहिए। यदि वह अपने तीव्र विचारों से मनुष्यों को विभक्त करने की क्षमता रखता हो शिक्षा को उसे व्यक्त और तीक्ष्ण करना चाहिए। यदि वह अपनी समन्वयात्मक अनुरक्तियों द्वारा समाज की संधियों को जोड़ने में समर्थ हो तो जल्दी ही यह सामर्थ्य कार्य रूप में परिणत होनी चाहिए। विनोदी, अस्थिर, उदार, कारीगर, कमांडर, बलवान मित्र, उर्वर-मस्तिष्क, उपयोगी, सुन्दर, वाक्-चतुर, पैगम्बर, दिव्य ज्ञानी—समाज को इन सबकी आवश्यकता है। कल्पना के कपाट तो खुलने ही चाहिएँ। सतह पर क्यों चक्कर काटा जाय? प्रकृति के भीतरी दरवाजों को क्यों न खोला जाय—विज्ञान के द्वारा नहीं, वह तो स्वयं सतह है—बल्कि कविता द्वारा? क्या व्यापकता अन्तःकरण का ही एक तत्त्व नहीं है? लेकिन आज की शिक्षा, आज की कौन सी पुस्तक इस व्यापकता का आह्वान करती है?

हमारी संस्कृति समय एवं ऐंद्रिक संवेदनाओं का अनुसरण करती है। यह पौरुषमय नहीं है। यदि शाश्वत एवं आध्यात्मिक पक्षों की उपेक्षा की जायगी तो व्यावहारिक और नैतिक पक्ष भी स्वतः उपेक्षित हो जायँगे। यह स्थिति हमको वीर या स्वतन्त्र नहीं बनाती। हम विद्यार्थियों को अपने-जैसा ही बनाने के लिए शिक्षा देते हैं। हम उन्हें वह शिक्षा नहीं देते जिससे कि उनकी सारी क्षमताओं का वे उद्घाटन कर सकें। हम उन्हें ट्रेनिंग नहीं देते जैसे कि हमारे खयाल में उनके स्वभाव सदैव ही उच्चता का स्पर्श करते हों। शारीरिक शिक्षा तो हम उन्हें नाम-मात्र की भी नहीं देते। आँख और हाथ की भी कोई शिक्षा हम नहीं देते हम उनकी बुद्धि में केवल साधारण समझ और तुलना का ही ज्ञान भर देना चाहते हैं—जिससे वे गिन सकें, लिख सकें—हमारा उद्देश्य उन्हें एकाउण्टेण्ट, एटार्नी, इंजीनियर बनाने का ही होता है—किन्तु योग्य, सच्चे और उदार-चरि[illegible]नाने का नहीं। शिक्षा का महान् उद्देश्य जी[illegible]

चाहिए। यह चारित्रिक होना चाहिए वह ऐसा हो कि उसे आत्म-निर्भरता सिखावे; युवा व्यक्ति को अपने ही भीतर रुचि लेना सिखावे; जिससे अपनी ही प्रकृति के कौतूहल का वह निरीक्षण करे एवं अपने अंतःकरण के स्रोतों से वह परिचित हो जाय। उसे यह सिखाया जाय कि सारी शक्तियाँ भीतर ही हैं और यह प्रेरणा वह पा जाय कि सारा औदार्य उनके भीतर के ब्रह्मांड में भरा है तथा जिसको प्रकट करना उसका धर्म है। ऐसी शिक्षा ही दैवी क्षमता के साथ मेल रखती है। एक मनुष्य जब तक वह सिर्फ अपने ही लिए काम करता है, काफी क्षुद्र है; लेकिन जब वह प्रेम और न्याय की वाणी व्यक्त करता है तो वह दिव्य हो जाता है। सब देशों में उसकी वाणी प्रचारित हो जाती है और सभी लोग चाहे उसके शत्रु हों, मित्र हो जाते हैं और उसकी वाणी को ऐसे ही स्वीकार करते हैं जैसे वह स्वयं उनके ही अन्तःकरण से निकली हो।

जब इस बात पर जोर दिया जाता है कि मनुष्य की नैतिक प्रवृत्ति ही सर्वोपरि तत्त्व है और खासकर उसे ही पाठशाला के आयोजन के समय आधार मानना चाहिए, तो मैं यह देखना नहीं चाहूँगा कि यह एक पक्ष ही मनुष्य की अन्य क्षमताओं और प्रेरणाओं को समावृत्त कर दे। नैतिक शक्ति की महत्ता की प्रतिष्ठा विद्यार्थी के अन्तःकरण में अवश्य होनी चाहिए, किन्तु यदि अविकसित व्यक्ति पर इसका एकाधिकार स्थापित कर दिया जायगा तो उसकी अन्य प्रसुप्त क्षमताएँ जाग्रत न हो सकेंगी। ऐसा व्यक्ति एक ऐसा भक्त-मात्र बना रह सकता है जो अपने ही विचारों की नीरसता से थकान महसूस करता रहेगा। बौद्धिक और कर्म-शक्तियों को पोषण और परिपक्वता मिलना भी कम जरूरी नहीं है। इस विषय को भी हमें उसी प्रकाश में देखना है जिसके सहारे हमने समय के सारे प्रपञ्च को अभी तक देखा है—वह प्रत्येक मनुष्य की अपनी असीमता है। प्रत्येक वस्तु से इसकी शिक्षा मिल सकती है।

लेकिन एक बात मेरे लिए बड़ी संतोषप्रद है और जो मुझे विश्वास से उत्फुल्ल कर देती है वह यह है कि जरा (बुजुर्गी) सनातन यौवन को अपनी

यदि बालक के साथ थोड़ा भी औचित्य बरता जाय तो महती निराशा में फलित होगी। इस सादृश्य की मौजूदगी के सिद्धान्त को यदि हम कार्यान्वित करते हैं तो हम बालक के उचित भविष्य को पराजित करने में पूरी शक्ति लगा देते हैं और फलतः बालक को एक सामान्य एवं औसत व्यक्ति के ही रूप में विकसित कर पाते हैं। मुझे बड़ा दुःख होता है जब मैं प्रायः किसी एकदम अयोग्य बुजुर्ग या माता-पिता को अपना निजी तरीका या विचार-प्रणाली किसी नन्हे बालक पर थोपते देखता हूँ—क्यों हम व्यक्तियों को अपने ही में नहीं रहने देते और अपने ही निजी तरीकों से उन्हें जीवन का आनन्द नहीं लेने देते ? आप उस मनुष्य को स्वयं आप बनाना चाह रहे हैं। वह अकेला ही काफी है।

हम छात्र की प्रतिभा, प्रकृति की अज्ञात सम्भावनाओं का बलिदान करते हैं इसलिए कि एक निरापद और अच्छी अनुरूपता कायम हो सके जैसे कि तुर्क लोग मन्दिर की दीवारों पर यूनानियों द्वारा बनाये मूल्यवान प्राचीन चित्रों पर सफेदी पोत देते हैं। इसके बजाय तो हम यह चाहते हैं कि व्यक्ति का लड़कपन उसके प्रौढ़त्व तक कायम बना रहे जिसमें उसके सभी संस्कार भी अक्षत रहें। ऐसे व्यक्ति शौर्यपूर्ण कर्तृत्व के लिए योग्य और उर्वर होते हैं—ये लोग उन लोगों से भिन्न होते हैं जिनका दुःखद दृश्य रोज हमारे सामने आता है। इन्हें हम अशिक्षित शरीरों में शिक्षित आँखों के रूप में ही दीखते हैं।

मैं ऐसे लड़कों को पसन्द करता हूँ जो खेल के मैदान और सड़कों पर सर्वेसर्वा होते हैं—ऐसे लड़के जो सभी दूकानों, कारखानों, शस्त्रागारों, नगर-मीटिंगों और भीड़-भाड़ में मक्खियों की भाँति बिना किसी संकोच के चले जाते हैं, बिलकुल असंदिग्ध पहरेदार की भाँति सरल मार से पहुँच जाते हैं—जिनकी जेब में पैसे नहीं होते और इस गरीबी के मूल्य के प्रति भी जिनको स्वयं कोई सन्देह नहीं रहता है; जो अपने लिए कोई संरक्षक या पहरेदार नहीं रखते लेकिन किसी भी जगह अन्दर घुसकर सब देख लेते हैं और सब तरफ की बातें सुन लेते हैं। उनसे कोई चीज छिपी नहीं रह

सकती। [illegible] में तो [illegible] के आने से भली भाँति परिचित होते हैं, प्रत्येक इंजिन के नम्बर और अंक पर काम करने वाले प्रत्येक व्यक्ति से भी वे परिचित रहते हैं। वे उसे पहचाना जानते हैं और हर एक डिब्बे के परिचालन के लिए आतुरता से तत्पर रहते हैं। प्रत्येक ट्रेन के विषय में भी इन्हें ज्ञान रहता है और वे ड्राइवरों से मित्रता करके उस पर चढ़ते हैं और जब वह इंजन मैदान में जाता है तो वे सिगनल घुमाते हैं। सिर्फ विनोद के लिए ही वे वहाँ रहते हैं—वे नहीं जानते कि वे स्कूल में हैं, कचहरी में हैं या पशु-प्रदर्शिनी में हैं और जबकि वे एक घण्टे पूर्व गणित की कक्षा में पढ़ रहे थे।

सत्य और मिथ्या के अन्तर को वे बड़ी जल्दी पहचान जाते हैं और कुछ काई उसके एक सप्ताह पूर्व वे आपकी निर्बलता और व्यवहार का आपकी आँखों से पता लगा लेते हैं तथा पल-भर में आपको अपनी सम्मति दे देते हैं। वे गलतियाँ नहीं करते, आडम्बर नहीं रचते, लेकिन उनकी सारी बातें अनुभव के विश्वास पर होती हैं। बेसबाल या क्रिकेट में उनके चुनाव गुणों के आधार पर होते हैं और वे सही उतरते हैं। तैरना सीखने से पहले वे तैराकों की परीक्षा पास नहीं कर लेते और खेने से पूर्व खेने वालों में प्रमाणित नहीं हो जाते। मुझमें ये कमजोरियाँ हैं और मैं उनकी हिकारत से बचना चाहता हूँ। यदि मैं उनके साथ उत्तीर्ण हो सका तो, मैं उनके पिताओं के साथ कदम मिला सकता हूँ।

लड़के जिस अदम्य शक्ति को व्यक्त करते हुए अपनी आपसी बातचीत और पारस्परिक व्यवहार करते हैं, उसको देखकर सबको बड़ा सुख मिलता है। खेल के समय वे विनोद, आलोचना, फुसलावे, प्रेम और क्रोध के जिस मिश्रण को प्रदर्शित करते हैं वह भी कितना प्यारा होता है! पाठशाला में जो लड़का सबसे अगुआ होता है उसकी खुश-मिजाजी एवं उद्दण्ड स्वतन्त्रता भी देखने ही योग्य है। बाद के दिनों में जब हम इस सुखद लड़कपन का स्मरण करते हैं तो हमारे सम्मुख स्पष्ट हो जाता है कि उनके स्वच्छन्द खेल-कूदों और कसरतों ने अज्ञात में ही उनको स्कूल एवं कालेज के पाठों की

उपयोगिता दिखाई है। कितनी आत्मलीनता इनके विनोद में रहती है! एक अच्छा, गठीला युवक शिकार-पार्टी से वापस लौटता है और होमर, वर्जिल, कालेज के गीतों के साथ वाल्टरस्काट के सन्दर्भ देते हुए अपनी कहानी कहता है। उसमें जोव, एकिलीज, चिड़ियाँ और मछलियाँ, एलजेवरा-ज्यामेट्री, गौल में स्थित सीजर और सेवेना में शर्मन और हालवर्दी के प्रसंग भी आ जाते हैं। आनन्द-विभोर वह नवयुवक अपनी कहानी कहते-कहते नाच उठता है; किन्तु कहानी के तर्क में उससे कोई फर्क नहीं पड़ता। यदि मछली मारने और शिकार खेलने में वह अपनी पुस्तकों का इतना हृदयग्राही सन्दर्भ दे सकता है तो यह बिलकुल स्पष्ट हो जाता है कि उसका अध्ययन और अनुभव दोनों परस्पर एकाकार होते जा रहे हैं। हममें से सबकी यह इच्छा रहती है कि कर्म-शक्ति की ऐसी अभिव्यक्ति और वर्णन की ऐसी रंगीनी को, जिसमें विनोद और हास्य का ऐसा गहरा पुट रहता है, उद्दण्डता एवं कोलाहल से मुक्त करके शेष पूरी वाचालता के साथ युवकों में प्रविष्ट किया जाय। उसके शिकार और कैम्प के कारण उसे ऐसा आधार तो मिल ही जाता है—साथ में मैं यह चाहता हूँ कि उसमें कुसंगति के प्रति जो आतुरता रहती है उसे सुसंगति के प्रति आकर्षण में परिणत कर दिया जाय। युवकों की स्वच्छन्द प्रतिमा को खेलों, पार्टियों एवं समाज में व्यवहार-योग्य निर्देशन मिलना चाहिए और उनके गहरे एवं विवेकी मित्रों से वर्ष-प्रतिवर्ष उनका पत्रों द्वारा सम्पर्क बना रहना चाहिए। मैत्री एक सुसंस्कार है, क्योंकि मैत्री से उत्पन्न अनुभूतियों के द्वारा हम प्रकृति के काफी निकट आने का लाभ प्राप्त कर लेते हैं। लड़कों को मित्र-मण्डली की अनिवार्य आवश्यकता है। जिस शाला में अहंकार, आडम्बर, शैथिल्य और विनम्रता नहीं होती उसमें वह बड़ी तत्परता से भाग लेता है। क्योंकि उसे अपने-आपको विकसित करना है, इसलिए उसे सद्भावना, सुन्दरता, वाक्-चातुरी और चुनी हुई सूचना चाहिए। सभा-सोसाइटियों में ही लड़के बातचीत के नियम सीखते हैं—श्रोता के साथ-साथ वक्ता भी वे यहीं बनते हैं। लेकिन अगर परिस्थितियाँ ऐसी नहीं हों कि यथेष्ट ऊँचा सामाजिक

सकती । आग-कम्पनी में जो गुजरता है उससे वे भली भाँति
हैं, प्रत्येक एंजिन के गुणों और ब्रेक पर काम करने वाले
भी वे परिचित रहते हैं। वे उसे चलाना जानते हैं और
परिचालन के लिए आतुरता से तत्पर रहते हैं। प्रत्येक ट्रेन
इन्हें ज्ञान रहता है और वे इंजीनियर से मिन्नतें करके
और जब वह एंजिन गोदाम में जाता है तो वे हैंडिल
विनोद के लिए ही वे वहाँ रहते हैं—वे नहीं जानते कि
कचहरी में हैं या पशु-प्रदर्शिनी में हैं और जबकि वे ए
की कक्षा में पढ़ रहे थे।

सत्य और मिथ्या के अन्तर को वे बड़ी जल्दी
कुछ कहें उसके एक सप्ताह पूर्व वे आपकी निर्बलता
आँखों से पता लगा लेते हैं तथा पल-भर में आप
हैं। वे गलतियाँ नहीं करते, आडम्बर नहीं रचते
अनुभव के विश्वास पर होती हैं। बेसबाल या
के आधार पर होते हैं और वे सही उतरते हैं
तैराकों की परीक्षा पास नहीं कर लेते और
शित नहीं हो जाते। मुझमें ये कमजोरियाँ
बचना चाहता हूँ। यदि मैं उनके साथ उत्त
के साथ कदम मिला सकता हूँ।

लड़के जिस अदृश्य शक्ति को व्यक्त
और पारस्परिक व्यवहार करते हैं, उस
है। खे लोच
भी
है

इस प्रकार की कविता—दर्शन-शास्त्र, नीतिशास्त्र, आदि। यदि हम उनकी कल्पना का स्पर्श कर देते हैं तो वह हमारे लिए बड़े भारी कर्तव्य की पूर्ति हो जाती है; वे हमें कभी नहीं भूलेंगे। उसे 'टाम ब्राउन एट रग्बी' (Tom Brown at Rugby) 'टाम ब्राउन एट आक्सफोर्ड', (Tom Brown at Oxford) और इनसे भी आगे चलकर 'हडसंस् लाइफ' (Hudson's Life) पढ़ने को दीजिए—यह हडसन, जिसने दिल्ली के राजा को बन्दी बना लिया था। ये सब एक ही बात की शिक्षा देते हैं—अपने आस-पास के सभी कार्य-कलापों एवं स्थितियों में आत्म-विश्वास—किसी षड्यंत्र या आश्रय या साझीदारों में विश्वास नहीं, बल्कि अपने ही स्वयं की शक्ति में विश्वास। मेरे विश्वास में, हमारा स्वयं का अनुभव हमें यह सिखाता है कि हम शिक्षा के रहस्य के रूप में विद्यार्थी का सम्मान करना सीखें। वह क्या सीखे और करे यह आपकी पसन्द का विषय नहीं है। उसके लिए यह निर्धारित किया जा चुका है और इस रहस्य की कुंजी सिर्फ उसीके पास है। आपके हस्तक्षेप, नियन्त्रण एवं अत्यधिक अनुशासन के कारण वह अपने लक्ष्य से भ्रान्त हो सकता है और वह अपने स्वयं के विकास से दूर चला जा सकता है। बालक का आदर करना चाहिए। प्रकृति की इस नई उपज के लिए प्रतीक्षा करनी चाहिए। प्रकृति समरूपता पसन्द करती है, मगर पुनरावृत्तियाँ नहीं। बच्चे का आदर कीजिए। उस पर अनुचित रूप से शासन मत कीजिए। उसके एकांत में प्रवेश करने की अनधिकारपूर्ण चेष्टा मत कीजिए।

लेकिन मैं अपने इन विचारों का तीव्र विरोध भी पा रहा हूँ। ऐसे प्रश्न पूछे जाते हैं : क्या वैयक्तिक एवं सामाजिक अनुशासन से बच्चों का कोई सरोकार ही नहीं है? क्या आप नन्हे बालक को उसकी खाम-खयालियों और आवेशों के अनुसार अपना चरित्र बनाने देना चाहते हैं और क्या इस अराजकता को आप बालक के स्वभाव के प्रति सम्मान कहते हैं? इन प्रश्नों के उत्तर में मेरा कहना है—बच्चे का सम्मान कीजिए—जितना हो सके उसका सम्मान कीजिए; लेकिन साथ ही अपना सम्मान करना मत भूलिए।

स्तर युवकों को मिल सके तो एकान्त की उपयोगिता भी कम नहीं है। यहाँ अपरिचय में रहते हुए भी युवक गुणों को कार्यों में परिणत करना सीख जाते हैं। ज्ञान और शक्ति-उपार्जन का पथ कोलाहल और भीड़ में खो जाने का नहीं है बल्कि एकांत के मौन अन्वेषण में है। विपुलता एवं क्षुद्रता ज्ञानान्वेषण के मार्ग की बाधाएँ साबित हो जाती हैं—इनके विपरीत, जितना आत्म-त्याग और विराग एकान्त साधना में व्यवहृत होगा व्यक्तित्व का निखार भी उतना ही वास्तविक और समृद्ध बन सकेगा। एकान्त जहाँ विचारों का सारा तत्त्व पेश करता है वहाँ समाज में लिप्त विद्यार्थी केवल उसके बाह्य सौन्दर्य पर ही मुग्ध होता रहता है। ऐसे महापुरुषों और मानव-हितैषियों के उदाहरणों की कमी नहीं है जो अपनी आदतों में साधु-संन्यासी रहे हैं। कभी-कभी मनोवृत्ति को इस दिशा में जाने से रोका नहीं जा सकता। मनुष्य स्वयं गूँगा एवं बहरा पैदा हुआ है और संकीर्ण एवं एकांत जीवन ही उसको वरदान में मिला है। उसे एकांतवास की कला की साधना करने दो और जितनी शान से वह अपने भविष्य की ओर जाता है, उसे जाने दो। अपने दुर्भाग्य पर वह विजय क्यों नहीं पा लेता और अगर अनन्त काल से यह बात निश्चित होती आ रही है कि मनुष्य और समाज परस्पर कोई चीज नहीं है तो व्यक्ति समाज में प्रवेश करते हुए शरमाता क्यों है? भगवान् मनीषियों और महान् विचारकों को सुरक्षित रखने के लिए अपने ही विचारों के एकांत में बन्दी बनाता है। अतः जो हँसमुख एवं व्यवहार-कुशल होते हैं उन्हें सोसाइटी के बजाय एकान्त को अपनाना चाहिए और उसके अप्रिय सबकों को सीखना चाहिए।

युवकों के विकास-काल में एक युग कल्पना-शक्ति के विकास का आता है और ऐसे युग में सौन्दर्य, काव्य और पुस्तकों के प्रति उसमें प्रेम जाग्रत होता है। इस स्थिति में संस्कृति उसके सजीव साथियों की अपेक्षा पुस्तकों के चरित्रों को ज्यादा प्रभावपूर्ण बना देती है, वे उसके मन पर काफी गहरा प्रभाव डालने लगते हैं। छुट्टियों के दिनों में या प्रयोग के रूप में, इस समय युवकों को उपन्यास पढ़ने को देना मत भूलिए; लेकिन सबसे आवश्यक है

है जो उसे अभीष्ट सिद्धि के साधन बना सकें। विचारों की मोहिनी से ऐसा सम्मोहित बालक कितना भाग्यवान होता है—ये विचार उसे अगणित नगरों एवं मरुस्थलों में ले जाते हैं। ऐसा बालक चाहे जैसे समाज में साँस लेता हो वह अपने साथ कभी अन्याय नहीं करेगा। उसके उदात्त विचार अन्ततः उसे सत्य-प्रेमियों के गौरवमय समाज में ही ले जायँगे।

लन्दन में एक बार मेरा सर चार्ल्स फेलोज से परिचय कराया गया। एक बार जब वे एजियन समुद्र में सेन्थस में थे तो उन्होंने एक तुर्क को अपनी लकड़ी के द्वारा एक जमीन में गड़े पत्थर की ओर संकेत करते पाया। फेलोज ने मिट्टी हटाई और वहाँ शिल्पकला का सुन्दर नमूना पाकर वे प्रसन्न हो गए। आसपास उन्हें ऐसे कई पत्थर दिखाई दिए। वे मजदूर लेकर आए और उन सब पत्थरों को खुदवाया। तत्पश्चात् वे वापस इंगलैंड चले गए। वहाँ उन्होंने यूनानी व्याकरण खरीदा और वह भाषा सीखी। इन पत्थरों को समझने के लिए उन्होंने इतिहास और प्राचीन कला का अध्ययन किया। शिल्पी गिब्सन की रुचि उन्होंने इस ओर प्रवृत्त की; अंग्रेज सरकार से उन्होंने सहायता की प्रार्थना की और रंगों के विश्लेषण के लिए वे सहायतार्थ सर हम्फ्री डेवी के पास गये। इसके अलावा उन्होंने सिक्कों के विशेषज्ञों एवं अन्य विद्वानों का भी सहयोग प्राप्त किया और अन्त में अपनी तीसरी यात्रा में वे इंगलैंड को ऐसे अद्भुत शिल्प लेकर आये जो एथेंस के पार्थेनान की पचास वर्ष पूर्व की सभ्यता का परिचय देते थे। ये शिल्प भूकम्पों, मूर्तिभंजक ईसाइयों और बर्बर तुर्कों द्वारा नष्ट कर दिये गए थे। लेकिन ध्यान देने की बात है कि इस सारी साधना से उन्होंने उच्चतम शिक्षा ही नहीं प्राप्त कर ली थी बल्कि उन्होंने अपने युग के विख्यात विद्वानों का सत्संग भी प्राप्त कर लिया था। संक्षेप में, वे स्वयं एक कालेज बन गए थे। उनके उत्साह के कारण उनको अन्वेषण के बाद योग्य गुरु भी मिल गए थे। प्रतिभा प्रतिभा का अन्वेषण कर ही लेती है। प्रतिभा जिज्ञासु बनकर ज्ञानोपार्जन और आत्म-विकास-पथ पर निरन्तर अग्रसर रहती है।

उत्साह और अभ्यास में पूरा सामञ्जस्य है। सहृदयता सौन्दर्य के लिए

हैं, किन्तु इस सहज-बुद्धि का उपयोग हम अपनी शिक्षा में नहीं करते। इसके बावजूद हम लगातार प्रकृति के प्रतिकूल बड़ी खर्चीली मशीनरी स्कूलों, कालेजों और विश्वविद्यालयों में इस्तेमाल कर रहे हैं।

प्राकृतिक तरीका हमारे इन प्रयोगों को गलत प्रमाणित करता है और हमें अब भी वापस सही रास्ते पर आ जाना चाहिए। स्कूल का सारा सिद्धान्त धाय या माँ की गोद में है। माँ जितना सिखाना चाहती है बच्चा उसके लिए सदैव तत्पर रहता है। दोनों को परस्पर इससे आनन्द ही मिलता है। चतुर चाची से बचपन में हम कहानियाँ सुनते हैं और उनसे जो आनन्द हमें मिलता है लड़कपन में उसको दोहराना चाहिए। लड़का स्केटिंग करना, तालाब में से मछली पकड़ना एवं निशाना लगाना सीखना चाहता है। उससे थोड़ी ज्यादा उम्र का लड़का उसे यह बड़ी प्रसन्नतापूर्वक सिखा सकता है। इसी प्रकार एलजेबरा, कैमिस्ट्री, कविता पढ़ना, या गद्य पढ़ना, इतिहास या जीवन-चरित सीखने एवं सिखाने में भी परस्पर अनुपम आनन्द प्राप्त होता है।

प्रकृति ने विचारों के आदान-प्रदान की ऐसी व्यवस्था की है कि विचार के बीजारोपित होने के साथ ही विचार प्रदान करने की आतुरता भी पैदा हो जाती है। प्रत्येक कला एवं विज्ञान के साथ यही बात है। एक व्यक्ति नई बात कहने के लिए जितना व्यग्र रहता है उतना ही व्यग्र दूसरा सुनने के लिए भी। यही कारण है कि एक नवयुवक डॉक्टर सर्जरी का आपरेशन देखने के लिए कितने मील की यात्रा पैदल और सवारी द्वारा तय करता है! मैंने एक गाड़ी बनाने वाले की दुकान को सारे कर्मचारियों से शून्य देखा; क्योंकि वे न्यूयार्क से एक गाड़ी का नया नमूना देखने गये थे। साहित्य के प्रसंग में भी यही बात है। कविता, शब्द-प्रतिमाओं, उदात्त विचारों का प्रेमी युवक ऐसे पोषण के लिए सदैव प्यासा रहता है और उस व्यक्ति के मुकाबले सारी दुनिया को विस्मृत कर देता है जो उसे इस कोष के दान देने में ऐसा ही आनन्द अनुभव करता है।

प्रत्येक प्राकृतिक शिक्षक के आस-पास अपने-आप कायम होने वाला

मानवता को जीवन-संगीत सुनाने के लिए कौन से कवि यह पैदा करता है ? सारी भौतिक दुनिया जिसकी सत्ता स्वीकार करे ऐसे कौन से प्राकृतिक नियम का आविष्कारक ऐसे स्कूल में विकसित होता है ! अपने औदार्य से राष्ट्र को उत्कर्ष देने वाली कौन सी ज्वलन्त आत्मा यह स्कूल पैदा करता है ? कौन सा ऐसा प्रशान्त व्यक्ति यह उत्पन्न करता है जो विनीत भाव से अपने वैयक्तिक कर्तव्यों का पालन करता है और धैर्यपूर्वक सन्ताप के प्रति सहिष्णु बना रहता है ? क्या यह काफी स्पष्ट नहीं है कि हमारी एकेडेमिक संस्थाएँ विस्तार में अधिक व्यापक होनी चाहिएँ ? वे कायर न हों और सिर्फ पिछली पीढ़ी के जड़ नियमों में ही आबद्ध न बनी रहें । लेकिन ऐसे बुद्धिमान व्यक्तियों को भी सम्मुख आना चाहिए जो हृदय में मानवता के हित का चिन्तन करते हों—ये व्यक्ति नवयुवकों में न्यायोचित एवं शौर्य की भावनाओं को जाग्रत करने का साहस करें । युवकों की नैतिक बुद्धि को प्रेरित करना होगा और स्कूल के विद्यार्थियों के साथ ऐसा व्यवहार करना होगा मानो वे सत्य एव सद्गुणों के सम्भ्रान्त उम्मीदवार हों !

बालकों के साथ ऐसा व्यवहार वास्तव में अद्भुत धैर्य का परिचायक है। ऐसा धैर्य आत्मा की उपचारात्मक शक्तियों में विश्वास के द्वारा ही प्राप्त हो सकता है । आप छात्र के ऐंद्रिय विकास को देखिए । चरित्र-निर्माण में जिस शक्ति एवं सुरक्षा की जरूरत पड़ती है आप उसमें उन रुचियों और अनुभवों की कमी देखिए । यह सब सम्भव है । लेकिन इन कमजोरियों के अलावा उसमें कुछ और भी होता है । यदि उसमें दुर्गुण हैं तो साथ ही सुधारात्मक प्रवृत्तियाँ भी हैं । प्रत्येक व्यक्ति को कर्म के क्षेत्र में अपनी अभिव्यक्ति करने देनी चाहिए । यहीं आपको हानि-लाभ का लेखा मिलेगा । ऐसे निर्णयों पर पहुँचने के लिए एक सच्चे सुधारक की दूरदर्शिता चाहिए । एक सुप्रसिद्ध सुधारक के विषय में कहा गया है कि "उसका धैर्य सौ साल बाद खिलने वाले फूल की कली के अन्तराल को पहले ही देख लेता था।" आज के विद्या-दान का तरीका इसके बिलकुल विपरीत है । यहाँ का तरीका ही पंगु है । जरा किसी अच्छे स्कूल का परीक्षण कीजिये । कई उम्र, स्वभाव एवं

ऐसा कालेज धन्य है जैसे, सॉक्रेटीज के आसपास एथेंस के युवक हों, प्लाटिनस के आस-पास एलेक्जेंड्रिया के, एबिलार्ड के आसपास पेरिस के, फिक्टे, या नेबुर या गेटे के आस-पास जर्मनी के नवयुवक स्वाभाविक ढंग से शिक्षा प्राप्त कर रहे हों। प्रत्येक विख्यात व्यक्ति के आसपास ऐसा ही प्राकृतिक शिक्षण केन्द्र हो। लेकिन ज्यों ही इसको संगठित किया जाता है कठिनाई शुरू हो जाती है। ऐसा कालेज नई प्रतिभा के लिए नर्स या वर होना चाहिए। लेकिन ऐसा नहीं होता। यद्यपि प्रत्येक बालक पैदा होने के साथ एक दृढ़ संकल्प अपने साथ विकसित करता है और एक महान् प्रतिभा के बीज उसके भीतर होते हैं और प्रायः वह अपनी मंजिल तक पहुँचता भी है, किन्तु अधिकांशतः उसके मार्ग में रोड़े बिछाये जाते हैं और उसकी प्रगति को रोका जाता है। बुद्धि के परिपक्व होने से पूर्व ही उसके ऐंद्रिय तत्त्वों को जगाया जाता है। अतः इस प्रकार जो विकास होता है वह इंद्रियों के धर्मों का ही विकास होता है, बौद्धिक नहीं। रुचि एवं आलस्य इन युवकों में हो सकता है; मगर उत्साह नहीं। ऐसे युवकों की काफी बड़ी संख्या कालेजों में पढ़ने आती है—जिनमें कुछ ही प्रतिभाशाली होते हैं—और इन सबकी पढ़ाई साथ ही शुरू होती है; केवल प्रतिभाशाली युवकों की ही नहीं। अतः ऐसी शिक्षा के लिए ऐसे अध्यापक चाहिएँ जो लगनशील एवं उर्वर-मस्तिष्क-होने के बजाय सूक्ष्म-दर्शी और व्यवस्थित विचार-प्रणाली वाले हों। इसके अलावा हम यह भी देखेंगे कि प्रतिभा-सम्पन्न विद्यार्थी कुछ खब्ती से, चिड़चिड़े, अनिश्चित, विस्फोटात्मक, एकांतप्रिय, आसानी से अनुशासन न मानने वाले; इस दुनिया से बिलकुल अलग एवं दैनिक सम्पर्क के लिए एकदम अनुपयुक्त युवक होते हैं। आपको व्यक्तियों के बजाय एक बड़ी कक्षा को पढ़ाना है। सुस्त विद्यार्थियों के सीखने तक आपको रुकना पड़ेगा और इस क्रम को चलाते हुए आप स्वभावतः अनुशासन में पुलिस-जैसे कठोर और सैन्य-विभाग-जैसे नियम-जड़ हो जायँगे। ऐसा स्कूल महान् एवं शौर्यपूर्ण चरित्र-निर्माण में क्या योग-दान देता है? कौन सी स्थायी आशा की प्रेरणा वह न धारक वह पोषित करता है?

नहीं पढ़ती। निस्न तो एक आटोमेटन, एक मशीन-जैसा होता है और उसमें स्कूल चलाया जा सकता है। इससे श्रम और विचार में इतनी सुविधा होती है कि प्रत्येक विद्यार्थी की आवश्यकता-पूर्ति के लम्बे काम को उपेक्षित करने का लोभ रोका नहीं जा सकता। लेकिन इसमें अपरिमित खर्च होता है। हमारी शिक्षा के तरीकों का उद्देश्य जल्दी प्रगति करने और श्रम बचाने का होता है—हम बड़े-बड़े समूह के लिए वह करना चाहते हैं जो हम उनके लिए नहीं कर सकते। जो काम श्रद्धापूर्वक एक व्यक्ति के साथ करना चाहिए, उसे बड़े समूह के प्रसंग में किया जाता है। असलियत तो यह है कि एक विद्यार्थी के लिए भी सारे संसार का शिक्षण चाहिए। प्रतियोगिता एवं प्रदर्शन से पूर्ण इस प्रणाली के लाभ इतने स्पष्ट एवं शीघ्र फलदायी होते हैं और श्रम की बचत के लिए एवं प्रयोग की दृष्टि से भी यह इतनी सरल होती है कि उसको कार्यान्वित करने के लिए किसी ऋषि एवं कवि की आवश्यकता नहीं पड़ती; बल्कि कोई भी नया अध्यापक इसका इस्तेमाल आसानी से कर सकता है। यही कारण है कि संस्कृति का यह केलोमल (विरेचन) आज बड़ी लोकप्रिय औषध हो गया है। दूसरी ओर, इस औषध से पूर्ण विरक्ति और सरल अनुशासन एवं प्रकृति के अनुकरण में समय, विचारों और अध्यापक के जीवन पर काफी दबाव पड़ता है। इसमें समय-उपयोग, सूक्ष्म दृष्टि, कार्य-शक्ति एवं युग-युग की सभी शिक्षाओं तथा भगवान् की सहायता की जरूरत पड़ती है। इस प्रणाली को अपनाने के संकल्प में ही आचरण और गम्भीरता की आवश्यकता है और अनुशासन के इस क्रम पर उतरने का अभिप्राय है स्वयं महान् एवं श्रेयोन्मुख बनना। शारीरिक दण्ड एवं प्रेम-प्रणाली में जो अन्तर होता है वैसा ही यहाँ भी है। शैतान लड़के को पीटना, उस पर रौब जमा लेना और शब्दों के बिना ही उससे आज्ञा का पालन करवा लेना इतना आसान है कि आज की अत्यन्त गतिमय एवं विशृङ्खल दुनिया में औचित्य नतीजों एवं आत्म-विजय के लिए कोई प्रतीक्षा ही नहीं करता—शायद इस अनिश्चय में इन बातों की पूर्ति भी न हो सके। तथापि जगत् में व्यापक क्षति-पूर्ति के जो सुपरिचित उदाहरण हमारे

योग्यताओं के विद्यार्थी यहाँ मिलते हैं। कुछ काफी अल्पायु हैं, कुछ शिथि
हैं, कुछ विकृत प्रकृति के हैं—उनका वर्गीकरण बड़ा कठिन है। प्रत्येक
ऊपर इतनी निगरानी की जरूरत होती है कि सवेरे आया और उत्साह
भरा हुआ अध्यापक शाम को निराश नर लौटता है। प्रत्येक विद्यार्थी प
जितना ध्यान दिया जाय उतना ही और ध्यान देने की जरूरत निरन्तर मह
सूस होती रहती है। एक ओर गिनती के घण्टे रहते हैं तथा दूसरी ओ
अगणित बातों को सुधारना। सभी जगह एक ही बात है—छः घण्टों का
समय और तीस से लेकर डेढ़ सौ तक विद्यार्थी। ऐसी परिस्थिति में हमें
कुछ सुधार करना जरूरी है और वह जल्दी ही किया जाना चाहिए। परे-
शानी में प्रायः बुद्धिमान-से-बुद्धिमान अध्यापक भी उग्र साधनों का सहारा
लेने पर उतारू हो जाते हैं और सैनिक कानूनों, डण्डों, रिश्वतों और जड़-
तरीकों को अपनाने की घोषणा करते हैं—जिस ईश्वरीय प्रभाव के अनुसार
काम करने की उन्होंने आशा की थी उससे किसी भावी तारीख को अपनाने
का वे निश्चय कर लेते हैं। वस्तुतः कई कार्यक्रमों के प्रति आस्था की अध्या-
पक पर गलत प्रतिक्रिया होती है। जब उसकी आँखें घड़ी पर रहती हैं और
दिन समाप्त होने से पूर्व जब उसे बीस कक्षाओं में पढ़ाना होता है तो वह न
तो अपनी प्रतिभा के साथ न्याय कर सकता है और न नन्हें विद्यार्थियों से
मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध ही स्थापित कर पाता है। इसके अलावा प्रतिभाशाली
विद्यार्थियों को भी वह कैसे लाभ पहुँचा सकता है और किस तरह सद्गुणों
को पोषण दे सकता है? प्रत्येक स्कूल में, निश्चित रूप से शैतान एव मूढ़
विद्यार्थियों की काफी संख्या रहती है और वे अध्यापक का खासा अच्छा
समय ले लेते हैं। यहाँ बेचारा अध्यापक, जो विद्यार्थी के लिए अपने को
ईश्वर समझता है, परेशान होकर कड़े अनुशासन का हिमायती बन जाता
है। जितने दुर्गुणों का परिचय एक पुलिस-कोर्ट के जज को होता है उतना
ही हमारे अध्यापक को भी हो जाता है। उसका विद्या-प्रेम व्याकरण और
प्राइमरी शिक्षा में ही लुप्त हो जाता है।

नियम इतना आसान होता है [illegible] क्सर [illegible] रत ही

नहीं पड़ती। नियम तो एक ऑटोमेटन, एक मशीन-जैसा होता है और उससे स्कूल चलाया जा सकता है। इससे श्रम और विचार में इतनी सुविधा होती है कि प्रत्येक विद्यार्थी की आवश्यकता-पूर्ति के लम्बे काम को उपेक्षित करने का लोभ रोका नहीं जा सकता। लेकिन इसमें अपरिमित खर्च होता है। हमारी शिक्षा के तरीकों का उद्देश्य जल्दी प्रगति करने और श्रम बचाने का होता है—हम बड़े-बड़े समूह के लिए वह करना चाहते हैं जो हम उनके लिए नहीं कर सकते। जो काम श्रद्धापूर्वक एक व्यक्ति के साथ करना चाहिए, उसे बड़े समूह के प्रसंग में किया जाता है। असलियत तो यह है कि एक विद्यार्थी के लिए भी सारे संसार का शिक्षण चाहिए।

...ण इस प्रणाली के लाभ इतने स्पष्ट एवं शीघ्र
...बचत के लिए एवं प्रयोग की दृष्टि से भी
...को कार्यान्वित करने के लिए किसी ऋषि
...पड़ती; बल्कि कोई भी नया अध्यापक इसका
... है। यही कारण है कि संस्कृति का यह
...लोकप्रिय औषध हो गया है। दूसरी ओर,
...सरल अनुशासन एवं प्रकृति के अनुकरण में
... जीवन पर काफी दबाव पड़ता है। इसमें
...शक्ति एवं युग-युग की सभी शिक्षाओं तथा
... पड़ती है। इस प्रणाली को अपनाने के
...भीरता की आवश्यकता है और अनुशासन के
...है स्वयं महान् एवं श्रेयोन्मुख बनना। शारीरिक
...न्तर होता है वैसा ही यहाँ भी है। शैतान
...मा लेना और शब्दों के बिना ही उससे आज्ञा
...आसान है कि आज की अत्यन्त गतिमय एवं
...चीजों एवं आत्म-विजय के लिए कोई प्रतीक्षा
...अनिश्चय में इन बातों की पूर्ति भी न हो
...क्षति-पूर्ति के जो सुपरिचित उदाहरण हमारे

योग्यताओं के विद्यार्थी यहाँ मिलते हैं। कुछ काफी अल्पायु हैं, कुछ शिथिल हैं, कुछ विमुख प्रकृति के हैं—उनका वर्गीकरण बड़ा कठिन है। प्रत्येक के ऊपर इतनी निगरानी की जरूरत होती है कि सवेरे आशा और उत्साह से भरा हुआ अध्यापक शाम को निराश घर लौटता है। प्रत्येक विद्यार्थी पर जितना ध्यान दिया जाय उतना ही और ध्यान देने की जरूरत निरन्तर महसूस होती रहती है। एक ओर गिनती के घण्टे रहते हैं तथा दूसरी ओर अगणित बातों को सुधारना। सभी जगह एक ही बात है—छः घण्टों का समय और तीस से लेकर डेढ़ सौ तक विद्यार्थी। ऐसी परिस्थिति में हमें कुछ सुधार करना जरूरी है और वह जल्दी ही किया जाना चाहिए। परेशानी में प्रायः बुद्धिमान-से-बुद्धिमान अध्यापक भी उग्र साधनों का सहारा लेने पर उतारू हो जाते हैं और सैनिक कानूनों, डण्डों, रिश्वतों और जड़ तरीकों को अपनाने की घोषणा करते हैं—जिस ईश्वरीय प्रभाव के अनुसार काम करने की उन्होंने आशा की थी उससे किसी भावी तारीख को अपनाने का वे निश्चय कर लेते हैं। वस्तुतः कई कार्यक्रमों के प्रति आस्था की अध्यापक पर गलत प्रतिक्रिया होती है। जब उसकी आँखें घड़ी पर रहनी हैं और दिन समाप्त होने से पूर्व जब उसे बीस कक्षाओं में पढ़ाना होता है तो वह न तो अपनी प्रतिभा के साथ न्याय कर सकता है और न नन्हें विद्यार्थियों से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध ही स्थापित कर पाता है। इसके अलावा प्रतिभाशाली विद्यार्थियों को भी वह कैसे लाभ पहुँचा सकता है और किस तरह सद्गुणों को पोषण दे सकता है? प्रत्येक स्कूल में, निश्चित रूप से शैतान एव मूढ़ विद्यार्थियों की काफी संख्या रहती है और वे अध्यापक का खासा अच्छा समय ले लेते हैं। यहाँ बेचारा अध्यापक, जो विद्यार्थी के लिए अपने को ईश्वर समझता है, परेशान होकर कड़े अनुशासन का हिमायती बन जाता है। जितने दुर्गुणों का परिचय एक पुलिस-कोर्ट के जज को होता है उतना ही हमारे अध्यापक को भी हो जाता है। उसका विद्या-प्रेम व्याकरण और प्राइमरी शिक्षा में ही लुप्त हो जाता है।

नियम इतना आसान होता [illegible] उसके [illegible] ही

नहीं पड़ती। नियम तो एक आटोमेटन, एक मशीन-जैसा होता है और उससे स्कूल चलाया जा सकता है। इससे श्रम और विचार में इतनी सुविधा होती है कि प्रत्येक विद्यार्थी की आवश्यकता-पूर्ति के लम्बे काम को उपेक्षित करने का लोभ रोका नहीं जा सकता। लेकिन इसमें अपरीमित खर्च होता है। हमारी शिक्षा के तरीकों का उद्देश्य जल्दी प्रगति करने और श्रम बचाने का होता है—हम बड़े-बड़े समूह के लिए वह करना चाहते हैं जो हम उनके लिए नहीं कर सकते। जो काम श्रद्धापूर्वक एक व्यक्ति के साथ करना चाहिए, उसे बड़े समूह के प्रसंग में किया जाता है। असलियत तो यह है कि एक विद्यार्थी के लिए भी सारे संसार का शिक्षण चाहिए। प्रतियोगिता एवं प्रदर्शन से पूर्ण इस प्रणाली के लाभ इतने स्पष्ट एवं शीघ्र फलदायी होते हैं और श्रम की बचत के लिए एवं प्रयोग की दृष्टि से भी यह इतनी सरल होती है कि उसको कार्यान्वित करने के लिए किसी ऋषि एवं कवि की आवश्यकता नहीं पड़ती; बल्कि कोई भी नया अध्यापक इसका इस्तेमाल आसानी से कर सकता है। यही कारण है कि संस्कृति का यह केलोमल (विरेचन) आज बड़ी लोकप्रिय औषध हो गया है। दूसरी ओर, इस औषध से पूर्ण विरक्ति और सरल अनुशासन एवं प्रकृति के अनुकरण में समय, विचारों और अध्यापक के जीवन पर काफी दबाव पड़ता है। इसमें समय-उपयोग, सूक्ष्म दृष्टि, कार्य-शक्ति एवं युग-युग की सभी शिक्षाओं तथा भगवान् की सहायता की जरूरत पड़ती है। इस प्रणाली को अपनाने के संकल्प में ही आचरण और गम्भीरता की आवश्यकता है और अनुशासन के इस क्रम पर उतरने का अभिप्राय है स्वयं महान् एवं श्रेयोन्मुख बनना। शारीरिक दण्ड एवं प्रेम-प्रणाली में जो अन्तर होता है वैसा ही यहाँ भी है। शैतान लड़के को पीटना, उस पर रौब जमा लेना और शब्दों के बिना ही उससे आज्ञा का पालन करवा लेना इतना आसान है कि आज की अत्यन्त गतिमय एवं विशृङ्खल दुनिया में औचित्य नतीजों एवं आत्म-विजय के लिए कोई प्रतीक्षा ही नहीं करता—शायद इस अनिश्चय में इन बातों की पूर्ति भी न हो सके। तथापि जगत् में व्यापक क्षति-पूर्ति के जो सुपरिचित उदाहरण हमारे

सामने प्रकट हो रहे हैं वे इस भय की सूचना दे सकते हैं कि ऐसे अहितकर कार्यक्रम को चलाते रहने की अपेक्षा एकदम बन्द कर देना ज्यादा क्षतिप्रद है।

इस नीम-हकीमी का इलाज यह है कि शिक्षा में जीवन के विवेक का समावेश किया जाय। इस फौजी जल्दबाजी को छोड़िये और प्रकृति के कदमों से चलिये। उसका रहस्य है धैर्य! क्या आप जानते हैं कि प्रकृति-वेत्ता किस प्रकार जंगलों, पौधों, पक्षियों, पशुओं, साँपों, मछलियों, नदियों और समुद्रों के रहस्यों से परिचित होता है? जब वह जंगलों में जाता है तो उसे देखकर पक्षी उड़ जाते हैं और उसके हाथ कुछ नहीं आता। जब वह नदी के किनारे जाता है तो मछलियाँ और रेंगने वाले कीड़े उसे अकेला छोड़कर पानी में भाग जाते हैं। धैर्यपूर्वक साधना ही उसका रहस्य है। वह प्रतिमा या लकड़ी के लट्ठे की भाँति शान्त एवं निश्चेष्ट बैठ जाता है। इन प्राणियों को समय की पाबन्दी मान्य नहीं है और प्रकृति-वेत्ता को इसकी अपेक्षा भी नहीं रहती। जब वह जिद के साथ निश्चेष्ट बैठा रहता है तो मछली, पक्षी, पशु और रेंगने वाले जीव, जो भाग गए थे, वापस लौटते हैं। वह मौन एवं निष्क्रिय बैठा रहता है। अगर वे उसके निकट आते हैं तो वह उसी पत्थर की भाँति निश्चेष्ट बना रहता है जिस पर कि वह बैठा हुआ है। इस प्रकार उनका डर मिट जाता है और जिज्ञासा एवं कौतूहल के साथ वे उस तक पहुँचते हैं। ज्यों-ज्यों कौतूहल गहरा होता जाता है वे तैरते, रेंगते और उड़ते हुए उसके पास आते-जाते हैं और इतने पर भी जब वह हिलता-डुलता ही नहीं, तो वे केवल अपनी दिनचर्या में ही निमग्न नहीं हो जाते बल्कि सहानुभूति के साथ इस दो पैर के प्राणी से मैत्री करने के लिए भी आगे बढ़ते हैं। क्या आप अपने धैर्य एवं शान्ति से बालक की जल्दबाजी और आवेश को पराजित नहीं कर सकते? क्या आप प्रकृति या ईश्वर की भाँति उसके लिए प्रतीक्षा नहीं कर सकते? जो कौतूहल आप गिलहरी, साँप, खरगोश, हिरन और बतक के सम्बन्ध में बरतते हैं क्या वही बच्चे की बुद्धि, तरीकों एवं रहस्यों के लिए नहीं बरत सकते? उसके पास अपना निजी रहस्य होता है, अद्भुत तरीके उसके पास रहते हैं—

प्रत्येक बालक के पास ये सब बातें होती हैं—वह एक नये प्रकार का मनुष्य होता है। उसे समय एवं अवसर दीजिये। आप कोलम्बस एवं न्यूटन की बात करते हैं! लेकिन मैं आपसे कहता हूँ कि उस दूरस्थ घरौंदे में पैदा हुआ नवजात शिशु भी ऐसी ही क्रान्तियों का श्रीगणेश है। आवश्यकता है विश्वास और दूरदर्शिता की। जिस आज्ञा-पालन की प्रेरणा आप देना चाहते हैं वह पहले आपके भीतर होना चाहिए। आपके शिक्षण और अनुशासन में प्रकृति-जैसी अगाधता एवं मौन अभिव्यक्ति होनी चाहिए। आप स्वयं वाक् नियंत्रण करते हुए उन्हें मौन रहना सिखाइए। थोड़ा बोलिये; गुर्राइये मत; गुस्सा मत कीजिये; किन्तु आँख के संकेत से शिक्षा दीजिये। उनकी आवश्यकता-पूर्ति और सही काम होना देखिए। अपने शिक्षण के तरीकों में सुधार के उपाय बताने में मैं स्वयं असमर्थ हूँ। स्कूल-कमेटी, ओवरसियर या संस्था अथवा कालेज में आने वाले दर्शकों द्वारा दिये गए कोई सुझाव इन कठिनाइयों एवं दिक्कतों को दूर नहीं कर सकते। लेकिन जब हम संस्थाओं को छोड़कर व्यक्तियों को सम्बोधन करने लगते हैं तब ये समस्याएँ अपने-आप हल हो जाती हैं। इच्छा-शक्ति, पौरुष से अपने-आप संगठन होना शुरू हो जाता है—यह शक्ति अपने विचार स्वयं बनाती है और दूसरों पर प्रेरणाएँ छोड़ती है। जिस प्रकार सामान्य कार्य-व्यापार में इस शक्ति द्वारा मनुष्यों का नियंत्रण होता है उसी प्रकार विद्यार्थियों को भी यह काबू में रखती है। ऐसी शक्ति जिस व्यक्ति में हो वह भाग्यवान् ही कहा जायगा, क्योंकि वह एक बड़ी भारी सम्पदा का स्वामी है। किन्तु जब इस शक्ति का प्रयोक्ता इसका बढ़कर मूल्यांकन करने लग जाता है अथवा आवश्यकता से अधिक इसका इस्तेमाल करता है या अच्छे साधनों से उसे वंचित कर देता है तो यह शक्ति खतरनाक हो जाती है। जिनके पास यह पौरुषमयी शक्ति नहीं है उन्हें नारी की स्वाभाविक शक्ति और सहानुभूति का प्रयोग करना चाहिए। यद्यपि यह तात्कालिक नियंत्रण एवं प्रतिरोध को निर्विलम्ब तोड़ने में असमर्थ है, किन्तु परिणाम में यह अधिक सूक्ष्म, स्थायी एवं रचनात्मक होती है। मैं अध्या-

पकों को राय देता हूँ कि वे मातृ-चातुर्य को अपनावें। मेरा खयाल है कि इसमें आप व्याकरण, पाठन, लेखन और गणित को नियमित बना सकेंगे। यह बड़ी सरल भी है; आप इसे अमल में भी अवश्य ला सकेंगे। लेकिन कुछ पराये गुण भी चुराकर लाइये—कल्पना, विचार एवं मन की उड़ानें। यदि आपका कोई ऐसा शौक हो जिसे आपने इसलिए दबा दिया है कि आपके आसपास उसमें शामिल होने वाला कोई नहीं है तो छात्रों के सामने उसे भी बयान कीजिए। स्कूल के नियम चाहे जो हों, लेकिन इन नियमों को सदैव ध्यान में रखिये। छात्र कानाफूसी या आगे बढ़कर बातें न करने लग जायँ। लेकिन अगर कोई लड़का समझ की बात कहता है तो उसकी प्रशंसा कीजिए और उस पर सब छात्रों को ताली बजाने दीजिए। स्कूल की किताबों के सिवाय उनके पास और दूसरी किताबें नहीं होंगी; किन्तु अगर कोई अपने साथ प्लूटार्क, शेक्सपियर, डॉन क्विक्जोट या गोल्ड स्मिथ या ऐसी ही कोई अच्छी पुस्तक लेकर आता है और उन्हें पढ़कर समझ लेता है तो उसे कक्षा में सर्वोपरि स्थान दीजिये। व्यवस्था भंग कोई न करे या अपना डेस्क बिना आज्ञा के न छोड़े। लेकिन अगर कोई लड़का या लड़की अपने बेंच से भागता है इसलिए कि कहीं आग लग गई है या वह किसी शैतान लड़के से पीड़ित छात्र को बचाने जाता है तो कक्षा के सबसे अच्छे छात्र का मैडल उतारकर उसी क्षण इस वीर त्राता को पहना दीजिए। यदि कोई बालक यह प्रदर्शित करता है कि वह खगोल, वनस्पति, पक्षियों, शिलाओं या इतिहास से सम्बन्धित कोई बात जानता है, जिसमें आपकी भी रुचि है और उसकी भी; तो सारी कक्षा को खामोश करा दीजिए। उस बालक से वह बात कहलाइए जिससे उसे सब सुन सकें। इस प्रकार आपने अपनी कक्षा को एक पूरी दुनिया बना दिया है। यह सत्य है कि आप अपने छात्रों में विनम्रता एवं अध्यापकों के प्रति आदर की आदतें डालना चाहते हैं—लेकिन अगर कोई लड़का आपके पढ़ाते समय आपको रोके और कहे कि आप गलत पढ़ा रहे हैं तथा वह आपको सुधारे तो उसे गले से लगा लीजिए।

जिन सच्चे और सहृदय व्यक्तियों के सामने मैं ये बातें पेश कर रहा हूँ, उनमें से आपकी जिम्मेदारी मनुष्य को शिक्षित बनाने की है। सरल जीवन, उदार-हृदयता के द्वारा आप सबको प्रेरणा देते हैं, सुधारते हैं, शिक्षा देते हैं, उठाते हैं और अभिनव बनाते हैं। अपने ही कार्यों से आप देखने वालों को व्यावहारिक कार्यों की शिक्षा देते हैं। जिस गहराई से आप अपना जीवन-रस प्राप्त करते हैं वह गहराई सिर्फ आपके अध्यवसाय की ही नहीं है; बल्कि आपकी संस्कारिता और व्यक्तित्व की भी है।

संसार की सौन्दर्यमयी प्रकृति ने आपकी क्षमता को आपके सुख के साथ संयुक्त कर दिया है। परिपूर्ण कर्तव्य-परायणता की भावना से निर्द्वन्द्व काम करते जाइए और इस आचरण द्वारा आप जगत् के सारे युवक-समाज के सामने उत्साह का हाथ बढ़ाते हैं। अपने सर्वोच्च विचार का ही यन्त्र अपने को बनाइए और लीजिए आप अकस्मात् सारी मानवता को अपना ऋणी बना लेते हैं। इस प्रकार आपकी स्थिति उस शक्ति-स्रोत-जैसी हो जाती है जिसकी कल्याण-वाहिनी लहरें समाज और अन्ततः जीवन की समस्त परिधि का प्रक्षालन करती हैं।

: ८ :

स्मृति

स्मरण-शक्ति प्राथमिक और बुनियादी क्षमता है जिसके बिना अन्य शक्तियाँ काम ही नहीं कर सकतीं। यह एक ऐसा सीमेंट, या कोलतार या साँचा है जिस पर अन्य शक्तियाँ आधारित हैं—अथवा यह ऐसा सूत्र है जिसमें मनुष्य ने अपनी माला के दाने पिरो रखे हैं जिससे कि नैतिक कार्यों के लिए वह अपनी निजी साक्षी दे सके। इसके बिना सारा जीवन और विचार एक असम्बद्ध क्रम है। जैसे गुरुत्वाकर्षण सब पदार्थों को शून्य में उड़ने से बचाता है उसी प्रकार स्मरण-शक्ति ज्ञान को स्थायित्व प्रदान करती है—यह ऐसा लगाव है जो चीजों को एक समूह में एकत्र होने या लहरों में उड़ने से बचाता है।

हम दीर्घकालीनता चाहते हैं। हम व्यक्ति में सम्पदा और प्रकृति का प्रसार देखना चाहते हैं और सबसे अधिक हम स्मरण-शक्ति की आकांक्षा करते हैं। प्राणि-जगत् के सबसे निम्न वर्ग को भी स्मरण-शक्ति मिली है। अबाबील, चींटी, केंचुआ सबमें हमारी तरह स्मरण-शक्ति होती है। अगर आप उनका रास्ता रोक देते हैं, या उनकी रुचि के प्रतिकूल कोई वस्तु देते हैं तो वे एक या दो प्रयोग करते हैं और फिर उसे सदैव के वास्ते छोड़ जाते हैं।

अपने ढंग से प्रत्येक मशीन परिपूर्ण होनी चाहिए। एक लोकोमोटिव के लिए यह जरूरी है कि वह उल्टा भी चल सकता हो और समान गति

से आगे एवं पीछे घूम सकता हो। इसी प्रकार दिमाग बनाने वाले ने भी इसे कम ज़रूरी नहीं समझा है कि उसमें कर्म की पुनरावृत्ति हो और अतीत के कामों का दृश्य उसमें फिर से अंकित हो जाया करे। अनुभव, यद्यपि अपरिमित होता है और सारे जगत् में प्रविष्ट हो सकता है, तथापि वह पर्याप्त नहीं है।

अपनी दिव्य मुद्राओं की शक्ति से स्मरण-शक्ति मनुष्य के लिए असम्भव को भी सम्भव बना देती है। दोनों को देखते हुए और दोनों में अवस्थित रहते हुए वह अतीत और वर्तमान दोनों को ही साथ थामे रहती है। काल-प्रवाह में वह अपना अस्तित्व कायम बनाए रहती है और इस प्रकार मानव-जीवन को अबाध क्रम एवं गौरव प्रदान करती है। हमारे परिवार और मित्रों के साथ वह हमारा सम्बन्ध अक्षुण्ण बनाये रखती है। फलतः हमारी गृहस्थी का अस्तित्व बनता है एवं उससे प्रत्येक नई बात को मान्यता मिलती रहती है।

व्यापार में पैसे लगाने के अवसर उन्हीं के लिए लाभप्रद होते हैं जिनके पास पूँजी हो। ज्ञान का कोई भी अंश मुझे आज मिलता है—चाहे वह मेरा देखा हुआ दृश्य हो, पुस्तक का अध्ययन हो, सुना हुआ समाचार हो—उसकी मेरी कार्य-निपुणता के अनुपात में इस समय कीमत है। कल, जब मेरा ज्ञान अधिक बढ़ेगा तो मैं उस ज्ञान का स्मरण करूँगा और अधिक अच्छी तरह प्रयोग में लाऊँगा।

स्मरण-शक्ति द्वारा लगातार छनते रहते हुए और उत्कृष्ट तरीकों के कारण सक्रिय अन्तःकरण के लिए प्रति क्षण अतीत का नया मूल्य है। रंग, आकार और संवेदनात्मक सम्बन्धों द्वारा कई बातें मिलकर अतीत का निर्माण होता है। बचपन में आपने कोई अल्हड़ बात देखी थी वह परिपक्वावस्था में जब आपको याद आती है तो आपके लिए अच्छी मिसाल बन जाती है और शायद प्रौढ़ावस्था में जाकर आप उसमें नया महत्त्व या अर्थ भी पाते हैं। अनुभव के तकाज़ों के अनुसार हम अपने किसी असम्बद्ध एवं एकाकी विश्वास या भावना को दूसरे अन्य विचारों के साथ रखकर पूर्ण एवं सार्थक बना लेते हैं। कभी-कभी कोई पुरानी सनक या अनुभूति किसी व्यापक

धर्माचार्य स्मृति को 'सान्ध्यज्ञान' कहते हैं और भावी के विषय में सोच सकने वाले कारण-संभूत ज्ञान को 'प्रातःज्ञान' कहते हैं।

क्या मुझसे यह पूछा गया है कि विचार अपने-आप शब्दों का जामा पहन लेते हैं? मेरा उत्तर है—हाँ। लेकिन वे प्रायः शीघ्र ही भुला दिए जाते हैं। "सिबिल ने पत्तों पर लिखा था और उन्हें हवा उड़ा ले गई"—इससे अच्छी कपोल-कथा और कोई नहीं हो सकती। मनुष्यों के बीच में अन्तर यही है कि कुछ मनुष्यों में स्मृति अद्भुत तेजी से पीछे भागती है और उन उड़ने वाले पत्तों को एकत्र कर लेती है—अपने पंखों पर उसी रहस्यमयी आँधी की तरह तेज उड़ती है और ईर्ष्यालु तकदीर पराजित हो जाती है।

अतीत की बातों को बुला सकने की यह क्षमता और अनुभव के सर्वोत्तम क्षणों को इच्छानुसार स्पष्ट देख सकने की यह शक्ति हमारा अद्भुत अधिकार है। नाइबुर कहता है—"मिट चुकने वाले को जो वापस अस्तित्व में बुला लेता है वह सृजन-जैसा ही आनन्द प्राप्त करता है।" मनुष्यों के बौद्धिक वर्गीकरण में स्मृति का बड़ा भारी हाथ रहता है। कितना कोई व्यक्ति याद रख सकता है उसी के अनुसार हम उसका मूल्यांकन करते हैं। काव्य का दारोगा तो स्मृति ही है। यह अकेली शक्ति ही मनुष्य को सुप्रसिद्ध बना देती है। सभी विद्वानों में यह होती है। स्मृति-कन्या के रूप में ही कवि सरस्वती का प्रतिनिधि है। क्योंकि आदर्श संकल्प वाले व्यक्ति में स्मरण की शक्ति बड़ी बलवती होती है। क्विंटिलियन ने इसे 'प्रतिभा का माप' माना है।

ऐसा उल्लेख मिलता है कि एक बार व्वायलो ने डेगूसो के सामने एक पत्र या व्यंग्य पढ़ा जिसने उसे अभी लिखा था। डेगूसो ने बड़े शान्त भाव से कहा कि वह उसे पहले से ही जानता है और सबूत में उसने प्रारम्भ से अन्त तक सब पंक्तियाँ सुना दीं। व्वायलो को बड़ा आश्चर्य एवं दुःख हुआ। अन्त में उसने देखा कि स्मृति का वह चमत्कार था। डेगेसू की स्मृति बड़ी तीव्र थी।

अन्तःकरण अपने सभी अनुभवों को अपने अनुराग एवं उद्देश्य के अनुसार विघटित कर देता है। संयोग के कारण ही स्मृति हमारे अनुभवों को सजीव बनाये रखती है। ये संयोग भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में अलग-अलग होते हैं। कोई अलंकृत शब्दावली के द्वारा, कोई कारण-कार्य के सम्बन्ध से तथा कोई शौर्य, क्रोध या वासना के प्रसंग से बीती बातों को स्मृति पर लाते हैं। अधिकांश व्यक्तियों के दिमाग में स्मृति एक डायरी के सिवाय और कुछ नहीं होती—उस दिन मैंने एक नोट दिया था; दूसरे दिन गाय ने बच्चा दिया; उस दिन मेरी उँगली कट गई थी और उस दिन बैंक ने पैसा देना बन्द कर दिया था। इसके विपरीत, कुछ लोगों की स्मृति विज्ञान, कला, सुसंस्कार और चिन्तन का इतिहास होती है और इसी प्रकार दूसरे लोगों की स्मृति में जगत् के नियमों एवं अनुभव का प्रसंग रहता है। यह सूत्र या स्मरण-क्रम—यह वर्गीकरण व्यक्तियों में भेद-प्रभेद पैदा करता है—एक व्यक्ति व्यापार या ब्याज के कारण, दूसरा भावावेश द्वारा, और तीसरा नगण्य बाहरी निशानी, जैसे पोशाक या सम्पदा द्वारा किसी घटना को स्मरण करता है। कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो आत्म-प्रसंग के बिना कार्य-कारण-क्रम से घटनाओं की अवस्थिति में बहुत कम दिलचस्पी लेते हैं। ऐसा व्यक्ति बौद्धिक होता है। प्रकृति के प्रति उसमें रुचि है—पौधे, मछली, समय, स्थान, मन और व्यक्ति सबके अपने तरीके और नियम होते हैं—ऐसी उसकी स्थापना होती है। नेपोलियन ऐसा ही व्यक्ति था और इसी ने उसकी रक्षा की है।

लेकिन हमारे जीवन को एक-साथ सम्बद्ध बनाये रखने वाली इस रहस्य-मयी शक्ति की अपनी उच्छृङ्खलताएँ और बाधाएँ भी होती हैं। कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता है मानो स्मृति का भी अपना निजी व्यक्तित्व है वह हमारी इच्छानुसार नहीं, बल्कि अपनी इच्छा से अपनी सूचनाएँ कभी हमको देने लगती है और कभी नहीं। इसीलिए कभी-कभी हम अपने-आपसे पूछ बैठते हैं कि हमारे भीतर का स्थायी निवासी होने के बजाय स्मृति शायद एक आगन्तुक-मात्र तो नहीं है! क्या स्मृति वह बूढ़ी चाची है जो घर में

भीतर एवं बाहर घूमा करती है और समय-समय पर अतीत के समय एवं व्यक्तियों की कहानियाँ सुनाया करती है, जिन्हें मैं ऐसे ही पहचान लेता हूँ जैसे मैंने उन्हें पहले कभी देखा हो और जब वह चली जाती है तो मैं उन कहानियों के चिह्नों की व्यर्थ खोज किया करता हूँ।

साधारण भौतिक अनुभवों के द्वारा ही हम मानसिक प्रक्रिया के तरीकों को हस्तगत कर सकते हैं। अच्छे स्प्रिंग वाला चाकू, ठीक पकड़ने वाला चिमटा, लोहे का फंदा, लूम और घड़ी जो अपने उद्देश्यों की पूरी पूर्ति करते हों—और इनके मुकाबले में उन औजारों को रखा जाय जो अच्छे कारीगर नहीं हों तो हमारे सामने तेज और सशक्त अनुभव का अन्तर स्पष्ट हो जाता है। फ्रैंकलिन, स्विफ्ट, वेब्स्टर या रिचार्ड ओवेन और किसी सामान्य व्यक्ति द्वारा देखे गए समान दृश्य की अनुभूतियों का अन्तर इनसे ठीक समझ में आ जाता है। ये अनुभूतियाँ मानो मोम या रेत पर लगाई गई छापें हैं। बर्क, शेरिडन या वेब्स्टर या अन्य कोई वक्ता जब हमें अपनी वक्तृत्व-कला से चकित कर देता है तो उसके पास वर्तमान के उपयोग में आने वाला ऐसा ही तेज औजार सदैव रहता है। कोई पुरानी कहानी, कोई घटना उसे याद रहती है जो उस बात को पुष्ट करती है जिसे आज वह प्रमाणित करना चाह रहा है और यह घटना वहम से ज्यादा उपयोगी सिद्ध होती है। भाषण की जितनी गहराई में वह जाता है, उतना ही व्यापक वह देखता है; ऐसा प्रतीत होता है मानो उसे पहले की देखी सब बातें याद हैं। यह प्रसंग यह प्रमाणित करता है कि अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा उसकी पर्यवेक्षण-शक्ति प्रबल है—उसका अन्तःकरण जिसे पकड़ लेता है उसे छोड़ता नहीं। यह 'बुल-डाग' का काटना है कि उसके दाँतों को ढीला करने के लिए आपको उसका सिर ही काटना पड़ेगा। स्मृति की यह घातक संकीर्णता हमें भली नहीं मालूम होती। भविष्य के ज्ञान कोष के लिए हम बहुत ही थोड़ी अनुभव-सामग्री एकत्र कर पाते हैं और जो-कुछ होती है वह भी समय पर कहाँ काम आती है ? जब हम पिछली बातों को दोहराते हैं तो ऐसा ज्ञात होता है कि मानो हमारा कोष बाल्यकाल के कोष से अधिक बड़ा नहीं है।

आखिर, आपके पास है क्या? दो-तीन दिन या हफ्ते-भर की सामग्री अथवा गत मास में पढ़ी गई पुस्तकें। आपकी बातचीत, आपके हाव-भाव, चेहरा और तरीका बुद्धि की किसी बड़ी सामग्री का परिचय नहीं देते। अफसोस! आपने जो उपार्जन किया है उसके लिए उतना ही खोया भी है और इस-लिए आप उत्कर्ष को प्राप्त नहीं हो सकते। आपका गुल्लक बस इतना ही थोड़ा खींच सकता है। जैसे-जैसे आप अपना जीवन बिताते चलते हैं वैसे-वैसे आपका गुल्लक थोड़े के नये पद एकत्र करता जाता है किन्तु परिस्थिति यह है कि जैसे ही एक नया पद्य जुड़ता है वैसे एक गिरता भी जाता है।

जिस प्रकार एक जंगली घोड़ा ट्रेनिंग के समय के अपने खोये हुए बल को वापस नहीं प्राप्त कर सकता और जिस प्रकार बालकों और बर्बरों को गहरी नींद आती है—ऐसी गहरी जैसी कि भालुओं की बेहोशी हो—और ऐसी नींद सुसभ्य कहे जाने वाले नागरिक स्त्री-पुरुषों की आँखों पर कभी नहीं उतरती; उसी प्रकार बालकों और युवकों की स्मृति होती है जो इस काल में सीखी गई बातों को कभी नहीं भूल सकती। शायद दुनिया के प्रारम्भ-काल में हमारी स्मृति अत्यन्त बलवती रही होगी। प्लेटो लेखन की बर्बर आविष्कार के रूप में निन्दा करता है; क्योंकि वह स्मृति को कमज़ोर बना देता। एथेंस के रैप्सोडिस्ट होमर का कोई अंश आपकी इच्छानुसार तत्काल सुना सकते थे।

यदि लेखन से स्मृति कमज़ोर हो जाती है तो मुद्रण का तो प्रश्न ही क्या है! समाचार-पत्र एक निरे स्पंज या विस्मृति के आविष्कार के सिवाय और क्या है! स्मृति का नियम है कि एक बात के प्रवेश पर दूसरी बाहर निकल जाती है और सिर्फ वही बात वहाँ स्थायी रूप से टिकती है जिसे हमारे अनुराग ने सजीव बना दिया है।

मन का रहस्य ठोस विस्तार करने में है। घटनाओं की सूची में सिर्फ एक एक घटना और जोड़ते रहना उसका धर्म नहीं है। निर्बल स्मरण-शक्ति का अभिप्राय है उथले विचार। हमारे विचार जितने गहरे होंगे उनका आकर्षण भी उतना ही प्रबल होगा। हमारी समझ थोड़े-से अनुभवों को एक ही

लड़ी में पिरो सकती है। लेकिन सत्य का कोई सिद्धान्त सारे विश्व को संवेदित और फिर से वितरित कर देता है।

लेकिन स्मृति का दोष सदैव प्रतिभा की कमी ही नहीं साबित करता है। कभी-कभी प्रतिभा की विशेषता के कारण भी ऐसा होता है। इस प्रकार तत्पर बुद्धि के महान् व्यक्ति, जो सदैव अवसरोचित निपुणता का परिचय देते हैं, अतीत में एकत्र कोष की कोई अपेक्षा नहीं रखते; किन्तु वर्तमान में अतीत की भाँति ही गहराई से सोच-विचार सकते हैं और अगर वे किसी भूतकालीन नियम को याद नहीं कर सकते तो वे वैसा ही दूसरा नियम भी बना सकते हैं। यह बात सच है कि उर्वरबुद्धि के लोगों की स्मृति निर्बल होती है। जब बातचीत उसके आविष्कारों और उनके नतीजों पर आई तो सर आइज़क न्यूटन बड़ा परेशान हु ा। वह उनकी याद नहीं कर सका किन्तु उससे वस्तुओं का कार्य-कारण-सम्बन्धी कोई प्रश्न पूछा जाता तो वह उसी क्षण उत्तर दे सकता था।

एक व्यक्ति अगर यह विश्वास करता है कि चुम्बक-तत्त्व सिर्फ एक सिलसिलेवार परिमाण है और जब वह एक शब्द या विचार एकत्र करता है तो साथ ही एक खोता भी है, तो वह नया विज्ञान या पुस्तक या वाक्य-समूह पढ़ने के पहले दो बार सोचेगा। लेकिन यह अनुभव इतना बुरा नहीं है। विदेशी भाषा सीखने में प्रत्येक नया शब्द एक लैम्प की भाँति है जो सम्बन्धित शब्दों को प्रकाशित कर देता है और इस प्रकार स्मृति की सहायता करता है। पूरे वाक्य को समझने से एक शब्द-विशेष का सम्पूर्ण और सही अर्थ स्पष्ट हो जाता है और जब भाषा एवं लेखक की प्रतिभा से परिचय हो जाता है तो सारे वाक्य का सही अर्थ निकलने में बड़ी मदद मिलती है। नये विज्ञान के [illegible] अंग के साथ भी यही बा[illegible] परस्पर अर्थों का स्पष्टीक[illegible] प्रत्येक वाक्य सारी स[illegible] बना देता है।

[illegible] अनुभव जो

है [illegible] पूर्ति नहीं

यदि नये अनुभव कभी-कभी पुरानों को मिटा देते हैं तो भी हम शनैः-शनैः अन्तर्दृष्टि प्राप्त करते जाते हैं और क्योंकि सम्पूर्ण प्रकृति का एक नियम एक प्रयोजन है—एक कड़ी के साथ दूसरी सम्बद्ध है—तो हमारे ज्ञान से शेष प्रकृति के ज्ञान-कोष को लगातार सहायता ही मिलती है। इस प्रकार स्मृति-कोष के ये सब अनुभव एवं चित्र ब्याज-सहित सम्पत्ति हैं। और इस बढ़ती हुई कीमत की परिधि कौन खींचेगा ? क्या हम मनुष्यत्व के ऊँचे स्तरों पर पहुँचकर अपने पूर्वकालीन इतिहास को और भी अच्छी तरह स्मरण नहीं कर सकेंगे और समझ नहीं सकेंगे ?

वास्तुकला में कहावत है कि "महराब कभी सोती नहीं है।" मैं भी कहता हूँ कि अतीत कभी नहीं सोता; उसका काम चला ही करता है। प्रत्येक नई घटना के साथ अतीत के समाधिस्थ वर्षों से एक प्रकाश की किरण फूट निकलती है। नये ग्रन्थ का कौन मूल्यांकन कर सकता है ?—वही जिसने बहुत-सी पुस्तकें पढ़ी हों। नये सिद्धान्त को कौन समझ सकता है ?—वही जिसने ऐसे कई सिद्धान्त सीखे हों। नये मनुष्य की पहचान कौन कर सकता है ? वही जिसने अनेक मनुष्यों के साथ व्यवहार किया हो। अनुभवी और सुसंस्कृत व्यक्ति की स्थिति ऐसी है मानो वह एक भवन में बैठा है जिसमें चित्र टँगे हुए हैं और जो रोज सुन्दर बनाये जाते हैं और इस प्रकार आत्मा की यात्रा के प्रत्येक कदम पर वह अधिकाधिक उदात्त अनुभूतियाँ प्राप्त करता जाता है।

हम अल्प काल में ही जान जाते हैं कि हमारे अनुभवों में मान्यता की बड़ी विषमता है। कुछ विचार प्रयोग के समय ही नष्ट हो जाते हैं। कुछ दिन विचारों एवं भावों से ऐसे प्रकाशित हो उठते हैं मानो एक दिन हमारा एक वर्ष की भाँति समृद्ध बन जाता है। तथापि स्मृति सदैव इन मांगलिक दिनों को सँजोकर नहीं रखती। यह पानी एक बार यदि गिर जाता है तो फिर एकत्र नहीं किया जा सकता। एक आनन्दित दिन के विचारों में जितने नवीन आविष्कार हो सकते हैं उतने युगों में भी नहीं होते और जब मैं यह कहता हूँ तो समस्त विचारवान व्यक्तियों के अनुभवों को व्यक्त

कर रहा हूँ कि एक दिन या सप्ताह की उच्च प्रवृत्तियों में मैंने जो अनुभव प्राप्त किये हैं उनकी स्मृति से मुझे ज्यादा सुख मिलेगा अपेक्षाकृत इसके कि मैं एक सदी में प्रकाशित सभी पुस्तकें पढ़ जाऊँ।

स्मृति प्रकृति द्वारा प्रदत्त उन व्यक्तियों के लिए एक मुआवजा है जिन्होंने अपना जीवन अच्छी तरह बिताया है। जब वृद्धावस्था एवं दुर्भाग्य ने उनके अंगों को पंगु कर दिया है तो वे मानसिक क्षमता का आश्रय लेते हैं और उस पर ही एकाग्रतापूर्वक अवलम्बित रहते हैं। कवि, दार्शनिक, लँगड़े, वृद्ध, अन्धे और बीमार, दुर्भाग्य का पूरी शक्ति और धैर्य के साथ सामना करते हुए, कभी-कभी सारी विपत्तियों एवं क्षतियों के बीच ऐसी शक्ति की प्रेरणा पा जाते हैं जो उन्हें अपने यौवनकाल एवं सृजन के समय भी नहीं मिलती थी।

स्मृति की प्रशंसा का मैं कायल हूँ। और स्मृति किस प्रकार प्रशंसा करती है?—सर्वोत्कृष्ट को दृढ़ता से पकड़े रहकर। एक बार जिन विचारों को अभीष्ट समझा गया है उनको जीवित रखते हुए ही कोई विचार स्मृति में अपना असली दर्जा प्राप्त करता है। उसके एक सुभाषित से ही एनेक्ज़ागोरस को प्लेटो याद किया करता था। जब हम अपने प्रिय व्यक्तियों या बातों को याद करते हैं तो अक्सर किसी प्रिय विचार या कार्य के प्रसंग में ही ऐसा कर पाते हैं।

क्या आपने स्मृति की संजीवनी क्रिया देखी है? कोई क्षुद्र बात जन्मते ही मर जाती है। स्मृति उसे अपने स्वर्ग में पकड़ ले जाती है और उसे अमृत से नहला देती है। तब हजार बार वह बात जीती है और बार-बार प्रकट होती है—और प्रत्येक बार अभिनव एवं गौरवान्वित एकान्त या अँधेरे में हम यौवन के उज्ज्वल मार्गों पर फिर चलने लगते हैं। सघन बस्ती में बसे हुए भी हम गाँव के हरे-भरे खेतों और पेड़ों की शीतल छाया का आनन्द ले सकते हैं। नदी के एकान्त किनारे पर घूमते हुए हम अपने पहले के साथियों के आनन्दित वाक्य सुन सकते हैं और लड़कपन में काव्य के जिस आह्लादक संगीत को सुनकर हम झूम उठते थे वह अपनी कोमलता में

हमारे कानों में फिर गूँजने लगता है। इसी तरह वह स्रोत बह रहा होगा, यद्यपि आप उसे नहीं सुन सकते। पेड़ प्रकृति से अपना जीवन-रस ले रहे होंगे और बदले में सौन्दर्य लुटा रहे होंगे। लेकिन आपको वहाँ जाने की जरूरत नहीं। अतीत के वसन्त की मँडराने वाली तस्वीरों में वह स्रोत आपके लिए बहता है और वे पेड़ आपके लिए सौन्दर्य का अर्घ्य चढ़ा रहे हैं। अच्छी या बुरी संगति में आप अपने-आपको चारों ओर से समेट लेते हैं, सभी विषादमय परिस्थितियों से अपने को निर्लिप्त बना लेते हैं तब आपके सामने जीवन के सर्वोच्च क्षण और मित्र एकत्र हो जाते हैं—

"कमनीय स्मृति के साम्राज्य माधुर्य बरसा रहे हैं।"

आप अपनी इन्द्रियों में मिट सकते हैं, किन्तु अपनी स्मृति एवं कल्पना में नहीं।

सुखों को समेटने और दुःखों को छाँटने की बड़ी सुन्दर कला स्मृति के पास होती है। वसन्त में जब कोयल आती है तो कुछ दिन के बाद उसकी वाणी अपना पहले का माधुर्य खो देती है और इस प्रकार समय अपनी उन्मयता खोता जाता है। किन्तु जब पतझड़ में कभी कोयल का स्वर हमारे कानों में पड़ जाता है तो वह और भी मीठा लगता है, क्योंकि वह हमको पतझड़ के बीच वसन्त की याद दिलाता है। ये सब स्मृति की करामातें हैं। सर्वाधिक रोमाटिक सत्य से भी अधिक रोमाटिक हमारी स्मृति होती है। किसी अनुभव के साथ लिपटे दुःख को हटाते हुए एवं दुर्भाग्य के करुणतम क्षणों को शान्ति और कभी-कभी विवेकपूर्ण आनन्द के साथ सजीव करते हुए भी हमने प्रायः स्मृति को देखा है। अनुराग के अनुरूप ही स्मृति होती है। सेम्पसन रीड का मत है—"स्मृति को संग्रह करने का सच्चा पथ अनुराग को विकसित करना है।" स्मारक-ग्रन्थ प्रेम का प्रतीक ही तो है। 'मुझे याद किया कीजिए' का अर्थ यही है कि मुझसे प्रेम करना बन्द मत कीजिए। हम जिनसे प्रेम या घृणा करते हैं उन्हें स्मृति में रखते हैं। ऋण वापस लेने और अपमान के विषय में सब की स्मृति बड़ी प्रबल होती है। जॉनसन ने कहा है कि "पहले किसने उनका अपमान किया था इसे वे याद कर सकते हैं।"

प्रत्येक कलाकार अपनी कला के विषय में सदैव सजीव बना रहता है। ईरानियों में कहावत है—"सच्चा गायक अपने पहले सीखे गीत को कभी नहीं भूलेगा।" माइकेल एंजिलो किसी दूसरे कलाकार के शिल्प को इतनी अच्छी तरह याद रखता था कि आवश्यकता पड़ने पर उसके किसी अंश का इस प्रकार उपयोग कर लेता था कि कोई उसे पहचान नहीं सके।

जिसे हम समझ लेते हैं उसे हम याद रख सकते हैं और जिसे हम चाहते हैं उसे ही हम अच्छी तरह समझ सकते हैं। क्योंकि इससे हमारे ध्यान की शक्ति दोहरी हो जाती है और ऐसे दृश्य या अनुभव को हम अपना बना लेते हैं। ओसावाटोमी का कप्तान जॉन ब्राउन कहता था कि मेरे ओहियो के तबेले में तीन हजार भेड़ें हैं और किसी भी नई भेड़ को वह देखते ही पहचान जाता है। मेरे पड़ोस के एक चरवाहे ने मुझे बताया था कि एक बार देखने पर वह किसी भी गाय, बैल या साँड को पहचान सकता है। एबल लाटन कांकार्ड से देहात में जाने वाले प्रत्येक घोड़े को पहचानता था। इससे भी ऊँचे उदाहरणों में प्रत्येक व्यक्ति की स्मृति उसकी कर्म-रेखा में ही सीमित रहती है।

प्रकृति का शिक्षण हमको ऐसा बना देता है कि संसार के कई वैचित्र्य एवं चमत्कार हमारे सामने सामान्य बातें बन जाते हैं। स्मृति की बात के साथ ग्रोटियस एवं डेगेसू के सुन्दर उदाहरण भी दीजिए और तब मैं सोचने लगता हूँ कि यह शक्ति कितनी भयावह है और कौन सा वरदान एवं अभिशाप वह दिया करती है। अब एक चपल छात्रा को लीजिए जो सुनी हुई सब बातें याद रख सकती है। पाठ्य पुस्तकों की सारी कविताएँ, धर्म की ऋचाएँ और पुस्तकों की अपरिमित जानकारी उसके दिमाग में साकार मौजूद है। क्या यहाँ स्मृति को हम एक औषध नहीं कहेंगे? इतनी सरलता से यह सारी बातें उसकी स्मृति में झूल रही हैं 'मानो किसी देहाती लड़के के सिर के घने बाल उग रहे हों—या मानों कई गँवई कुत्तों के बालों का ढेर एकत्र कर दिया गया हो।' स्मृतियों का यह बेतरतीब ढेर, जो बालिका के दिमाग में दृढ़ता से बद्धमूल है और बुलाने पर प्रकट हो जाता है,

वास्तव में वाछित नहीं है। स्मृति के सम्बन्ध में पूरी जानकारी रखने वाला एक अनुभवी विद्वान् इस अद्भुत शक्ति का ऐसा दुरुपयोग देखकर आश्चर्य और क्षोभ से भर जायगा।

कमज़ोर स्मृति को चंगा करने के लिए जो कोई डॉक्टर मुझे नुस्खा बता सकेगा उसे मैं बड़ा प्रवीण समझूँगा। अनुभव के आधार पर इस प्रसंग की कुछ सूचनाएँ हमारे पास, वास्तव में, हैं भी। इसके लिए सबसे पहली आवश्यकता है स्वास्थ्य। यह देखा गया है कि जब हमारे दिमाग मुक्त रहते हैं और हमारे अंग-प्रत्यंग अपने कार्य भली-भाँति करते रहते हैं तो हमारी स्मृति भी बड़ी प्रबल रहती है। आवेगों के अभाव में और भोजन के परहेज पर जब शरीर निष्क्रिय-सा हो जाता है तो वह बुद्धि का ही आज्ञाकारी माध्यम बन जाता है। क्योंकि पेट और भूख के द्वन्द्व एवं अजीर्ण की पीड़ाओं से संतप्त यह मानव-देह ही विस्मृति का साधन है। विद्वानों के पुराने नियम की अभिव्यक्ति देते हुए फुलर ने कहा है—"रात-भर कील ठोकते रहना और सवेरे उसे मजबूत बनाना सबसे अच्छी बात है।" इस नियम को मैं थोड़ा और विस्तृत करके यह कहूँगा कि "हाँ, इस सप्ताह कील ठोकिए और अगले सप्ताह उसे जमाइए—इस वर्ष ठोकिए और अगले वर्ष उसे मजबूत बनाइए।" शरीर और विस्मृति के प्रसंग में, इस बात को देखते हुए कि सोते समय हमारी इच्छा-शक्ति के शिथिल पड़ने पर भी मानसिक कार्य का रहस्यपूर्ण क्रम जारी रहता है, यह नियम बड़े महत्त्व का है। लेकिन भाग्य भी एक कलाकार है। सुन्दर नियमों के अनुसार हम भूल भी तो जाया करते हैं। थोरो कहता है—"जिन चीजों को आप भूल सकते हो उनका महत्त्व ही क्या हो सकता है? एक छोटा विचार सारे विश्व का सेक्सटन (चर्च का दारोगा) हो जाता है।"

हमें अपने साथ थोड़ी सख्ती भी करनी चाहिए और जिस चीज को हम काबू में रखना चाहते हैं उसे हमें पूरी तरह अधिकार में कर लेना चाहिए। तब हमारा देखा हुआ दृश्य केवल इन्द्रियों द्वारा अंकित चित्र ही नहीं बना रहेगा बल्कि उसके नियम की याद दिलायगा और वह बुद्धि के

लिए एक सम्पत्ति बन जायगी। ऐसी स्थिति में हम अन्य सब गौण बातों से मुक्त हो जाते हैं और इच्छा-शक्ति के बजाय एक ही बिंदु पर सारा ध्यान केन्द्रित कर देते हैं। अध्ययन और अन्य बातों एवं व्यक्तियों को याद रखने के लिए भी हमें यही करना होगा। मैं कई बार फ्लेमस्टीड का नाम भूल जाया करता हूँ लेकिन न्यूटन का कभी नहीं; एलिज़ाबेथन युग के कई कवियों को मैं आसानी से छोड़ सकता हूँ किन्तु शेक्सपियर को नहीं। किसी व्यक्ति या वस्तु के केन्द्रित महत्त्व पर एकाग्रता के कारण ही यह होता है। स्मृति के प्रसंग का सबसे बड़ा रहस्य यही है। जिसे भुला देना चाहिए उसे हम बड़ी तेज़ी से भूल जाते हैं। कहानियों एवं चुटकुलों का व्यापक प्रयोजन यही होता है कि नाम, तिथि और स्थान भूलने की हमारी मनोवृत्ति होती है। मार्गरेट फुलर ने कहा है कि, "नाम, तारीख और स्थान भूलकर बच्चे कितनी सही दिशा में रहते हैं!"

अतीत के ऋण की आप अतिशयोक्ति कर सकते हैं लेकिन क्या वर्तमान का कोई दावा ही नहीं? यह पुरानी स्मृति तो लश्कर का असबाब ही है, लेकिन लश्कर कहाँ है? दिव्य वरदान अतीत नहीं है, वर्तमान है। हाल की जिन्दगी जो आदान-प्रदान करती है वही दैवी है, क्योंकि यह ऐसा जीवन है जो अतीत को उस सर्वशक्तिमत्ता में दफ़ना देता है जिसके आश्रय से वह सब चीज़ों को फिर से नवीन बनाता है। मानसिक क्रिया की तीव्र गति जीवन के लम्बे होने के सदृश है। यदि आपके दिमाग से कई विचार गुज़रते हैं तो आप यह विश्वास करने लगेंगे कि घंटों एवं दिनों का काफी अरसा बीत गया है। सपने में यही होता है। कई विचार, अनुभव, कार्य-कलाप और व्यक्ति आते-जाते हैं—बड़ी भीड़ ज्ञात होती है; लेकिन जब हम जागते और घड़ी देखते हैं तो एक लम्बी रात के बजाय थोड़ा-सा समय ही हमें गुज़रा दीखता है—हमें आश्चर्य हुए बिना नहीं रहता। अफीमची कहता है, "कभी-कभी मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मैं एक रात में ७० या १०० वर्ष जीता हूँ।" डूबने से बचाए गए कुछ व्यक्तियों के अनुभवों के विषय में तो आपको मालूम ही होगा। वे बयान करते हैं कि उनका सारा जीवन-इतिहास

संदेश में उनके सामने गुजरता प्रतीत होता है। जो-कुछ उन्होंने किया है उस सबको वे एक क्षण में याद कर लेते हैं।

यदि हम इस अद्भुत शक्ति के विषय में अधिक विचार करें और उसकी स्वाभाविक सहायता पर सम्मति दें तथा यह देखें कि किस प्रकार नया ज्ञान पुराने को जगाता है—नया पुराने को कितनी अप्रत्याशित मान्यता देता है तो हमारे सामने यही स्पष्ट होगा कि केवल उपयोग के द्वारा ही हमारी स्मरण-शक्ति में अनन्त शक्ति का विस्तार हो सकता है और स्मरण-शक्ति एवं ज्ञेय के परिमाण में कोई अनुपात होना चाहिए तथा जबकि सारा विश्व ही हमारे सामने एक खुली पुस्तक है तो स्मृति की पहुँच भी काफी व्यापक होनी चाहिए। स्मृति का सारा खेल सम्बन्धों और सूचनाओं का है जिसे हम मुश्किल से याद रखने की कोशिश करते हैं। वह अकस्मात् जब किसी प्रसंग के साथ सम्बद्ध हो जाता है तो ग्रह की भाँति मानो वह अपनी धुरी में कैद हो जाता है (इसके साथ ही अन्य धुरी, नियम या प्रणाली, जिसका वह अंश है, सनातन स्मारक बन जाती है)

चित्त के विचार-प्रसार के साथ और प्रत्येक गहरी होती जाने वाली दीर्घ-दृष्टि के साथ उसकी पुनरावृत्ति का दायरा भी चौड़ा होता जाता है। आज के कर्तव्य या कार्य में प्रत्येक नवीन अंतर्दृष्टि के साथ हम अतीत का नया अधिकार भी पाते हैं।

जब हम परम्पराओं के बजाय सिद्धान्तों, आवेश के बजाय अंतःकरण के नियम-पालन का जीवन बिताते हैं तो वह महान् चित्-शक्ति हमारे भीतर प्रवेश करती है—आज की तरह टुकड़ों और विशृङ्खल विचारों में नहीं। तब आज का आलोक आगे एवं पीछे दोनों दिशाओं में अपना प्रकाश फैलायगा।

स्मृति भावी अधिकार की प्रबल सम्भावना होती है। आज तो हम अधूरे हैं। हम अतीत को देखते हैं, भविष्य को नहीं; लेकिन आगामी काल में यह गोलार्द्ध पूरा हो जायगा और अतीत-दृष्टि की तरह ही भविष्य-दृष्टि भी पूरी विकसित हो उठेगी।

किन्तु तुम जानो बस इतना—
अर्ध-देवता जाते हैं जब—
तभी आते हैं देवाधिदेव !

समस्या

मुझे पसन्द है चर्च; पसन्द है 'भिक्षुक' का टोपा
मुझे प्रेम है आत्मा के पैगम्बर से;
हृदय पर मेरे, मठों के पथ—
उतरते हैं गीतों से मधुर, या मुस्कानों से ध्यानमग्न :
लेकिन इसमें नहीं है विश्वास का रंग
होता यदि मैं भी एक चर्च का पादरी !
लुभाते हैं क्यों ये उसके वस्त्र
जिन्हें मैं चाहता नहीं अपने तन पर ?
मिथ्या या उथले विचार से नहीं
लाया था फीडियस अपना भयावह भगवान् !
और डेल्फिक की भविष्यवाणियाँ भी—
नहीं निःसृत होती थीं चंचल अधरों से;
प्रकृति के हृदय की लहरों से उत्तुङ्ग,
मुखरित हो पाया था बाइबिल का सन्देश;
राष्ट्रों के धर्म-प्रचारकों ने खोली थीं
जिह्वाएँ प्रज्वलित ज्वालामुखी-जैसी।
उपर से नीचे तक थी प्रज्वलित शिखाएँ,
प्रेम और शोक के गीत दिव्यतम,
पीटर का गुम्बद बना था हाथ से जिस,
और बने थे मार्ग क्रिश्चियन रोम के—
उसमें था कितना दुःखद सत्य छिपा !
हो न सका वह मुक्त स्वयं ईश्वर से

अपनी कला की थाह उसे थी, अज्ञात,
एक सचेत पाषाण बन गया था सौन्दर्य।
पक्षी ने नीड़ में वहाँ क्या बुना कुछ ज्ञात है—
पत्ते और अपने सदय वक्ष के पंख ?
या कैसी करती है चित्रकारी घोंघे पर मछली
प्रभात की किरणों से रँगती है, वर्ष-भर, प्रतिदिन ?
कैसे ये शीशम के पेड़ पुनीत, भरते हैं,
पुरातन पत्तों में पत्र नवीन अगणित ?
बने हैं ये मठ और चर्च ऐसे ही सब—
भय और प्रेम के हाथों से अगणित।
पार्थेनान का वरण करती है वसुधा सगर्व
जैसे हो वह उसका रत्न बड़ा अनमोल,
और मत्रोदय खोलता पलकें अपनी सत्वर
पिरामिड देखने को अद्भुत, एकटक;
इंगलैण्ड के मठों पर झुक जाता आसमान—
मानो आत्मीयता उमड़ पड़ी हो मैत्री के डर से
विचार के अन्तर-कक्षों से उठकर, ऊपर,
साकार हुए हैं वायु में ये वैचित्र्य;
प्रकृति ने भी इन्हें अपनाया सहर्ष
बनाया वंशज, प्यार से शाश्वत और सनातन—
काल से बचाकर, दिया उन्हें अमरत्व
जैसे अमर हुए एण्डीज और अरारात !
दूर्वादल की भाँति उगे हैं ये मठ-मंदिर,
कला मानती आदेश, किन्तु यहीं तक है गति।
उस मौन कलाकार ने बढ़ाया अपना
उस विराट आत्मा को, जो है सर्वत्र
और निर्माण किया तीर्थों का जिसने—

मैं देख रहा मेरे चारों उसका मित्र, प्रिय;
और यद्यपि देख सका मैं उसका विशाल सदन
तो भी मैं पादरी बन नहीं सकता सफल !

हेमाड्रेया

बकले, हंट, विलार्ड, हास्मेर, मेरियम, फ्लिण्ट,
अधिकारी हैं उस भूमि के जो उन्हें देती है, श्रम से

घास, अनाज, कंद, पटसन, सेव, अन्न और लकड़ी उनको
अपने खेतों के बीच घूमा है इनमें से जमींदार प्रत्येक—
और यह कहता : "यह मेरा है सब, मेरा और बच्चों का मेरे।
मेरे इन कुञ्जों में पछुवा हवाएँ लगती हैं, कितनी मधुर।
इन टीलों पर मेरे, कितने सुन्दर हैं छाया के स्तर!
ये निर्मल जल-स्रोत और ध्वजाएँ ये गर्वोन्नत,
मुझे जानते हैं जैसा मेरा कुत्ता : आत्मीयता है इसमें एक,
मुझे विश्वास है कि कर्मों में मेरे है यही भूखी गन्ध।"
कहाँ हैं वे लोग? अपनी भूमि के नीचे सुप्त :
और उन्हीं-जैसे मोह-मुग्ध अजनबी चला रहे हल वहाँ!
सुमनों में हँस पड़ती है भूमि, गर्व देख शिशुओं का निज—
कितना गर्व उन्हें उस भू पर जो नहीं कभी उनकी;
जो चलाते हैं हल क्या वे कब्रों से उनके पैर
कभी कर सकते हैं दूर!
घाटी से शैल-शिखर, स्रोत से बना तालाब,
देख निज साम्राज्य तुष्टि मिली मानव को;
"यह होगा अच्छा चरागाह, यह उपवन सुन्दर;
मिट्टी, चूना, पत्थर, कंकड़ सभी चाहिए हमको,
वे ढालू मैदान जहाँ मिलेगा ईंधन हमको;
भरी-पुरी भूमि—जाती है दक्षिण-पथ तक;
सागर-पार से जब हम आते वापस—
तो मन खिल उठता देख विस्तार निज भूमि का।"
आह! नहीं देखते मृत्यु, ये अन्धे स्वामी भू के;
जो ढेले की तरह मिला देती उन्हें निज भू में!
सुनो, है क्या वसुधा की वाणी :
"मेरा और तेरा;
मेरा न तेरा;

वसुधा झेलती है
नक्षत्र अविचल हैं—
जगमग जिनसे सिंधु पुरातन;
पुरातन हैं ये तट भी तो
किन्तु कहाँ हैं मानव पुरातन ?
प्रचुर देखा कितना मैंने—
किन्तु देखा कभी न मैंने इतना !
"वकील का मसौदा
ठीक है, बिलकुल
बनाता है अधिकारी
उन सबको
जो होते जाते हैं पैदा;
निश्चित रूप से
सदा के लिए।
यह है भूमि
जंगलों से ऊबड़-खाबड़
घाटी भी है इसमें पुरानी
टीले हैं और है बाढ़ भी।
लेकिन कहाँ हैं उत्तराधिकारी ?
लुप्त हो गए बाढ़ के फेन से !
वकील और कानून,
और राज्य-साम्राज्य
यहाँ से उखड़ गए अशेष।
वे कहते मुझको अपना—
रखते मुझ पर जो अधिकार
फिर भी उनमें से प्रत्येक
जो यहाँ चाहता रहना—वह हो गया विदा

सरल मुख था आलोकित—
बालारुण निकला था प्राची में
खो चुकी उसे हैं ये रश्मियाँ
ढूँढ-ढूँढकर श्रांत-क्लांत है, असीम !
बाँध सकेंगी किन्तु क्या ये उसको ?
वापस लौट यह वायु दक्षिण का खोज रहा
किसलय नन्हें-कोमल-उभर रहीं शाखाएँ भी;
किन्तु कहाँ है वह मानव कलिका-सा
खोकर प्रकृति ढूँढ सकेगी क्या ?
भाग्य ने गिरा दिया निज क्रोड़ से, उठा सकेगा क्या ?
प्रकृति, भाग्य, मानव खोजते हो कौन सी मरीचिका ?
ओ, मेरे यात्री, ज्ञानी और मनोहर
चले तुम किस गन्तव्य को ?
था मुझे अधिकार कुछ दिवस पूर्व
देखने को पथ तुम्हारा और गंतव्य भी;
किन्तु कैसे खो दिया अधिकार मैंने ?
भूल गए नव मोद में क्या तुम मुझे ?
किलकारियाँ प्रतिध्वनित तुम्हारी
हो रहीं आज भी, हे प्राणवल्लभ !
धूम्र-सी मँडराती हैं ध्वनियाँ सुमधुर,
जिन्हें सुनने को उत्सुक थे आबाल-वृद्ध
भूल सभी सुख-दुःख का संसार—
वय और विवेक की काराएँ फोड़;
वृद्ध और महिलाएँ अति सुन्दर,
खेलते साथ तुम्हारे समोद;
छोड़ जगत् का सारा जटिल प्रवाह—
खेल-खिलौनों के साथ तुम्हारे, तन्मय—

भावाभोर हो जाते मानो पाकर शैशव अपना।
आज तरसते हैं वे सुनने को वह तुतली वाणी—
शैशव की सरल-चपल मनुहारें जो
अधर-सम्पुट से बिखर जाती थीं अनजान!

• • •

मिथ्या था मेरा प्रेम, भ्रांति थी मेरा गर्व,
फेंकता हूँ जहाँ भी वह रिक्त दृष्टि!
शिथिल पड़े हैं उसके खेल, मानो शव हैं,
निर्जीव हो गईं उसकी रसमय रमण की योजनाएँ।
वह है छिद्र बालू में उसने बनाया था कभी
और वहाँ बने ये महल रज-कण की बुनियादों पर;
छिपकर वहाँ बैठता था वह कुञ्ज-केन्द्र में,
विपिन का पग-पग उसके पदाघात से
आज भी हो उठता है अनुप्राणित, संजीवित!
वहाँ सड़क से देखता था वह जल-स्रोत—
लहरों की इन्द्रधनुषी तरंगों का अंचल!
विपिन, स्रोत सभी आज भी हैं सजीव,
नहीं कहीं परिवर्तन का आवेग!
किन्तु कहाँ है वह शिशु, अगाध आँखों वाला!
उस छाया-सघन दिवस को—
सघन मेघों से आच्छादित, आँधियों से भी श्याम,
प्राणों का ज्वर किया समर्पण तुमने
सुबक-सुबक पक्षी से सो गए गोद में सलू की;
आई निशा, प्रकृति ने देखा नहीं तुम्हें;
"दुख में हम दोनों हैं सहचर"—कहा मैंने,
भोर हुआ, था प्रकाश अवाछित-सा,
पक्षी कलरव करते—दुर्ग बाँग देते रहे!

किया स्नेहदान तुमने गृह पर पिता का कभी,
जिनकी अगाध दृष्टि में,
आगत युगों के कल्याण पढ़ते थे मानव !
उफ, मैं हो गया निरीह !
जग ने निरादर किया—उसे छोड़ गए तुम !

० ० ०

मिला यह उत्तर अन्तराल से—"तू रोता है ?
ओ, मेरे उपासक रोता है तू ?
दृष्टि जो दी मैंने तुम्हें—कहाँ है वह ?
कर्मकांड, बाइबिल और परे वाणी से भी,
हृदय को जो शिक्षा दी थी मैंने तेरे,
अक्षरों में पारदर्शी लिखा था मन पर तेरे
और जो प्रज्वलित थी कोटि-कोटि सूर्यों से !
शब्दों से दूर, दूर विश्वास से भी,
एवं अतीत वेदना के इस दुर्वचन से;
प्रकृति के रहस्य गहरे अन्तराल के
जिन्हें व्यक्त कर सकती नहीं सरस्वती भी—
वह लिपि तेरे वक्ष की साँस-साँस में है लिखी
और जो मेट देती है सभी भेद-विभेद को !

० ० ०

खोलेगा कपाट क्या नहीं तू हृदय के—जानने को यह,
सिखाता इन्द्रधनुष क्या ? सन्ध्या क्या ?
मानव की भाग्यलिपि प्रलम्ब के ही
ये बिखर पड़े हैं वाक्य सब !
धरा की वाणी उतरती फिर धरा पर !
और प्रार्थना में साधुओं की वे विदग्ध—
कह रहीं—अद्भुत है संसृति,

है सत्य, सनातन एक-मात्र परमात्मा;
हृदय तो है मृत्तिका, किन्तु उनका स्नेह अमर;
मिलेगा वही स्नेह तुझे फिर !
नियन्ता की कर तू प्रार्थना, दृष्टि में बसा
उसकी सृष्टि को, और गगन के उन रहस्यों को !
फौलाद, सोने के नहीं बने वे वज्र-से
नहीं रहते सुरक्षित बाढ़ से परिवर्तन की,
पखुड़ियों, तृणों और घास के हैं घोंसले—
या पथिक का तम्बू नित चलायमान—
या आँधी पर तना है इन्द्रधनुष—
आँसुओं और ज्वालाओं से पुनीत
और साध्य तक गतिशील साधन से है यह बना।
इसमें है जीवन का अवलम्ब और साहस की बुनियाद
क्षीण कृत्यों से नहीं किन्तु कर्मों से बना है सजीव !

: १० :

व्यक्ति : मूल्यांकन

थोरो

हेनरी डेविड थोरो जर्सी द्वीप से इस देश में आकर बसने वाले एक फ्रेंच वंशज की अन्तिम पुत्र-संतान था। उसके आचरण में फ्रांसीसी रक्त की विशेषताओं के साथ-साथ सैक्सन प्रतिभा का अपूर्व मिश्रण भी अक्सर व्यक्त हो जाता था।

१२ जुलाई, १८१७ में वह मेसेचुसेट्स के कांकार्ड में पैदा हुआ था और १८३७ में, बिना किसी साहित्यिक विशेषता के हार्वर्ड कालेज से ग्रेजुएट हो गया। साहित्य-क्षेत्र में वह मूर्ति-भंजक था और उसने अपने विकास के लिए कालेजों की कृतज्ञता कभी नहीं स्वीकार की—यद्यपि उसे वहाँ अपरिमित लाभ मिला था। विश्वविद्यालय छोड़ने के बाद वह अपने भाई के साथ एक स्कूल में शिक्षक बन गया। लेकिन शीघ्र ही उसने वहाँ से काम छोड़ दिया और अपने पिता के पेंसिल बनाने के व्यापार में इस निश्चय को लेकर शामिल हो गया कि वह प्रचलित पेंसिल के बजाय अच्छी पेंसिलों का निर्माण करेगा। अपने प्रयोगों की समाप्ति के बाद उसने बोस्टन के केमिस्टों और कारीगरों को अपनी पेंसिल दिखाई और उनसे पेंसिल बनाने के प्रमाण-पत्र प्राप्त कर लिए—उन्होंने घोषित कर दिया कि उसकी पेंसिलें लन्दन-निर्मित पेंसिलों की अपेक्षा अच्छी हैं। उसके मित्रों ने उसे बधाई दी कि उसने अपने लिए समृद्ध जीवन का मार्ग खोल लिया। लेकिन उसने

जवाब दिया कि अब वह कोई पेन्सिल नहीं बनायगा। "मैं क्यों बनाऊँ; जिसे मैं एक बार कर चुका हूँ, उसे फिर दुबारा नहीं करूँगा।" उसने अपने पर्यटन और विविध विषयों का अध्ययन वापस प्रारम्भ कर दिया और इस प्रकार प्रकृति के साथ उसका सम्पर्क नित्य नवीन होता गया। अभी तक उसे वनस्पति एवं प्राणि-शास्त्र का ज्ञान बिलकुल नहीं था। किन्तु प्रकृति के प्रति उसका अनुराग अगाध था और प्राकृतिक उपकरणों के निकट सम्पर्क में रहते हुए स्वभावतः उसमें टेकनिकल विज्ञान और विज्ञान की पुस्तकों के प्रति विमुखता आ गई थी।

कालेज से ताजा निकला हुआ थोरो उस समय एक स्वस्थ और बलवान नवयुवक था। उसके सभी साथी अपने व्यवसाय चुनने में व्यस्त हो गए थे। अतः यह स्वाभाविक था कि उसी प्रश्न पर उसके विचार भी जाकर अटक जायँ और ऐसे समय अपने परिवार और मित्रों की स्वाभाविक आशाओं को कुचलते हुए एवं अपनी एकांत स्वतन्त्रता कायम रखने के उद्देश्य से जीवन के सभी अभ्यस्त मार्गों को अस्वीकृत कर देना बड़े भारी संकल्प की सूचना है। थोरो के लिए तो यह और भी रहस्यमय था, क्योंकि नैतिक साहस की उसमें कमी नहीं थी और जिस व्यवसाय में भी वह जाता वहाँ उसके स्वातन्त्र्य-प्रेम को वह निबाह सकता था। व्यक्तियों से काम लेना भी उसे खूब आता था। लेकिन थोरो कभी विचलित नहीं हुआ। वह तो जन्मजात विद्रोही था। किसी संकीर्ण कारीगरी या व्यवसाय के लिए उसने अपने ज्ञान एवं कर्म की महती महत्त्वाकांक्षा का त्याग स्वीकार नहीं किया। उसके उद्देश्य में बहुत बड़ा व्यवसाय अपनी जड़ें जमा चुका था—वह व्यवसाय था जीवन की कला अर्थात् संतोष पूर्वक जीने की कला। अपने स्वजनों एवं मित्रों के परामर्श को उसने ठुकरा दिया था इसलिए कि वह अपने कर्म एवं विश्वास के सामंजस्य को अधिक आवश्यक समझता था। सुस्त और बेकार वह कभी नहीं रहता। जब उसे पैसों की जरूरत होती तो वह अपने अनुकूल कोई मजदूरी कर लेता या जैसे नाव बनाना, अहाता लगाना, पेड़ लगाना, सर्वे करना आदि किसी भी इच्छानुकूल काम को वह करता था।

वह अपनी वांछित सूचनाएँ एवं ध्वनि अच्छी तरह पा सकता था। उसके स्वभाव में कुछ फौजीपन था; वह पराजय नहीं मानता था; सदैव योग्य एवं पौरुषमय बना रहता। कोमलता भी उसमें कम ही दिखलाई पड़ती थी मानो विरोध में ही उसके व्यक्तित्व की निष्पत्ति हो सकती थी। भण्डाफोड़ करने के लिए उसे एक मिथ्या की आवश्यकता रहती थी, तीक्ष्ण व्यंग्य करने के लिए एक गलती की अपेक्षा रहती थी। दूसरे शब्दों में, उसे विजय की थोड़ी अनुभूति प्रिय लगती थी। ऐसे ही वातावरण में उसकी अद्भुत शक्तियों का परिचय मिलता था। 'नहीं' कहने में उसे जरा भी संकोच नहीं होता—वास्तव में, 'हाँ' कहने की बनिस्बत उसके लिए यह ज्यादा आसान था। वह हमारे दैनिक चिन्तन की सीमाओं के प्रति इतना उतावला था कि किसी भी प्रस्ताव का एकदम विरोध कर बैठता था। सामाजिक अनुरागों के लिए यह आदत वस्तुतः हानिकर थी और यद्यपि उसके साथी अंततः यह स्वीकार करते थे कि उसके भीतर कोई द्वेष या मिथ्या नहीं है तो भी पारस्परिक बातचीत में उससे बाधा जरूर पड़ती थी। यही कारण है कि इतने विशुद्ध एवं निश्छल व्यक्ति का कोई स्नेहमय साथी नहीं था। एक मित्र ने कहा था, "मैं हेनरी को प्यार करता हूँ; लेकिन वह मुझे पसन्द नहीं है; और जब मैं उसका बाहु पकड़ता हूँ तो तत्काल सोच लेता हूँ कि मैं एक वृक्ष की शाखा पकड़ रहा हूँ।"

ऐसा संन्यासी और वैरागी होने पर भी वह सहानुभूति के लिए सदैव भूखा रहता था और पूरी हार्दिकता एवं शैशव-सुलभ सरलता के साथ वह नौजवानों की मंडली में शामिल होता था। वह युवकों को प्यार करता था, उन्हें खिलाने-पिलाने में बड़ा आनन्द लेता था और वन-विपिन एवं नदियों के अपने अनुभवों को सुनकर उन्हें बहलाता रहता था। जंगलों में पर्यटन या पिकनिक करने के लिए भी वह उनके साथ निकल पड़ता था। एक रोज एक भाषण के बारे में बातें करते हुए हेनरी ने मुझसे कहा था कि जनता के साथ जो भी सफलता मिल जाती है वह श्रेयस्कर नहीं है। मैंने कहा, "राबिन्सन क्रूसो की भाँति सबको आनन्द देने वाली बात कौन लिखना नहीं चाहेगा?

और यदि उसको आनन्द देने वाली शैली में कोई पृष्ठ नहीं लिखा गया है तो किस लेखक को उसमें निराशा नहीं होगी।" हेनरी ने इसका विरोध किया। उसने कहा कि व्याख्यान तो कुछ चुने हुए व्यक्तियों के लिए ही होने चाहिएँ। लेकिन भोजन के समय एक छोटी लड़की ने यह समझकर कि वह लाइसियम में भाषण करेगा, उससे एकदम पूछ लिया कि उसका व्याख्यान मनोरंजक होगा या शुष्क एवं नीरस दार्शनिक तत्त्वों से परिपूर्ण, जिनमें वह कुछ भी रस नहीं लेती। हेनरी उसकी तरफ मुड़ा और सोच में पड़ गया कि क्या उसका भाषण उस लड़की एवं उसके भाई का मन बहलाएगा जो उसको सुनने के लिए जाने वाले हैं।

वह जन्म से ही सत्य का वक्ता एवं अभिनेता था और इसी प्रयोजन के लिए कई नाटकीय स्थितियों से घिर जाता था। किसी भी परिस्थिति में दर्शकों या श्रोताओं की यह दिलचस्पी रहती थी कि हेनरी किस पक्ष को ग्रहण करेगा और वह क्या बोलेगा और हेनरी भी उनकी आशाओं का निरादर नहीं करता था; किन्तु प्रत्येक विशेषावश्यकता पर वह अपना मौलिक निर्णय देता था। १८४५ में उसने 'वालडेन पौंड' में अपने लिए एक छोटा-सा घर बना लिया और वहाँ दो वर्ष तक उसने श्रम एवं अध्ययन का जीवन व्यतीत किया था। यह काम उसकी मनोवृत्ति के बिलकुल अनुकूल था। अपने परिचितों से उसे यहाँ राहत मिलती थी। कर्म की अपेक्षा वह विचारों में ही अपने पड़ौसियों से विभिन्न प्रतीत होता था। जैसे ही इस एकांत जीवन का उपयोग उसकी दृष्टि में समाप्त हो जाता था वह वहाँ से चल देता था। १८४७ में उसने जनता के लिए सरकार द्वारा खर्च किये गए कोष को उपयोगी नहीं पाया। इसलिए उसने टैक्स देना बन्द कर दिया और सरकार ने उसे जेल में बन्द कर दिया। एक मित्र ने उसका टैक्स दिया और तब वह छोड़ दिया गया। अगले वर्ष भी वैसी ही परेशानी आई। लेकिन जब उसके विरोध के बावजूद भी उसके मित्रों ने टैक्स भर दिया तो उसने सरकार से विरोध मोल नहीं लिया। कोई भी विरोध या मखौल उसको झुका नहीं सकता था।

वह अपनी सम्मतियों को बिना किसी आडम्बर के बिलकुल सरल भाव से व्यक्त कर देता था; उन्हें वह समाज या सोसाइटी पर लादने की चेष्टा नहीं करता था। यदि प्रत्येक उपस्थित व्यक्ति उसकी सम्मति का विरोधी होता तो भी उसमें किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं आता था। एक बार वह यूनिवर्सिटी-पुस्तकालय में किताबें लेने गया। लाइब्रेरियन ने पुस्तकें देने से इन्कार कर दिया। थोरो सीधा अध्यक्ष या प्रेसीडेंट के पास पहुँचा। प्रेसीडेंट ने थोरो को पुस्तकालय के नियम बताए जिनके अनुसार रेज़ीडेंट ग्रेजुएटों, पादरियों और कालेज के आस-पास दस मील की परिधि में रहने वाले कुछ व्यक्तियों को ही ये पुस्तकें उधार मिल सकती थीं। थोरो ने प्रेसीडेंट को समझाया कि रेल ने फासले के पुराने दायरे को समाप्त कर दिया है—नियमों के आधार पर पुस्तकालय प्रेसीडेंट और कालेज सब किसी प्रयोजन के नहीं हैं—उसके लिए तो कालेज का यही उपयोग है कि उसमें एक पुस्तकालय है और इस समय उसे थोड़ी-सी नहीं बल्कि काफी बड़ी तादाद में पुस्तकों की आवश्यकता है। थोरो ने प्रेसीडेंट को यह भी विश्वास दिलाया कि लाइब्रेरियन नहीं बल्कि थोरो के पास उनकी सुरक्षा अधिक निश्चित है। प्रेसीडेंट थोरो को शांत नहीं कर सका—उसे नियम बड़े हास्यास्पद प्रतीत हुए। उसने थोरो को विशेष सुविधा देकर पुस्तकें दिलाई और बाद में इस विशेषाधिकार का प्रयोग प्रेसीडेंट ने अगणित बार किया।

थोरो से बढ़कर कोई सच्चा अमरीकन पैदा ही नहीं हुआ। अपने देशी रिवाजों और परम्परा के प्रति उसकी रुचि सच्ची थी और अंगरेज़ी एवं यूरोपियन रहन-सहन के प्रति उसकी घृणा पराकाष्ठा पर पहुँच गई थी। लन्दन के समाज के समाचारों को वह किसी-न-किसी प्रकार सुनता था—मन को कुचलकर और यद्यपि वह सभ्य-शिष्ट बनने की चेष्टा करता था लेकिन यह रहन-सहन एवं शिष्टाचार उसे सुहाता न था। अपने चारों तरफ वह एक-दूसरे को अनुकरण ही करते हुए पाता था। उसे आश्चर्य होता था कि व्यक्ति अपनी निजता में ही क्यों नहीं रहता—सबका जामा पहनने की चेष्टा क्यों करता है ? इसीलिए वह लन्दन नहीं 'औरगान' (Oregon)

जाना चाहता था। एक रोज उसने अपनी डायरी में लिखा था : "ग्रेट ब्रिटेन के प्रत्येक हिस्से में रोमनों के अवशेष चिह्न पाये जाते हैं—उनके दाह-संस्कार के बरतन, उनके लेमें, सड़कें और मकान। लेकिन न्यू इंगलैंड कम-से-कम रोमन भग्नावशेषों पर आधारित नहीं है। हमें अपने घरों की नींवें बीती सभ्यता की राख पर नहीं बनानी हैं।"

वह पक्का आदर्शवादी। वह दासत्व के खिलाफ था, जुड़ी के खिलाफ था और गवर्नमेंट के भी खिलाफ था। वह इन सबको समाप्त देखना चाहता था और क्रियात्मक राजनीति में भी वह प्रतिनिधित्व-रहित नहीं था—प्रत्येक सुधारक का वह विरोध करता था। लेकिन दासत्व-विरोधी दल को वह पूरा सम्मान देता था। एक व्यक्ति से वह वैयक्तिक प्रेम रखता था और उसका बड़ा आदर करता था। कैप्टिन जान ब्राउन के बारे में किसी प्रकार का मैत्रीपूर्ण प्रचार होने से पूर्व उसने कांकार्ड में प्रमुख व्यक्तियों को सूचना भेजी कि वह रविवार की सन्ध्या को 'पब्लिक हॉल' में कैप्टिन जान ब्राउन के विषय में व्याख्यान देगा। 'प्रजातंत्र पार्टी' (Republican Committee) और 'उन्मूलन कमेटी' (Abolitionist Committee) ने उससे कहा कि अभी इसकी जरूरत नहीं है। लेकिन थोरो ने उत्तर दिया, "मैंने आपको सलाह देने के लिए नहीं बुलाया था बल्कि यह घोषित करने लिए कि मैं भाषण करूँगा।" हॉल समय से पूर्व ही खचाखच भर गया था और सभी पार्टियों के लोग उसमें एकत्र हो गए थे। थोरो ने ब्राउन की प्रशंसा में जो कुछ कहा उसे सबने श्रद्धा के साथ सुना।

प्लाटिनस (Plotinus) के बारे में यह कहा जाता है कि उसे अपने शरीर पर बड़ी लज्जा आती थी; कारण कि उसका शरीर पूरी तरह आज्ञाकारी नहीं था और जैसा कि अक्सर असाधारण प्रतिभाओं के साथ होता है प्लाटिनस भी भौतिक कार्यों में विशेष प्रवीण नहीं था। लेकिन थोरो का शरीर अत्यन्त स्वस्थ एवं सक्रिय था। वह नाटे कद का, सुदृढ़ बना हुआ गम्भीर आँखों और चिन्तनशील मुद्रा सहित हल्के रंग वाला बलवान व्यक्ति था। पिछले दिनों उसने सुन्दर दाढ़ी भी रख ली थी। उसकी इन्द्रियाँ बड़ी

की बड़ी कद्र करता था। करने में यही एक ऐसा व्यक्ति था जिसके पास विश्राम के लिए समय रहता था। अतः किसी भी पर्यटन या बातचीत की बैठक के लिए वह सदैव तत्पर मिलता था—हाँ, सबके लिए पहले से ही समय निर्धारित हो जाना चाहिए था। उसकी तीक्ष्ण समझदारी उसके दैनिक नियम-पालन से कभी कमजोर नहीं बनी—सदैव उसकी सक्रियता के प्रमाण मिलते रहते थे। अत्यन्त सादा भोजन उसे पसन्द था और उसका ही वह अभ्यस्त था; लेकिन जब किसी ने शाकाहार का उससे आग्रह किया तो उसने उसे स्वीकार नहीं किया, क्योंकि उसकी दृष्टि में भोजन का कोई खास महत्त्व नहीं था। वह कहता था, "आप रेल-रोड के पास सो जाइए और आपके सोने में खलल नहीं पड़ सकता। प्रकृति भली-भाँति जानती है कि कौन सी ध्वनि अनुकूल है और इसीलिए उसका संकल्प रहता है कि वह रेल की सीटी को न सुने। लेकिन भक्ति-परायण व्यक्ति का आदर सभी करते हैं और यही कारण है कि मानसिक आनन्द में कभी कोई व्यतिक्रम नहीं पड़ता।" उसके ऊपर बार-बार जो गुज़रा उसे वह याद रखता था। एक बार काफी दूर से उसके पास एक पौधा भेजा गया था लेकिन वैसा ही उसे अपने पास की वनस्थली में मिल गया। इस प्रकार सौभाग्य सदैव उसका साथ देता था—अच्छे खिलाड़ियों के साथ प्रायः ऐसा होता ही रहता है। एक दिन पर्यटन के समय एक साथी ने उससे एक इंडियन छड़ी के बारे में पूछा। थोरो ने अनजाने ही कह दिया "अरे, यह तो सब जगह मिलती है।" और उसने उसी क्षण सामने की जमीन से वह छड़ी उखाड़कर दिखला दी। माउंट वाशिंगटन के 'टुकरमान रेवाइन' में थोरो गिर गया और उसके पैर में मोच आ गई। वैसे ही वह जमीन से ऊपर उठने वाला था कि उसने प्रथम बार 'आर्निका मालिस' (टिंचर बनाने में काम आने वाला पौधा) देखा।

उसकी सरल और गम्भीर जीवन-चर्या में जो महत्त्व छिपा हुआ था उसकी प्रतीति उसके दृढ़ शरीर और बलवान इच्छा-शक्ति को नहीं हो सकती थी। साथ ही मुझे यह बुनियादी बात भी कहनी चाहिए कि उसमें विवेक

की भी कमी नहीं थी। एक विचित्र प्रकार की बुद्धिमत्ता उसके भीतर सदैव जागरूक रहती थी जो विरले ही महापुरुषों में होती है और इसी बुद्धि की प्रेरणा से वह भौतिक जगत् को एक साधन एवं प्रतीक समझता था। ऐसी सत्स्फूर्ति, जो अक्सर कवियों के भीतर उमड़ आया करती है और उनकी रचना को अलंकृत कर देती है, उसमें सदैव सक्रिय एवं सजग रहती थी और मनोवृत्ति के दोषों एवं बाधाओं से वह कितनी ही अवगुण्ठित हो जाती, मगर थोरो ने ईश्वरीय दृष्टि की आज्ञा का कभी उल्लंघन नहीं किया। अपनी युवावस्था में उसने एक दिन कहा था, "दूसरी दुनिया ही तो मेरी सारी कला है; मेरी पेंसिल की नोक पर और कोई दूसरा चित्र नहीं आता; मेरे चाकू से कोई दूसरा आकार नहीं कटता; मैं उसे साधन के रूप में नहीं इस्ते-माल करता।" यही काव्य-प्रेरणा और प्रतिभा उसके विचारों, कर्मों और जीवन-प्रणाली पर अनुशासन रखती थी। इसने ही उसे मनुष्यों का नीर-क्षीरा-त्मक निर्णायक बना दिया था। पहली दृष्टि में ही वह अपने साथी का मूल्यांकन कर सकता था—यद्यपि मानसिक विकास के सूक्ष्म तत्त्व इतनी सरलता से प्राप्त नहीं हो सकते—किन्तु काफी अच्छा सर्वांगीण मूल्य वह आँक सकता था। उसकी बातचीत में यह प्रतिभा अक्सर स्पष्ट हो जाती थी।

प्रसंग समझने की क्षमता उसमें अद्भुत थी और दूसरों की बातों की सारी सीमाएँ उसकी तीक्ष्ण दृष्टि से स्पष्ट हो जाया करती थीं। मैं कई योग्य नवयुवकों को जानता हूँ जो क्षण-भर के सम्पर्क से ही इस नतीजे पर पहुँच गए थे कि थोरो ही उनका वांछित व्यक्ति है—मानवों में वही एक ऐसा मानव है जो उनको मार्ग-दर्शन करा सकता है। थोरो ऐसे युवकों से प्रेम-व्यवहार नहीं करता था; गुरु की तरह वह उनको उपदेश करता था और अधिकांशतः उनके क्षुद्र तरीकों से घृणा भी करता था। उनके घर जाने या स्वयं उनको अपने घर पर आने देने की बात को वह बड़ी कठिनाई से मंजूर करता था—कभी-कभी तो वह इसे स्वीकार ही नहीं करता था। "क्या आप हमारे साथ घूमने नहीं जायँगे?" "मैं नहीं जानता। घूमने से बढ़कर मेरे लिए और क्या है? लेकिन क्या मैं अपने घूमने को आपके साथ खराब

कर दूँ ?" कई सम्मानित समाओं से उसे निमन्त्रण आते थे, किन्तु वह उन्हें स्वीकार नहीं करता था। उसके प्रशंसक मित्र उसको अपने खर्चे पर वेस्ट इण्डीज के 'मैलोस्टोन लिए' में ले जाना चाहते रहे। यद्यपि उसकी ये अस्वीकृतियाँ काफी गम्भीर और विवेक-सम्मत होती थीं किन्तु वे इतनी स्पष्ट हो जाया करती थीं कि उसके साथियों को ग्रे मेल की घटना याद आ जाया करती थी—एक भद्र पुरुष ने ग्रे मेल को बरसात में अपनी गाड़ी में बैठने को कह दिया। 'लेकिन फिर तुम कहाँ बैठोगे ?'—उसका जवाब था और इसके बाद की वाक्-युद्ध एवं गरमागरम बातें हुईं वे भी साथियों के मानस में साकार हो जातीं।

थोरो ने अपने परिपूर्ण प्रेम सहित यह प्रतिमा अपने कस्बे के मैदानों, पर्वतों और जल-स्रोतों के अर्पण कर दी थी। सभी अमरीकन और समुद्र-पार के पाठक उसके इन विवरणों को मुग्ध होकर पढ़ते थे। जिस नदी के तट पर वह पैदा हुआ और मरा उसके उद्गम से लेकर मेरीमैक (एक नदी का नाम) के संगम तक वह उस नदी का पता लगा चुका था। इसी नदी की पार्श्वभूमि पर उसने कई वर्षों तक, प्रति दिन एवं प्रति रात्रि अपने चिन्तन को आधारित किया था। मेसेच्युसेट्स राज्य द्वारा नियुक्त 'वाटर कमिश्नर्स' ने अपने सर्वे से जो सिद्ध किया है उस नतीजे पर वह अपने वैयक्तिक प्रयोगों द्वारा वर्षों पूर्व पहुँच चुका था। नदी के तटों, मँझधार, धरातल और उसके ऊपर के आकाश से सम्बन्धित प्रत्येक वस्तु की जानकारी उसे थी—मछलियाँ, उनके घोंसले, उनकी दिनचर्या, खाना; पानी पर उड़ने वाले पतंगे जिन्हें खूब खाकर मछलियाँ मर जाती हैं; कंकरों और सीपों के ढेर; भाँति-भाँति के पक्षी जिनकी ध्वनि-प्रतिध्वनि से तट मुखरित हो उठता है—सबसे उसका परिचय था—ऐसा प्रगाढ़ और पूर्ण मानो वे सब उसके कस्बे के मानव-निवासी हों। यही कारण है कि इन मछलियों एवं पक्षियों को मारना या सताना उसे सदैव आघात पहुँचाता रहा। नदी के रहन-सहन का जिक्र तो वह एक नियम-पालक नागरिक के रूप में करता था। और जिस प्रकार वह नदी के विषय की प्रत्येक बात को अपने अनुभव एवं खोज

उसके द्वारा अन्य स्थानों को हीन समझने का परिणाम नहीं है—वास्तव में यह इस धारणा की किंचित् चपल अभिव्यक्ति है कि स्थानों में परस्पर कोई अन्तर नहीं है और प्रत्येक के लिए सर्वश्रेष्ठ भूमि वही है जहाँ वह निवास करता है। एक बार उसने ऐसी ही धारणा स्पष्ट करते हुए कहा था, "अगर आपके पैरों के नीचे की जमीन आपको इस दुनिया की या अन्य किसी दुनिया की जमीन से अधिक मीठी नहीं लगती है तो आपसे क्या उम्मीद की जाय ?"

उसका दूसरा शास्त्र धैर्य था जिसके द्वारा उसने विज्ञान के सभी अवरोधों को पराजित किया था। वह अपने नीचे की शिला की भाँति अचल बैठे रहना जानता था और इतने धैर्य के साथ अचल बैठा रहता था कि कीड़े-मकौड़े, मछली आदि जो उससे डरकर भाग जाते अपने कामों में लग जाते और यहीं तक नहीं, वे कौतूहलवशात् ... भी आने लगते और उसे देखने लगते।

उसके साथ घूमने जाना आनन्द के साथ सौभाग्य भी था। वह देहात को एक लोमड़ी या पक्षी की भाँति जानता था और अपने ही रास्तों से उसका कोना-कोना छान डालता था। बर्फ या जमीन के प्रत्येक रास्ते से वह परिचित था और यह भी बता देता था कि अभी अभी कौन-सा जानवर उस रास्ते से गुजरा है। ऐसे पथ-प्रदर्शक के सामने समर्पण करने के सिवाय बाकी क्या रहता था और इसका पुरस्कार भी काफी अच्छा मिलता था। पौधों को दबाने के लिए उसकी बगल में एक पुरानी संगीत-पुस्तक रहती थी और जेब में डायरी, पेंसिल, पक्षियों को देखने की दूरबीन, जेबी चाकू और रस्सी। तिनके का हैट, बन्द जूते और मजबूत भूरा पाजामा यही उसका पहनावा था, जिसे पहनकर वह पेड़ों पर चढ़ता और गिलहरियों के घोंसले खोजता फिरता था। पानी के पौधों के लिए वह तलाबों में घुस जाता था। इसके लिए उसके पाँव भी कम मजबूत नहीं थे। एक दिन वह 'मिन्यान्थीस' (एक प्रकार का पौधा) तलाश कर रहा था। चौड़े तालाब के उस पार आखिर उसने उसे ढूँढ ही लिया। पंखुड़ियों की परीक्षा करने के बाद उसने बताया

कि उसको फूले हुए, तीन दिन गुज़र गए हैं। उसने अपनी सारी निराशा और सब गम पीनी के साथ सह गए जो उस दिन फूले हैं—एक बैंकर की भाँति उसने सबका लेखा अपने पास रोक रखा था। 'साइप्रिपेडियम' (एक प्रकार का फूल देने वाला पौधा) जब तक नहीं फूलेगा। उसका यह दावा था कि यदि उसकी समाधि लग जाए और इस मैदान में कहीं उसकी समाधि हुई तो वह पेड़ों को देखकर यह बता सकता है तो इन दो दिनों के भीतर साल का कौन-सा मौसम चल रहा है। 'रेड स्टार्ट' (एक प्रकार की गाने वाली चिड़िया) वहाँ उड़ रहा था और अभी 'ग्रोसबीक' (एक छोटा-सा सुंदर पक्षी) भी वहाँ आ गया जिसके चमकीले बैंगनी रंग को देखकर दर्शक एकदम मुग्ध हो जाता है। उसकी मीठी बोली की तुलना थोरो 'टैनेजर' (एक प्रकार की चिड़िया) के कर्कशता-हीन मधुर स्वर से करता था। इसी समय उसने एक चिड़िया की बोली सुनी जिसे वह 'रात की कोयल' कहता था। बारह बरस से वह इस चिड़िया को पहचानने का प्रयत्न करता रहा था। किन्तु जब वह उसे देखता तो वह किसी पेड़ या में झाड़ी में गोता लगाती ही मिलती थी। इस प्रकार वह उसे पा नहीं सकता था। यही एक-मात्र ऐसी चिड़िया होती है जो रात और दिन में भिन्न-भिन्न प्रकार से गाती है। मैंने उससे कहा कि तुम्हें इस पक्षी का पता लगा लेना चाहिए, नहीं तो इस ज्ञान के अभाव में तुम्हारे जीवन का कोई मूल्य नहीं है।

उसने कहा, "आधी जिन्दगी भर जिसे आप व्यर्थ खोजते रहते हैं वही एक दिन अपने पूरे परिवार सहित आपके साथ खाना खाने आ बैठता है। आप स्वप्न की भाँति उसे खोजते हैं लेकिन ज्यों ही आप उसे पा जाते हैं तो आप स्वयं उसके शिकार बन जाते हैं।"

फूलों या पक्षियों में उसकी जो दिलचस्पी थी वह उसके मन में बड़ी गहराई से बद्धमूल थी—इसका सीधा सम्बन्ध प्रकृति से था। लेकिन प्रकृति का अर्थ उसने कभी स्पष्ट नहीं किया था। 'नेच्युरल हिस्ट्री सोसाइटी' के आमन्त्रण पर वह अपने प्रकृति-विषयक अनुभव नहीं बताता था। "मैं क्या बताऊँ? प्रकृति के सम्बन्धों से मन को अलग कर लेना इन अनुभवों की

सारी मान्यता समाप्त करना है। इन लोगों को तो इस सम्पर्क की कोई चिन्ता है नहीं।" उसकी निरीक्षण शक्ति एक अतिरिक्त संवेदना की ओर संकेत करती प्रतीत होती थी। उसका देखना मानो दुर्बीन का निरीक्षण था, उसका सुनना मानो कान-तुरही का सुनना था और उसकी स्मृति क्या थी मानो वह जो-कुछ देखता या सुनता उसका फोटोग्राफिक रजिस्टर ही थी। और उससे अधिक इस बात को दूसरा नहीं जानता था कि घटना नहीं उसका प्रभाव ही मन के लिए महत्त्व की वस्तु है। प्रत्येक बात उसके मानस में गौरव के साथ सजी रहती थी—सिलसिलेवार और अपनी सम्पूर्णता में अत्यन्त सुन्दर!

'प्राकृतिक इतिहास' (Natural History) के विषय में उसका संकल्प सैद्धिय अर्थात् प्रकृत था। उसने एक बार स्वीकार किया था कि वह कभी-कभी अपने आपको कुत्ता या चीता समझने लगता है और अगर वह इंडियन समाज में पैदा हुआ होता तो वस्तुतः शिकार ही उसका व्यवसाय हो जाता। लेकिन मेसेच्युसेट्स के सांस्कृतिक वातावरण ने उसकी वृत्तियों को नियन्त्रित कर दिया था और वह वानस्पतिक ज्ञान एवं प्राणि-विज्ञान की खोज में ही अपनी जिज्ञासा को तृप्त करता था। जीव-जंतुओं के साथ उसका मैत्री-सम्पर्क इतना घनिष्ठ था कि मधु-मक्खी-विज्ञाता बटलर के विषय में थामस फुलर की यह उक्ति बरबस याद आती है—"या तो मधु-मक्खियाँ उसके कान में कुछ कहती थीं या वह उनके कान में कुछ कहता था।" साँप उसके पाँवों में लिपट जाते थे; मछलियाँ उसकी हथेली में तैरा करती थीं और वह उनको पानी से बाहर निकाल देता था; पूँछ पकड़कर पहाड़ी चूहे को बिल से बाहर खींच लेता और शिकारियों से भयभीत लोमड़ियों को अपनी गोद में छिपा लेता था। थोरो में हृदय की विशालता भी अपरिमित थी। रहस्य रखना वह जानता ही न था। वह आपको चिड़ियों के घोंसलों में ले जाता; अपनी सबसे मूल्यवान वानस्पतिक प्रयोगशाला—जंगली मैदान—में ले जाता। शायद वह यह सोचता था कि हम अकेले वहाँ तक दुबारा कभी नहीं जा सकते।

किसी भी कालेज ने उसे डिप्लोमा या प्रोफेसरी नहीं दी; किसी भी एकेडेमी ने उसे अपना मंत्री, अन्वेषक अथवा सदस्य तक नहीं बनाया। शायद ये विदुषी संस्थाएँ उसकी उपस्थिति के व्यंग्य से भयभीत थीं। लेकिन प्रकृति के विषय का ऐसा गहरा ज्ञान और रहस्य किसके पास था—इतने भक्तिभाव से प्रकृति का उपासक कौन था? व्यक्ति की सम्पत्ति के प्रति जरा भी आदर थोरो में नहीं था—सत्य का सम्मान ही उसका मूल प्रयोजन होता था। डॉक्टरों में वह सर्वत्र सौजन्य की ओर झुकाव पाता था जो उनके लिए लाभप्रद नहीं होता था। अपने कस्बे के लोगों में पहले वह एक प्रकार का वैचित्र्य ही था किन्तु बाद में उनकी श्रद्धा उसमें उत्तरोत्तर बढ़ती गई और सभी उसका सम्मान करने लगे। सर्वे के लिए जो किसान उसे अपने यहाँ बुलाते थे वे शीघ्र ही उसकी सूक्ष्म अनुमान-शक्ति और प्रवीणता से प्रभावित हो जाते थे। वे चकित होकर देखते थे कि जमीन, पेड़ों, पक्षियों और इंडियनों के ध्वंसावशेषों का कितना गहरा ज्ञान उसके भीतर छिपा हुआ है। किसान जितना अपने खेत के बारे में नहीं जानता था उससे कहीं अधिक थोरो उसे बता देता और इस प्रकार किसान अक्सर सोचने लगता कि उसके स्वयं की अपेक्षा थोरो का अधिकार उसके खेत पर कहीं ज्यादा है। साथ ही वे थोरो में आचरण का अदम्य साहस भी पाते थे जो उनके स्वयं के मानस में नई स्फूर्तियाँ जगा देता था।

कोंकार्ड में इण्डियन अवशेष अपरिमित हैं—पत्थर की छैनियाँ, बरतनों के टुकड़े, शिकार के औजार आदि के साथ नदी के किनारे पर किसी समय बसने वाले आदि-निवासियों के खण्डहरों में सीपों के ढेर और राख के चिह्न भी पाये जाते हैं। ये सब और इण्डियन सभ्यता से सम्बन्धित प्रत्येक स्थिति उसके लिए महत्त्वपूर्ण थी। वह मेन (Maine) में मुख्यतः इण्डियनों को प्रेम करने के ही कारण जाता था। छाल की नाव के निर्माण को देखकर उसको बड़ा सन्तोष मिला था और जब पानी में उसने उसे चलाया तो वह आनन्द-विभोर हो गया था। पत्थर के हथियार बनाने के लिए वह बड़ा उत्सुक था और उन्हें चलाना सीखना भी उसे आवश्यक प्रतीत होता था।

कभी-कभी इण्डियनों का एक दल गर्मियों में कांकार्ड आता और नदी के तट पर अपने डेरे डाल देता था। थोरो के लिए यह अवसर बड़ा अच्छा होता था और वह उनसे प्रगाढ़ परिचय प्राप्त करने की चेष्टा करता था। अपनी मृत्यु से कुछ पहले जब वह 'मेन' (Maine) गया था तो ओल्ड टाउन के एक इण्डियन 'गाइड' (पथ-प्रदर्शक) से उसे बड़ा सन्तोष मिला था। जोज़ेफ़ पोलिस उसका नाम था और थोरो के साथ वह कुछ हफ़्तों रहा था।

प्रत्येक प्राकृतिक घटना में वह समान रूप से दिलचस्पी लेता था। प्रकृति के प्रति उसकी अनुभूति सदैव एवं सर्वत्र समान हुआ करती थी और अपने जीवन में मैंने ऐसी प्रतिभा कहीं नहीं देखी जो एक घटना से ही व्यापक सृष्टि के नियम को अनुभूति इतनी शीघ्रता से पा सकती हो। उसकी दृष्टि संकीर्ण, या किसी निश्चित प्रणाली में बँधी हुई जड़ नहीं थी। अपने आस-पास के सारे सौन्दर्य एवं संगीत के प्रति उसके आँख और कान सदैव सजग रहते थे। उन्हें वह विरली अवस्थाओं में ही नहीं, बल्कि जहाँ वह जाता वहीं पा लेता था। कहीं-कहीं में उसे संगीत की ध्वनि सुनाई दे सकती थी और टेलिग्राफ के तारों की झनझनाहट में उसे काव्य की ˋ मिलती थी।

उसकी कविता चाहे जैसी हो; उसमें गीति-काव्य ... ˋ निःसन्देह नहीं थी। लेकिन उसके आध्यात्मिक ...ओं ˉ बड़ी उर्वरता थी। वह अच्छा पाठक और आलोचक विषय में उसका निर्णय बड़ा यथातथ्य हुआ करता था। विन्यास में दबे काव्य-तत्त्व को वह बड़ी जल्दी खोज लेता वह अक्सर काव्यांगों के प्रति विमुखता प्रकट करता तरर उसकी तीक्ष्ण दृष्टि से छिपा नहीं रह सकता था में भी वह उसे आसानी से चुन लेता था:—गद्य में भी ... मे वह काफ़ी सिद्धहस्त था। आध्यात्मिक सौन्दर्य से वह ... प्रभावित था कि लिखी हुई कविताओं को उसने कठिनाई से कभी दी हो। वह एस्किलस (Aeschylus) और पिण्डार का प्रशंसक था

जब कोई उसके सामने उनकी प्रशंसा करता तो वह कहता था कि एस्किलस और सम्प्रति यूनानियों ने आपालो और आर्फियस के वर्णन में कोई गीत नहीं लिखा और जो भी लिखा है वह अच्छा नहीं है—"उन्हें पेड़ों को चलायमान करने की जरूरत नहीं थी। इसके बजाय तो वे भगवान् के सामने ऐसी स्तुति करते कि आध्यात्मिक गीत-ध्वनि में उनके पुराने विचार सब बह जाते और उनके स्थान पर नये आ जाते।" उसकी स्वयं की कविताएँ कर्कश और दोषपूर्ण होती थीं। वास्तव में, विशुद्ध नहीं किया गया सोना मटमैला ही होता है। मधु बनने के लिए फूलों के पराग को काफी रासायनिक परिवर्तनों के बीच से गुजरना पड़ता है! गीति-सौन्दर्य, छन्द-शास्त्र और कवि प्रतिभा का उसमें अभाव था, किन्तु कारण-सम्भूत विचारों की कमी उसमें नहीं थी। मानव-जीवन के उत्कर्ष और सान्त्वना के लिए कल्पना-शक्ति के महत्त्व से वह परिचित था और इसीलिए प्रत्येक विचार को प्रतीक के रूप में वह पेश करना जानता था। उसके लिए अभिव्यक्ति का कोई मूल्य नहीं था—सिर्फ प्रभाव या अनुभूति की ही उसे आकांक्षा रहती थी। इसी कारण उसकी उपस्थिति ही काव्यात्मक थी—मानस के रहस्यों का उद्घाटन करने के लिए उसकी जिज्ञासा सदैव व्याकुल रहती थी। वह बड़ा गम्भीर था; अपनी आत्मा के उत्कर्ष की झाँकी दिखलाने के लिए कभी राजी नहीं होता था और अपनी अनुभूतियों पर काव्यात्मक आवरण डालना भी उसे खूब आता था। वाल्डेन (Walden) के पाठक उसकी निराशाओं का रहस्यमय वृत्तान्त स्मरण किये बिना नहीं रह सकतेः—"काफी अरसे पूर्व मैंने एक शिकारी कुत्ता, घोड़ा और फाख्ता खो दिया है और मैं अब तक उनकी खोज में हूँ। इन जानवरों के रास्तों और बोलियों एवं सम्बोधनों का जिक्र करते हुए कई यात्रियों से मैंने पूछ-ताछ की है। लेकिन केवल एकाध यात्री ही ऐसा मिला है जिसने कुत्ते को भूँकते और घोड़े को दौड़ते सुना है और फाख्ता (कपोत) को बादलों के बीच में गायब हो जाते देखा है और वह भी उन्हें ढूँढ निकालने के लिए ऐसा व्याकुल है मानो उसने स्वयं ने

उन्हें खो दिया है।"[1]

उसकी पहेलियाँ पढ़ने योग्य हैं और यद्यपि कई बार वे मेरी समझ में नहीं आती हैं तो भी वे बड़ी प्रेरक होती हैं। उसके लिए सत्य का इतना बड़ा महत्त्व है कि जो कुछ उसने लिखा सभी मूल्यवान हो गया है। 'सहानुभूति' नामक उसकी कविता में, वज्र-वैरागी के अन्तराल में छिपी कोमलता का सुन्दर प्रदर्शन है और कविता को सजीव बनाने वाली उसकी बौद्धिक कुशलता की छाप भी इस पर काफी स्पष्ट है। 'धूम्र' नामक उसकी क्लासिक कविता से सिमोनीडेस (Simonides) का स्मरण हो आता है; लेकिन यह सिमोनीडेस की किसी भी कविता से श्रेष्ठतर है। छन्दों में ही उसका आत्मचरित लिखा हुआ है। उसकी स्वाभाविक विचार-प्रणाली सभी कविताओं को परमात्मा की स्तुति बना देती है—उसकी स्वयं की आत्मा में भी यही स्फूर्ति सक्रिय रहती है :

> अनन्त कान जिसे सुनते आए हैं, उसे मैंने सुना;
> अनन्त आँखें जिसे देखती आई हैं, उसे मैंने देखा;
> अनन्त वर्ष जिनमें समाये हैं, उन क्षणों में मैं जिया;
> और अनन्त अनुभूतियों में जो पला, उस सत्य को मैंने पाया!

और ये धार्मिक पंक्तियाँ भी जरा देखिये :

> अब मेरा जन्म का क्षण है
> अभी तो मेरी युवावस्था है
> मैं अव्यक्त प्रेम पर सन्देह नहीं करूँगा—
> मेरे धन या अभाव से वह खरीदा नहीं गया है,
> उसने मुझे शैशव में मुग्ध किया, बुढ़ापे में मुग्ध किया
> और जो मुझे इस संध्या तक चलाकर लाया!

यद्यपि अपनी रचनाओं में उसने चर्चों एवं पादरियों के विषय में कुछ व्यंग्यात्मक शब्दों का प्रयोग किया है लेकिन उसमें व्यक्ति की बुराई न होकर संस्था की बुराई ही माननी चाहिए। क्योंकि थोरो-जैसे धार्मिक एवं उदार

---

1. वाल्डेन पृष्ठ २

व्यक्ति विरले ही मिलते हैं और वह मन, वचन एवं कर्म से किसी की बुराई के लिए कभी तत्पर नहीं रहा। हाँ यह सच है कि अपने मौलिक विचार एवं जीवन-प्रवाह के एकांत ने उसे सामाजिक एवं धार्मिक संस्थाओं के सम्पर्क से विच्छिन्न कर दिया था। किन्तु इसमें कौन सी बुराई है? अरस्तू ने इसकी व्याख्या इस प्रकार की है: "जब व्यक्ति गुण या आचरण में अपने साथियों को पीछे छोड़ जाता है वह नगर का अंग नहीं रहता। नगर के कानून उसे नियमित नहीं करते—बल्कि वह स्वयं अपने लिए एक नियम हो जाता है।"

थोरो निश्छलता का प्रतीक था और पवित्र जीवन व्यतीत करते हुए उसने भगवज्जनों की धाराओं एवं उपदेशों को प्रमाणित कर दिया है। उसने अदम्य चुनौती के साथ अपने पैगम्बरों द्वारा निर्धारित शुद्धाचरण के पथ पर अपने जीवन को चलाया। एक सत्य-वक्ता के रूप में वह कटु-से-कटु वाक्य सुनने और कहने की क्षमता रखता था; प्रत्येक के सन्तप्त अन्तःकरण के लिए मानो वह एक चिकित्सक था; मनुष्यों का वह प्रगाढ़ मित्र था—ऐसा मित्र जो मैत्री के रहस्यों से ही परिचित नहीं था बल्कि अपने उन थोड़े से मित्रों द्वारा पूजा भी जाता था जो उसके सामने अपने सारे कृत्यों को नग्न रूप से उँडेल देते थे और जो उसकी सम्मति को ईश्वर-वाक्य मानते थे—वे सब उसके मन एवं हृदय की गहराई से भली भाँति परिचित थे। थोरो की यह धारणा थी कि धर्म या किसी प्रकार की आध्यात्मिक उपासना के बिना कुछ भी बड़ा काम नहीं किया जा सकता।

उसके गुण एवं आचरण कई बार पराकाष्ठा तक पहुँच जाया करते थे। दूसरों में सचाई देखने में उसकी सूक्ष्मता सीमातीत हो जाया करती थी और इस कठोरता के कारण ही उसे वांछित से भी अधिक जीवन का एकांत मिल गया था। वह स्वयं पूर्णतया निश्छल था एवं दूसरे में भी ऐसा ही सत्य वह देखना चाहता था। दोषों से उसे घृणा थी और किसी भी लौकिक सफलता का आवरण उसकी दृष्टि से अपराध को अदृश्य नहीं रख सकता था। सभ्य एवं भद्र पुरुषों की क्षुद्रताओं को और भिखारियों के पतन को

वह समान घृणा की दृष्टि से देखता था। ऐसी सीमाहीन स्पष्टवादिता उसमें थी कि उसके प्रशंसक उसे 'भयानक थोरो' कहने लगे थे, मानो वह मौन रहने पर भी बोलता हो और विदा हो जाने पर भी उपस्थित रहता हो। मेरे विचार में उसके आदर्शों की कट्टरता ने उसे मानव-समाज के सम्पर्क से मिलने वाली स्वस्थ निर्भरता से वंचित कर दिया था।

अपने यथार्थवादी विचारों की तुला पर प्रत्येक चीज उसे अभावग्रस्त प्रतीत होती थी और यही कारण है कि उसकी बातें कई बार विडम्बनाएँ प्रतीत होती थीं। विरोध की एक स्वाभाविक आदत ने उसके प्रारम्भिक लेखों को विकृत कर दिया है—बाद में शब्दों के व्यंग्यार्थ की यह कलाबाजी उसमें विकसित नहीं हो पाई। जंगली पर्वतों की वह पारिवारिक वातावरण के लिए प्रशंसा करता था। गरमी एवं सुखेपन के लिए बर्फ की तलाश करता था और रोम एवं पेरिस के सादृश्य के लिए जंगलों की सिफारिश करता था। वह कहता था, "यह इतनी शुष्क है कि आप इसे गीला कह सकते हैं।"

एक क्षण में युगों को देखना, एक वस्तु में सारे प्रकृत नियमों को व्यक्त मानना—वस्तुतः उन लोगों के लिए हास्यास्पद है जो साम्य या एकरूपता की दार्शनिक अनुभूति में विश्वास नहीं रखते। थोरो के सामने तो आकार नाम की कोई चीज ही नहीं थी—तालाब उसके लिए एक छोटा महासागर था और अटलांटिक महासागर था एक 'वाल्डेन पांड'—वाल्डेन का तालाब। उसकी दृष्टि में प्रत्येक छोटी-सी चीज का सृष्टि के नियमों के साथ सम्बन्ध था। यद्यपि वह औचित्य पर दृढ़ रहना चाहता था, किन्तु यह धारणा उसके भीतर बड़ी गहरी पैठ गई थी कि वर्तमान विज्ञान पूर्णता का बहाना करता है। उसने कई विषयों में यह पाया कि वैज्ञानिक अपने प्रयोगों में भूल करते हैं। हम लोगों ने जवाब दिया, "इसका मतलब यह है कि वे मूर्ख लोग कॉकार्ड में पैदा नहीं हुए; लेकिन उनको मूर्ख कैसे कह दें? लन्दन और पेरिस में पैदा होना उनका बड़ा भारी दुर्भाग्य है; लेकिन तो भी, कॉकार्ड के विशेष स्थलों को नहीं देखते हुए भी उन बेचारों ने जो

[illegible]
बनाती।"

और उसकी प्रतिभा यदि चिन्तनात्मक ही होती तो वह जीवन में अपने को साध लेता। लेकिन उसकी शक्ति और व्यावहारिक योग्यता से प्रतीत होता था कि वह बड़े कामों और आदेश देने के लिए पैदा हुआ था। उसकी अद्भुत कार्यशक्ति के ह्रास को मैं बड़ी भारी सामाजिक हानि मानता हूँ और मैं उसमें यह दोष देखे बिना नहीं रह सकता कि उसके भीतर कोई महत्वाकांक्षा नहीं थी। इसके अभाव में वह सारे अमरीका के इंजीनियरों का नेता होने के बजाय [illegible] के दल का ही कप्तान बना रहा।

लेकिन स्वभाव के ये अंकुर उसके अन्तःकरण के उत्कर्ष के साथ-साथ बड़ी तेजी से लुप्त हो रहे थे और उसके निरन्तर आचरण की विजयों ने पराजयों को निर्मूल कर दिया था। प्रकृति का अध्ययन उसका सबसे बड़ा आभूषण था और उसके मित्रों को उससे सदैव यह प्रेरणा मिलती रही कि वे उसके-जैसे ही कौतूहल से संसार का अनुभव करें तथा इसी प्रेरणा के वशीभूत होकर वे पूरी एकाग्रता से उसके साहसी कार्यों की कहानियाँ सुनते थे। वास्तव में वे बड़ी रोचक होती थीं।

यद्यपि वह परम्परागत सुरुचियों का आलोचक था, किन्तु सुरुचियों की उसमें स्वयं में कमी नहीं थी। जैसे कि वह अपने ही पैरों की आवाज सुनना पसन्द नहीं करता था और यही कारण था कि वह प्रायः घास, पर्वतों या वनों में चलना पसन्द करता था। उसकी कर्मेन्द्रियाँ बड़ी तीक्ष्ण थीं और वह कहता था कि रात को प्रत्येक घर से अशुद्ध वायु बहती है, मानो घर एक बूचड़खाना हो। उसे मेलिलाट (एक प्रकार का सुगंधित फूल) की विशुद्ध गन्ध से बड़ा प्रेम था। कुछ फूलों के प्रति उसका अनुराग अनूठा था। कमल एवं 'जीवन-बहार' इनमें प्रमुख थे। 'बास' (Bass) जब फूलता था तो वह प्रति वर्ष मध्य जुलाई में वहाँ जाता था। उसे दृश्य की अपेक्षा गन्ध से विशेष अनुरक्ति थी। अन्य इन्द्रियों से जो छिपा हुआ

रहता है गन्ध उसे व्यक्त कर देती है। गन्ध में ही उसे धरती माता के वात्सल्य का निमन्त्रण अनुभव होता था। प्रतिध्वनियों में उसे बड़ा आनन्द आता था और कहता था कि मेरी सुनी हुई वाणियों में आत्मीय वाणियाँ ये प्रतिध्वनियाँ ही तो हैं। प्रकृति के प्रेम की तन्मयता उसमें इतनी गहरी थी और उसके एकान्त सामीप्य में वह इतना प्रसन्न रहता था कि शहरों और अपने घरों में मनुष्यों द्वारा की गई सजावटी कारीगरी का वह बड़ा विरोधी हो गया था। उनसे वह स्पष्टतया घृणा करता था। उसे सदैव ऐसा प्रतीत होता था कि कुल्हाड़ा उसके जंगलों को काट रहा है—जंगलों का कटना उसे पसन्द नहीं था। उसने कहा, "भगवान् का धन्यवाद है ये लोग बादलों को नहीं काट सकते। बादलों के रंग नीले आसमान पर कितने प्रकार की आकृतियाँ बनाते हैं।"

अन्त में, मैं उसकी अप्रकाशित पाण्डुलिपि के कुछ वाक्य यहाँ उद्धृत करता हूँ जो सिर्फ उसके विचारों के ही रिकार्ड नहीं हैं किन्तु अपनी वर्णन-शक्ति और साहित्यिक कौशल की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण हैं :

"कुछ परिस्थित्यात्मक साक्ष्य बड़े दृढ़ होते हैं, जैसे कि आप दूध में मछली पड़ी हुई पाते हैं।

'चब' एक नरम मछली होती है और उबले हुए नमकीन कागज-जैसी लगती है।

युवक चाँद पर पुल बनाने के लिए सामान एकत्र करता है, या पृथ्वी पर ही वह महल अथवा मन्दिर बनाना चाहता है और अन्त में मध्य-वय का व्यक्ति उस सामान से एक लकड़ी का घरौंदा ही बना पाता है।

टिड्डा बोलता है—झी···झी···झी।

शक्कर जीभ को इतनी मीठी नहीं लगती है जितनी कि रम्य कान को ध्वनि। मैंने 'हेमलाक' (विष-वृक्ष) की शाखाएँ पढ़ीं और उनके पत्तों की तेज खड़खड़ाहट कानों में सरोदों जैसी लगती है, मानो किसी अवर्णनीय सेना के बख्तरों की झनझनाहट हो। मृत वृक्ष आग से प्यार करते हैं।

नीली चिड़िया अपनी पीठ पर आकाश को ढोती है।

(Noble Purity) के नाम से पुकारते हैं। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि थोरो इस पौधे को पाने की आशा में जी रहा था। इसका वह पात्र भी था। जिस गति से उसका अध्ययन चल रहा था उसमें उसके दीर्घजीवी होने की ही सम्भावनाएँ थीं। हमें स्वप्न में भी अनुमान नहीं हुआ था कि वह इतनी जल्दी हमारे बीच से चला जायगा। आह! देश को यह बिलकुल ज्ञान नहीं है कि कितना बड़ा बेटा उसने खो दिया है। यह एक आघात ही प्रतीत होता है कि वह अपने उस विशृङ्खल काम के बीच छुट्टी ले ले—ऐसा काम जो अपूर्ण है और जिसे कोई पूर्णता तक नहीं पहुँचा सकता। एक महान् आत्मा के साथ यह एक प्रकार का निरादर ही है कि वह अपनी साधना के साथ अपने समकालीन मनीषियों के सामने प्रकट हुए बिना ही यहाँ से उठा लिया गया। लेकिन कम-से-कम उसकी आत्मा को सन्तोष जरूर होगा। उसकी आत्मा अत्यन्त ऊँचे समाज के लिए बनी थी और उसने अपने अल्प जीवन-काल से इस संसार की क्षमताओं को समाप्त कर दिया था। जहाँ कहीं भी ज्ञान होगा, जहाँ कहीं भी गुण का सम्मान होगा, जहाँ कहीं भी सौन्दर्य होगा वहाँ थोरो को कोई भूल नहीं सकेगा।

: ११ :

डैनंदिनी

सत्य

बुद्धि को वरदान कहना—भगवान् का वरदान कहना बुद्धिमानी नहीं है। बौद्धिक शक्तियाँ वरदान न होकर स्वयं भगवान् का अवतरण होती हैं। भगवान् के अस्तित्व के विषय में भी हम बुद्धि से काम नहीं लेते; लेकिन तो भी भगवान् प्रकृति में हमारे साथ रहता है। सत्य सदैव जंगली हवा की तरह कठोर होता है और वह जीवित होता है। अन्तःकरण का अस्तित्व ही यह शर्त पेश करता है कि अन्तःकरण सदैव सच्चा हो और प्रणाली चाहे गलत हो। इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। हम सच्चे नतीजों पर ही पहुँचेंगे।

मि० आर्नोल्ड से न्यू बेडफ़ोर्ड में बातें हुईं। सत्य के विषय में उसकी धारणा यही है और जब पेन की धोखेबाजी उसे सुनाई गई तो वह बोला, "तो इससे क्या हो गया ?" सिर्फ पेन ने ही तो ऐसा किया है न ?" उसने 'मेन' (Maine) के क्वेकर की बात सुनाई। क्वेकर ने प्योट के परिचय का दावा करते हुए कहा, "आप जानते हो मैं आपका शिष्य हूँ ?" प्योट ने उत्तर दिया, "हाँ, मैं आपको अपना मुरीद देख रहा हूँ, क्योंकि मेरा स्वामी (ईसा) आपके विषय में कुछ नहीं जानता।"

इस भारतीय ऋचा को याद रखो
'भगवान् मेरे श्रेय हैं, भगवान् ही मेरे प्रेय हैं।'
जब तक सृष्टि है तब तक बाइबिल समाप्त नहीं हो सकती।

यदि मैं सिर्फ थोरो को ही जान लूँ तो मुझे सोच लेना चाहिए कि सज्जनों का सहयोग असम्भव है। क्या हमको हमेशा विजय की ही बातें करनी चाहिएँ—सत्य, सुख और आनन्द की कभी नहीं? केन्द्रित एकाग्रता, अवगाहन और बलवान बोध-शक्ति के साथ-साथ स्वाभाविक प्रतिभा भी उसमें (थोरो में) है—असलियत की अन्तर्दृष्टि या असलियत से प्रसूत अन्तर्दृष्टि और उससे सम्बद्ध नैतिक साहस उसमें है। लेकिन ये सब और निर्माण एवं आविष्कार की उसकी सारी उर्वरता मेरे लिए कोई मूल्य नहीं रखती। प्रतिवर्ष जितना मैं उसके निकट आता जाता हूँ उसके ये गुण मेरे लिए व्यर्थ प्रतीत होते हैं। हमेशा एक छिद्रान्वेषी उलझन से जूझना पड़ता है और समय और शक्ति का ह्रास होता है।

जर्मन 'एटलांटिस' (Atlantis) को मैं बड़ा तथ्यपूर्ण पाता हूँ जिसके अनुसार खगोल-शास्त्र को अनावश्यक महत्त्व दे दिया गया है। वह शास्त्र आज एक परित्यक्त विज्ञान-मात्र रह गया है जो मेकेनिक्स और उसके लेंस पर निर्भर है—और बहुत कम अंशों में दार्शनिक तत्त्वों पर। रसायन और भू-तत्त्व के विषय में भी यही सत्य है। आज के अन्वेषक सतह पर रह जाते हैं—व्यापक खोज नहीं करते। खगोल के अनन्त अवकाश की अपेक्षा हृदय की छोटी दुनिया अधिक बड़ी, गहरी और समृद्ध होती है। कितने ज्यादा शब्दों की कतारों से खगोल के रहस्यों को व्यक्त किया जाता है। और जो साधना प्रकृति-विज्ञान के साथ की जाती है यदि आचरण-शास्त्र और कानून के प्रति भी वैसी ही भक्ति दिखलाई जाय तो हमें ग्रंथों एवं युगों के बजाय विचार, अन्तर्दृष्टि और ज्ञान की प्राप्ति होगी। आधुनिक खगोल शास्त्र का सबसे विचारणीय असर यह हुआ है कि हम अपने साम्प्रदायिक अहंकार को झकझोर रहे हैं और कान्त्रिनिज्म (काल्विनवाद) लड़खड़ा रहा है।

मैं अपने को महत्त्व देता हूँ उस समय नहीं कि जब मैं सोमवार या मंगल को अपनी निर्धारित कर्तव्य-परायणता में संलग्न रहूँ बल्कि उस समय जब मैं अपनी इस कर्तव्य-परायणता को किसी आगे के दिन के लिए अस्पृश्य रहने दूँ और उसके बजाय किसी और दिन का कर्तव्य उस दिन पूरा करूँ;

जैसे एक पंक्ति लिखूँ, या नई बात का पता लगाऊँ या अपने निबन्ध 'स्मृति' या 'कल्पना' की किसी टूटी कड़ी को पूरा करूँ।

जब पादरी नार्थ केरोलिना यूनिटेरियन चर्च के एजेंट के पास अपने प्रचार-कार्य का वेतन माँगने गया तो उसने पूछा, "आपको यहाँ किसने भेजा है?" पादरी ने कहा, "ईसा ने मुझे भेजा है।" एजेंट बोला, "ईसा ने भेजा है! मैं नहीं जानता कि आपके बारे में ईसा को कभी कोई ज्ञान भी हो।" इन आडम्बरी कवियों के विषय में भी मेरी ऐसी ही धारणा है क्योंकि मैं जानता हूँ कि कविता की देवी उनसे परिचित भी होगी या नहीं।

दो प्रणालियाँ

कापर्निकस का सबसे महत्त्वपूर्ण असर खगोल शास्त्र पर नहीं 'कालविनिज्म' (ईसाई धर्म की एक शाखा) पर हुआ। मनुष्य का अहंकार झकझोर दिया गया। भू-तत्त्व-शास्त्र के द्वारा प्राचीनता के नये माप शुरू किये गए।

अक्सर एक शब्द या सत्य प्रकाश में आ जाता है जिसका आविष्कार एक व्यक्ति-विशेष ने नहीं किया, बल्कि व्यापक रूप से मनुष्य की सहज बुद्धि द्वारा हुआ है। इस प्रकार, "सब व्यक्ति स्वतन्त्र एवं समान पैदा हुए हैं" इस सत्य को राजनीति स्वीकार नहीं करती है; लेकिन यह आधुनिक सभ्यता का केन्द्रीय सत्य है।

यह एक विचित्र बात है कि सर जान फ्रैंकलिन और उनके चुने हुए व्यक्ति, अंग्रेजी कारीगरी के सारे स्रोतों के होते हुए भी, अकाल के शिकार बने और नष्ट हो गए। लेकिन एस्क्विमौक्स (Esquimaux) जीवित बचा रहा। उसने इन व्यक्तियों को ढूँढ लिया और वह वहाँ जीवन भी बिताता रहा।

हर्शेल ने कहा है कि रसायन-विज्ञान ने ऐसी उन्नति कर डाली है कि अब मनुष्य दुर्भिक्ष से नहीं मर सकते, क्योंकि लकड़ी के बुरादे (Sawdiest) से भी खाद्य पदार्थ बनाये जा सकते हैं। लेकिन फिर भी स्लिगो, केपवर्डी और न्यूयार्क में व्यक्ति दुर्भिक्ष से मरते जा रहे हैं। यह ठीक है कि आप

छनी और एती चिथड़ों को चीनी में परिणत कर सकते हो। मगर प्रणाली बड़ी खर्चीली है। ससेक्स के ड्यूक ने भी एक बार ऐसी ही सिफारिश की थी कि गरीबों को रोटी न मिले तो 'कढ़ी' खानी चाहिए।

यह एक भौगोलिक समस्या है कि मिसीसिप्पी निचले ध्रुव क्षेत्र से ऊपर उठती हुई निरक्षत् क्षेत्र के उभरे धरातल की ओर २५०० मील तक बहती है—क्या यह ऊपर नहीं जा सकती?

शिष्टाचार

जब आप जे० केमिल्स या जे० एम० फोर्बेस या किसी भी राज्य-कर्मचारी से बातें करते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि आप राज्य की सारी मशीनरी से बातें कर रहे हैं। आप पर इन व्यक्तियों की शक्ति का प्रभाव आसानी से जम जाता है और आपको उनके विशेषाधिकार का स्रोत भी ज्ञात हो जाता है। किन्तु जब आप थोरो, न्युकाब या एल्काट से बातें करते हैं तो आप सिर्फ एक ही व्यक्ति से बातें करते हैं—अपनी ही वैयक्तिक शक्ति का प्रदर्शन वह व्यक्ति कर सकता है। यही दोनों की शक्ति एवं दौर्बल्य की कसौटी है। यदि हमारी उदारता सच्ची है तो यहाँ यह प्रमाणित हो जाता है कि राज्य-कर्मचारी कमजोर हैं और आपकी दया के पात्र हैं। लेकिन जो विचारक एवं संत-मनीषी अपनी ही वैयक्तिक सत्ता को व्यक्त करते हैं वे मानव हृदय की गहराई के भीतर से बोलते हैं—उनकी आवाज सारी मानवता में व्याप्त सच्चे, ईमानदार और समझदार व्यक्तियों की आवाज है। राज्यतन्त्र की आवाज से उनकी आवाज काफी बड़े जगत् की आवाज है। यूनानी सीरियन, पार्थियन, चीनी, चेरोकी, कनक आदि सभी जातियाँ उनकी आवाज को अपनी स्वयं की आवाज समझती हैं।

मि० ईटन (माल्डेन निवासी) ने मुझ से कहा कि जब फादर टेलर यूरोप जाने लगे तो उन्होंने एक धार्मिक प्रवचन में कहा था, "निश्चय ही, अपने बच्चों (शिष्यों) को यहीं छोड़कर जाने में मुझे दुःख हो रहा है—लेकिन जो प्रत्येक ह्वेल मछली की देख-भाल करता है और उसे टनों मछ-

जैसे एक पंक्ति लिखूँ, या

या 'कल्पना' की किसी टू

जब पादरी नार्थ के

प्रचार-कार्य का वेतन माँग

भेजा है ?" पादरी ने कहा,

ने भेजा है ! मैं नहीं जानत

हो !" इन आडम्बरी कवियों

मैं जानता हूँ कि कविता की दे

दो

कापर्निकस का सबसे मह

विनिज्म' (ईसाई धर्म की एक

भोर दिया गया। भू-तत्त्व-शा

गए ।

अक्सर एक शब्द या सत्य

एक व्यक्ति-विशेष ने नहीं किया,

द्वारा हुआ है। इस प्रकार, "स

इस सत्य को राजनीति स्वीकार नह

का केन्द्रीय सत्य है।

यह एक विचित्र बात है कि

व्यक्ति, अंग्रेजी कारीगरी के सारे स्

बने और नष्ट हो गए। लेकिन

बचा रहा। उसने इन व्यक्तियों क

बिताता रहा।

हर्शेल ने कहा है कि रसायन-

अब मनुष्य दुर्भिन्

से भी खाद्य

और न्यूयार्क

शरीर-शास्त्र सभी अनुपम हैं। लेकिन यह सब अधूरा ही है। आप खगोल के अन्वेषण से उसे कितना ही विस्तृत करें वह इसी प्रकार सीमित और अधूरा ही बना रहेगा। उसे संकल्प-शक्ति की जरूरत है—वैसी ही मुख्य-वरियत। परिपूर्ण स्वतन्त्रता या मुक्ति ही प्रकृति का प्रतिरूप हो सकती है। जब वह संकल्प-शक्ति जन्म लेती है, परिपक्व होती है और कसौटी पर खरी उतरती है तो जयघोष करती हुई, वह कहती है, "यहाँ मैं हूँ, मैं वही हूँ; अन्यथा नहीं हो सकती।" तो प्रकृति उस गधे की भाँति आत्म-समर्पण कर देती है जिस पर ईसू सवार हुआ था।

मनुष्य अपने अंश में आधे से ज्यादा है। यद्यपि हम उसके औजारों एवं विज्ञान के चमत्कारों का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन करते हैं किन्तु जब हम एक वीर नायक या सन्त के सामने खड़े होते हैं तो कलाएँ एवं सभ्यताएँ फीकी प्रतीत होने लगती हैं।

"मेरे मिटाईघर में चार मिठाइयाँ हैं—चीनी, सौन्दर्य, स्वातन्त्र्य और प्रतिशोध।" इजिप्शाकस ने ऐसा कहा था।

यह गुजरने वाली छड़ी बड़ी भारी इमारत है—

जिसे वह सर्वशक्तिमान फिर नहीं बना सकता।

मिसौरी और मिसीसिप्पी अपने संगम से पूर्व एक ही धरातल पर चालीस मील तक समानान्तर बहती हैं। इलिनौस (Illinois) में ब्याज की दर १० से ४० प्रतिशत तक जाती है; बोस्टन में ५-१० से १२ प्रतिशत तक। इतने पर भी बोस्टन के पूँजीपति धरातल के इस अन्तर को नहीं पहचानते और इलिनौस में नहीं आ जाते। इंगलैण्ड और अमरीका में अपनी स्वयं की संस्कृति एवं जर्मनों की संस्कृति में बड़ी ऊँचाई-निचाई देखी जाती है। और यहाँ अमरीका में जो जर्मन जाति बस रही है और जिनके पास हेगेल का 'आर्गेनान' (Organon) है जो अंग्रेजों एवं अमरीकनों के विचारों एवं अन्वेषणों को चीनी पच्चीकारी की भाँति फीके बना देता है—तो भी हम कितने मूर्ख हैं कि अभी तक इसकी हीनता नहीं देख सके।

नारी को पुरुष में अपना संरक्षक ढूँढना चाहिए। मौन मार में यह

उसके लिए खोजती है और जैसे ही वह पाती है कि पुरुष उसका संरक्षक नहीं है तो वह अपनी सुरक्षा स्वयं करने पर तत्पर हो जाती है और यथा-शक्ति उसकी व्यवस्था करती है। लेकिन जब वह उसका पालक अथवा संरक्षक प्रमाणित हो जाता है तो दोनों के लिए मानो सुख-स्वर्ग खुल जाता है।

अगर आप वास्तव में कहें तो आपका विषय एकदम दूसरा है। यदि मैं शेक्सपियर, माण्टेन या गेटे से मिलूँ तो वे कुछ भी कहते रहें मैं तो उनको सही रूप में समझने का ही उद्देश्य सामने रखूँगा। जो उन्होंने कहा है उसे पूरी तरह समझने की चेष्टा करूँगा। जब लोग मेरे द्वारा इंगलैण्ड, फ्रांस या प्रकृति-विज्ञान के विषय में की गई बातों पर आक्षेप करते हैं तो अभिप्राय यही है कि वे मेरी इन बातों से डरते हैं और चाहते हैं कि मैं परिश्रम न करूँ और हल्की-फुल्की बातों से उन्हें बतलाता रहूँ। केन्द्र तक पहुँचने का रास्ता सर्वत्र समान रूप से छोटा होता है। बोनापार्ट ने कहा था कि "यदि कोई जनरल फौज को इस्तेमाल करना जानता हो और अपने साथ जितने सिपाही हों उनकी अस्थायी व्यवस्था करना जानता हो तो सिपाहियों की कमी उसके पास नहीं रह सकती।" वायु की प्रत्येक साँस सृष्टि के अन्तःकरण की वाहिका है। समर्पण और चापलूसी-जैसी चीजों से मुझे बड़ी थकान आती है। लेकिन हाफ़िज के काव्य में ये चीजें भी बड़ी मनोरंजक और प्रेरक बना दी गई हैं।

व्यवहार-कुशल या व्यावहारिक व्यक्ति आज के युग की एक शौकिया चीज हो गई है। जब मैंने जर्मन दर्शन-शास्त्र पढ़ा या कविताएँ लिखीं तो मैं पश्चिम के निवासियों में इस गुण को मान लेने को तैयार हो गया था। अपने कन्धे पर कुल्हाड़ा रखे हुए पाश्चात्य देशों के अग्रणी व्यक्ति नये-नये गाँव एवं नगर बसाने के लिए पश्चिम की ओर आगे बढ़ते गए—

हमारे यहाँ के लोग जिसे व्यवहार-कौशल कहते हैं उसका सम्मान मैं कर सकता हूँ। उनके गर्व को भी उचित मान सकता हूँ। लेकिन काफ़ी सोचने के बाद मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि व्यवहार या व्यवहार-कौशल

श्रेयस्कर आदर्शों की ही क्रमिक अनुकृति होनी चाहिए। लेकिन यहाँ के व्यवहार-कुशल व्यक्तियों के साथ तो बात ही निराली है—साध्य एवं साधनों के सम्बन्ध को वे समझ नहीं पाए हैं—साध्य पर साधनों की प्रतिष्ठा कर देते हैं और इस प्रकार साध्य को आँख से ओझल कर देते हैं और फलतः मुक्ति, महत्त्व एवं जीवन-सौन्दर्य को भी खो देते हैं।

क्लासिक और रोमैंटिक

क्लासिक कला आवश्यकता की कला थी। आधुनिक रोमैंटिक कला में मन की चंचलता एवं अवसर की प्रतिष्ठा रहती है।

जब गणतन्त्र कानून की आन्तरिक आवश्यकता और संगठन की चिन्ता नहीं करते और स्वेच्छा से काम करने लगते हैं तो वे रोमैंटिक प्रवाह में बहने लगते हैं। वेगनर ने संगीत को फिर क्लासिक बना दिया। गेटे कहता है, "मैं क्लासिक को स्वस्थ और रोमैंटिक को रोगी कहता हूँ।"

यूजिन स्यू, ड्यूमा आदि जब अपनी कहानी शुरू करते हैं तो यह नहीं जानते कि वह समाप्त कैसे होगी; लेकिन वाल्टर स्काट ने जब 'ब्राइड आफ़ लेमरमूर' शुरू किया तो अन्त के बारे में उसे कुछ सोचना ही नहीं पड़ा। इसी प्रकार 'मैकबेथ' में शेक्सपियर के साथ अन्त की कोई समस्या नहीं थी।

• • •

अतः क्लासिक होना प्रबल प्रतिभा का विशेषाधिकार है जो जैसा सोचती है उसे वैसे पूरा भी करती है।

क्लासिक अव्यक्त को व्यक्त करती है : रोमैंटिक जो कुछ मौजूद है उसमें जोड़ता है।

अमरीका की खोज एक पुरातनता है—एक क्लासिक कृति है।

ए. फ्रैन

मेरा ख्याल है कि मैं यह बता सकता हूँ कि फ्रांस रूप का विश्लेषण करता है और तत्व को खो देता है—उसके नाटकों की एकतारें, उसकी कविता में भी और उसकी मनोवृत्ति की सारी प्रगल्भ क्लासीसिज्म (क्लासिक-सिटी) में यही मूल तत्त्व है।

पवित्र बनाती है, उसे मधुरिमा देती है, उसमें स्फूर्ति और महिमा भरती है।

एक रोज संगीत का सिद्धान्त भी यही था। शब्दों का कोई महत्त्व नहीं था, राग-रागनियाँ ही सब-कुछ थीं—और कभी तो अनुपयुक्त शब्दों के साथ बड़ी सुन्दर रागनियों का विकास हो जाता था। लेकिन वेगनर ने सब बदल दिया। उसने पद और राग को एकाकार कर दिया। दोनों में परस्पर प्रेरणा होनी चाहिए।

रसायन में भी यही स्थिति थी। मूनडर ने कहा था कि अच्छे केमिस्ट के लिए पहली शर्त यह है कि वह दर्शन-शास्त्र से अस्पर्श्य बना रहे। लेकिन ओर्सटेड और हम्बोल्ट ने देखा और कहा कि रसायन-शास्त्र को नैतिक सिद्धान्त का दास होना चाहिए। क्या आप नहीं देखते कि प्रकृति आडम्बर का स्वयं ही कैसा प्रतिशोध लेती है? एकेडेमियों से जो बुद्धिजीवी वंचित कर दिए जाते हैं वे क्लबों में मिलते हैं और एकेडेमी को व्यर्थ बना देते हैं।

मैं एक ऐसा गीत जानता हूँ जो इतने जोर से कभी नहीं गाया जा सकता कि ७-८ व्यक्तियों से ज्यादा सुन सकें। लेकिन जो उसे सुन लेते हैं वे फिर जवान हो जाते हैं। जब यह गाया जाता है तो सितारे हर्षातिरेक में चमचमा उठते हैं और चन्द्रमा झुककर पृथ्वी के पास चला आता है।

घोड़े ने मुझे कुछ सिखाया है, चूहे ने एक रहस्य चुपचाप मेरे कानों में उँडेल दिया है और जैसे ही मैं निकला लेसपेड़ेजा ने मेरी ओर देखा। अपनी 'वार्षिक रिपोर्ट' में क्या एकेडेमिशियनों ने मुझे कुछ भी बताया? कृपया बताइए क्या बताया?

मैं एक ऐसा गीत जानता हूँ जो 'कुचले' या बर्र के डंक से भी ज्यादा दुःखद है। जो उसे सुनते हैं उन्हें वह उड़ाकर फेंक देता है, उनके रंग और रूप बदल देता है और उन्हें सत्त्वहीन कर देता है। यह 'समय' या 'काल' कहलाता है।

तथापि जो उसे सुनते हैं वे अपनी आयु क्षीण कर देते हैं—
और फिर अपने यौवन पर आ जाते हैं

यह विस्मयजनक है कि योगी जो-कुछ पढ़ता है, निरीक्षण करता है उसे वहीं बाहर बिना किसी भूमिका के एक बारगी कह डालता है और इस प्रसंग में वहाँ के उपस्थित लोग जो-कुछ भी कहते हैं उस पर वह ध्यान नहीं देता। ऐसे प्रश्नों एवं आलोचनाओं को वह हस्तक्षेप ही मानता है और जब वह अपनी रिपोर्ट ख़त्म कर चुकता है तो तेज़ी से निकल भागता है।

भौतिकतावादी

मितव्ययी भू-तत्त्व शास्त्र; किफायती खगोल-शास्त्र (उपनिवेश बसाने के लिए) जहाजी यात्रा के लिए होते हैं। रसायन-शास्त्र और प्रकृति-विज्ञान उपयोगिता के लिए होते हैं। यह बिलकुल ठीक भी है। लेकिन किराया या कमीशन प्राप्त करने के अलावा क्या सिर्फ ज्ञानार्जन के लिए ही इनकी उपयोगिता नहीं हो सकती? अब तो उनका प्रकृति-विज्ञान दूषित है। जिन पक्षियों, मछलियों और पेड़ों का वे ज़िक्र करते हैं वे उनके बारे में कुछ नहीं जानते। जो महत्त्वाकांक्षा उन्हें 'सत्य के पीछे दौड़ाती है वह उसे प्राप्त करने की शक्ति भी ले लेती है।'

अंग्रेजी विज्ञान के विरुद्ध मेरा यह दोषारोपण कि वह प्रकृति को अपने सौन्दर्य से वंचित कर देता है सभी यूरोपीय विज्ञानों के लिए समान रूप से लागू होता है।

पोप से कोपर्निकस ने कहा था, "गणित-शास्त्र तो गणितज्ञों के लिए है।" अल्काट के मन का सबसे बड़ा गुण यह है कि वह जो कुछ देखता है पूरी तरह देखता है। किसी बाहरी रंगीनी या चमक से वह चौंधिया नहीं जाता बल्कि उसकी दृष्टि सदैव मूल तत्त्व पर रहती है। बाह्य आवरण और आकर्षण के भीतर जो आत्मा छिपी रहती है वहीं जाकर उसके मानस-चक्षु अटकते हैं। विभक्तियों के भीतर 'अविभाज्य' को देखने वाला ऐसा इन्सान, मनुष्यों एवं पुस्तकों में क्या मिल सकेगा? मैं नहीं जानता। उनके स्वयं का अविचल विश्वास दूसरों में विश्वास पैदा कर देता है। कुमारी बेकन शेक्सपियर का अध्ययन जिस प्रकार करती है वह मुझे पसन्द है; क्योंकि वह कारण-कार्य के

बीज के लिए अलग रखा हुआ अनाज उन्हें मत खाने दो; उन्हें जल्दी ही विचारों में उलझने मत दो, समय से पूर्व फलने मत दो—अपना लड़कपन समाप्त करने से पूर्व ही उन्हें बुरा मत बना दो। उन्हें खेतों और जंगलों में जाने दो और उनके रहस्य जानने दो। बेसबाल, फुटबाल खेलने दो। कुश्ती लड़ने दो, मार-पीट करने दो और इन खेलों में उनके लिए जो शक्ति समाई हुई है उसे उन्हें चूसने दो, इनके भीतर जो साहस लहरा रहा है उसे छककर पीने दो। घोड़ों की नंगी पीठ पर उन्हें बैठने दो और चरागाहों से अपने घोड़े उन्हें स्वयं पकड़ने दो। अपनी मछलियाँ उन्हें स्वयं फँसाने दो; पेड़ काटने दो; चिड़िया मारने दो, फंदे डालकर पक्षी पकड़ने दो। कालेज की वर्दी पहनने से और शिष्टाचार बरतने से पूर्व उन्हें यह सब करने दो।

यह एक विचित्र बात है कि प्रत्येक मानसिक शक्ति और शारीरिक सामर्थ्य का कोई एक ही सर्वोच्च ध्येय नहीं होता। लेकिन प्रत्येक तत्त्व, साधन और यन्त्र का भी एक ही आदर्श होता है—आग, पानी, हवा, पृथ्वी, थार की हथौड़ी, बुद्ध का जूता, शुक की पेटी, कलाई, तराजू, जलघर सबका, अपना एक और निजी आदर्श होता है।

एक व्यक्ति अस्थियों और पशुओं की वास्तुकला की व्याख्या के लिए पैदा होता है, दूसरा मछलियों या पौधों के पत्तों पर खिंची टेढ़ी मेढ़ी रेखाओं को समझाने के लिए जन्म लेता है; तीसरा कपड़ा बुनने या कागज बनाने की मशीनों, जलशक्ति और स्प्रिंग के ज्ञान को साथ लेकर प्रकट होता है; चौथा नीति-शास्त्र या आचरण की शिक्षा को अपना आदर्श व्यवसाय मानता है और पाँचवाँ स्वास्थ्य एवं रोगों के नियमों की जानकारी आवश्यक समझता है। तुम प्रत्येक मस्तिष्क को अपने-आप में ही विकसित होने दो, अपनी सत्ता स्वयं घोषित करने दो।

मनुष्य के भीतर सद्‌गुणों को जगाना और उसमें अपने स्वय के महत्त्व की प्रतिष्ठा अंकुरित करना शिक्षा का एक अंग है। उसके भावों और निर्णयों

"आज की दुनिया में एक प्रकार का व्यक्ति बहुतायत से पाया जाता है। ऐसे व्यक्ति में बिना विश्वास के महत्त्वाकांक्षा होती है। धर्म की नकाब पहनकर वह व्यक्ति दूसरों को धोखा देता है और उन्हें गुलाम बनाता है। उसका धर्म एवं प्रेम दुधारी तलवार होती है।"

सरकार तो इसलैंड या यूरोप के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। जनता ने स्वयं ही साम्राज्य, उजाड़ और कब्रगाह बना लिया होता। सरकार ने तो शैतानी ही की है। गरीबों के या सामान्य जनता के लिए उन्होंने एक चीज़ बनाई और ऊँचे वर्ग के लिए दूसरी; और सब शासन एवं कानून के नाम पर जो धाँधाधली और हिंसा के सिवाय और कुछ नहीं है—आज जो अभद्रता एवं निम्नता देखी जाती है वह वास्तव में इसका उचित मूल्य ही है।

'पीत्रियन कोर' से लौटा हूँ जहाँ सात दिन तक हम समुद्र के सम्पर्क में रहे थे। कितना मैत्रीपूर्ण आमन्त्रण समुद्र ने मुझे पेश किया था। वह मुझसे कहता था, "इतने दिनों बाद आप हमारे यहाँ आये हैं, जल्दी क्यों नहीं आये? क्या सभी गर्मियों में आप आकर मुझे अपना घर नहीं बना सकते? मैं सदैव ही तो आपके पास हूँ। मेरी आवाज़ में क्या आपको मन-चाहा संगीत नहीं मिलता। मेरी साँसें क्या गर्मी के मौसम में आपके लिए स्वास्थ्यप्रद जलवायु नहीं हैं? मेरा स्पर्श क्या आपके लिए रामबाण-चिकित्सा नहीं है? मेरे झरोखे-जैसे झरोखे आपने कहीं देखे भी हैं और मेरे 'कोच' जैसा 'कोच' आपने और कहीं भी पाया है? मेरे जलमग्न शिलाखण्ड पर सुख से लेट जाइए और यह सीख लीजिए कि आपके लिए एक छोटी-सी कुटीर ही काफी है। आपकी मेहराबें और भवन मेरे द्वारा व्यर्थ हो चुके हैं क्योंकि मेरे भवनों के सामने ये तुच्छ हैं। मेरी जल-समाधि के भीतर बीसरोम, निनेवेह और कर्नाक के खण्डहर सोए पड़े हैं। मेहराबें हैं, पिरामिड हैं और रास्ते हैं—सभी यहाँ लेटे पड़े हैं।"

ज़रा समुद्र को देखिए—कितने रंगों में वह लहराता है—दूधिया, गुलाबी और इन्द्रधनुषी रंगों की छवि बस देखते ही जाइए। त्वचा से

मैं शंकालु और शंका दोनों हूँ
ब्राह्मण जो स्तवन करते हैं वह भी मैं ही हूँ
शक्तिवान देवता मेरे निवास को तरसते हैं;
सन्त महर्षि भी व्यर्थ ही मेरी आशा करते हैं;
लेकिन तू सर्वहित में परायण रहने वाला!
स्वर्ग से विमुख होकर मुझे प्राप्त कर सकता है!

"जो आँख से अज्ञेय है उसे तू जान, वही ब्रह्म है जिससे कि वह आँखों को देखता है—उसे क्या खोजता है जिसकी पूजा की जा रही है।"

"जो बुद्धि से नहीं सोचा जा सकता वरन् जिससे बुद्धि सोची जाती है उसे ही तू ब्रह्म जान! उसे नहीं, जिसको पूजा जा रहा है!"

"सामान्य व्यक्ति ने आत्मा के विषय में जो घोषणा की है वह मुश्किल से समझ में आ सकती है लेकिन जब कोई समदृष्टि गुरु उसकी घोषणा करता है तो उसको पहचानने में कोई सन्देह ही नहीं रह सकता। आत्मा तो सूक्ष्म से भी सूक्ष्मतर होती है—तर्क द्वारा उसे प्राप्त नहीं किया जा सकता।"

अपने-आपको देश-काल के अर्पण कर दिया है। मैं प्रेम की उन क्रमिक व्यंजनाओं में एक प्रकार का गौरव अनुभव करता हूँ जिनमें कि व्यक्ति और उचित प्रतीत होने वाली वैयक्तिक आशाएँ सत्य एवं व्यापक प्रेम के विकास के लिए निरन्तर आगे ठेल दी जाती हैं। मुझे दार्शनिक प्रेमी मत समझ लेना। मैं सबसे पहले एक मनुष्य हूँ और मनुष्य से बड़े कहलाने वालों से घृणा करता हूँ एवं उनके प्रति शंकित रहता हूँ। प्रकृति माता जिस घरेलू आमोद-प्रमोद एवं आकर्षण के द्वारा अपने बालकों को एक सूत्र में बाँधती है उनके साथ मेरी पूरी आत्मीयता रहती है। तथापि मैं इस बात से बड़ा प्रसन्न हूँ कि हमारे बीच में अत्यन्त स्थायी ग्रन्थियाँ पहले बँध जायँ और उसके बाद वे सम्बन्ध भी कायम होते रहें जिनके लिए मानवीय स्वभाव का तकाजा रहता है।

मेरी माँ को बड़ी खुशी है और तुम्हारे बारे में कई प्रकार के सवाल वह पूछती है, जिनमें से अधिकांश के उत्तर मैं नहीं दे सकता। मैं नहीं जानता कि तुम गाती हो, या फ्रेंच भाषा जानती हो, या लेटिन पढ़ सकती हो—अथवा तुम कहाँ रही हो एवं और भी कई बातें! ये सब तो यों ही हैं। बेहतर तो यही है कि तुम सीधी यहाँ आ जाओ और उसके प्रश्नों का उत्तर दे दो। प्रिये, इस प्रभात की तेज एवं सुन्दर रोशनी में बैठा हुआ मैं यह सोच गया हूँ कि कांकार्ड के मोह से मैं मुक्त नहीं हो सकूँगा। इसे प्यार करने के लिए मुझे तुम्हें प्राप्त करना होगा। मैं जन्म-जात कवि हूँ—हाँ नगण्य हो सकता हूँ—मगर मैं कवि जरूर हूँ। कविता मेरा स्वभाव और व्यवसाय है। मेरे गीत मधुर नहीं हैं और अधिकांशतः वे गद्य भी हो सकते हैं। तो भी जड़-चेतन और असीम-ससीम के बीच सामंजस्य अनुभव करने और उससे प्रेम करने के नाते मैं कवि जरूर हूँ—और खासकर जब मैं इस सामंजस्य को सर्वत्र देख रहा हूँ। संध्या, वन, बर्फ की आँधी, नदी का दृश्य मुझे मित्र से भी अधिक आत्मीय प्रतीत होते हैं और पुस्तकों के साथ मेरा आधा समय उनके साथ ही बीतता है। इसलिए जहाँ कहीं मैं जाता हूँ मैं अपनी चंचल मनोवृत्तियों के प्रति सजगता रखता हूँ जो दूसरे लोगों

को हास्यास्पद लगती हैं; लेकिन मेरे लिए तो वह एक ऊँचे स्तर का दिव्य संदेश है। इन सैकड़ों कस्बों में कांकार्ड ही ऐसा एक कस्बा है जहाँ मुझे ये उपकरण मिल सकते हैं। प्लाईमथ में यह बात नहीं है। वहाँ गलियाँ हैं। मैं तो खुले देहात में रहता हूँ।

खैर, इसके लिए अभी काफी समय है। यदि मैं गुरुवार के लिए माकेल एंजेलो ब्यूनारोटी पर अपना भाषण तैयार कर सका तो शुक्रवार को प्लाईमथ आ जाऊँगा। यदि मैं यह न कर सका—अर्थात् माकेल के अन्तरस्थ भावों तक न पहुँच सका तो मैं गुरुवार को लूथर पर भाषण दूँगा और तब मैं निश्चयपूर्वक नहीं बता सकता कि कब मैं वहाँ चला आऊँ।

प्रियतमे, इस पत्र के अहंवाद को भुला देना। क्या वे ऐसा नहीं कहते हैं—"जितना ज्यादा प्रेम उतना ही ज्यादा अहंवाद!" तुम्हें इसका विनिमय देना है। मुझे पत्र लिखना; जरूर लिखना। प्रिय लीडियन, सोच-विचार की क्या आवश्यकता! मेरी कामना है कि आकाश की आँधियाँ तुम्हारी मन्दाग्नि को नष्ट कर दें![1]

वाल्डो ई०

• • •

थामस कार्लाइल को पत्र

कांकार्ड, १२ सितम्बर, १८३७

प्रिय मित्र,

'फ्रेंच रिवोल्यूशन' (फ्रांसीसी राज्य-क्रान्ति)-जैसे ग्रन्थ की भेंट का आभार-प्रदर्शन निर्विलम्ब किया जाना चाहिए था। लेकिन आप-जैसे पर्वतारोही को, जो नाश्ते से पूर्व हवाखोरी के लिए एंडीज़ (Andes) पार कर जाते हों, निचले प्रदेशों में रहने वालों एवं मरीज़ों की सीमाओं का अनुमान ही क्या हो सकता है! मुझे यह सोचते हुए लज्जा आ रही है कि कैसी क्षुद्र बातों ने मुझे अभी तक मौन बनाए रखा है! मैं उन्हें यहाँ लिख नहीं सकूँगा।

'फ्रेंच रिवोल्यूशन' तीन हफ्ते हुए मुझ तक पहुँच पाया है और जैसा

1. लीडिया जैक्सन १८३५ में इमर्सन की दूसरी पत्नी बनी थी।

कि मैं देखता हूँ दो बार काफी समय तक रास्ते में रुका है। यहाँ-वहाँ जाने और कुछ साहित्यिक कार्य करने के साथ-साथ मैंने उसकी अढ़ाई जिल्दें पढ़ डाली हैं। मैं आपको दानवीय (अपरिमित) शक्ति से परिपूर्ण मानता हूँ। हास्य का जहाँ अत्यन्त उर्वर स्रोत आपके भीतर है, वहाँ आप आनन्द और शान्ति के भी अद्‌भुत चितेरे हैं तथा वेदना के उद्रेक की शक्ति भी आपकी अत्यन्त तीव्र है। मेरी सम्मति में आपकी पुस्तक महान् है और दीर्घ काल तक वह विद्वानों का समादर पाती रहेगी। आपने एक इतिहास को जन्म दिया है जिसे संसार अपना इतिहास स्वीकार करेगा। आपने अफसरों और महान् नागरिकों का ही वर्णन नहीं किया बल्कि अन्य व्यक्तियों और गैर-सरकारी बातों को भी पूरी मान्यता दी है। आपने परम्परा की रूढ़ियों को भंग करके एक पुस्तक नहीं, किन्तु एक 'दिमाग' लिखा है। बड़ा साहसी प्रयोग है और उसकी सफलता निश्चय ही महान् है। आपके इतिहास में सिर्फ नामों का ही विवरण नहीं बल्कि व्यक्ति हैं, हाँ इतिहास के व्यक्तियों को मैं शायद कई बार नहीं पाता। बड़ी-बड़ी घटनाओं को आपने चुन-चुनकर लिखा है और क्षत-विक्षत अपूर्ण मनुष्यों के साथ-साथ मानवता की उपस्थिति भी सर्वत्र मिलती है। मन के कौतूहल के अधिकार को आपने हमारे पक्ष में अक्षुण्ण रखा है और पाप-पुण्य के पुरस्कार और दण्ड का विधान भी ग्रन्थ में काफी तर्क-संगत है। लेकिन आडम्बर कहीं नहीं आ पाया है। मानव, इसी से सांत्वना प्राप्त करता रह! पुस्तक में एक भी नीरस शब्द नहीं है। आपकी-जैसी तीव्र शैली आज तक मैंने किसी की नहीं देखी—कोई भी पाठक उसके साथ बाजी नहीं लगा सकता। आपकी अत्यन्त साहसी बुद्धि और प्रफुल्लता को देखकर तो सचमुच आश्चर्य ही होता है—कोई भी ट्रेजेडी (दुःखान्त गाथा) या घटनाओं की विशालता उसे पराजित नहीं कर सकती। हेनरी अष्टम मनुष्यता का प्रेमी था और मुझे यह देखकर प्रसन्नता होती है कि जिस संक्रान्ति का आप प्रतिनिधित्व करते हैं उसके लिए आप [illegible] हैं। इसलिए मैं इस परिश्रम के लिए आपको बधाई देता हूँ [illegible] करता [illegible] कि आपके समकालीन व्यक्तियों को

पर कहना चाहिए—'भाई, आपका स्वागत है ! आप चिरजीवी हो, केवल अपने ही शरीर में नहीं, बल्कि उस महान् काम में, जिसे आपने इतने परिश्रम के साथ किया है !'

जब मैं पुस्तक को हृदयंगम कर जाऊँगा और अपनी आलोचना की कसौटी पर उसे कस लूँगा तो पुस्तक के विषय में आपको और अधिक बताऊँगा। हाँ, इतना मैं जरूर कहूँगा कि वह ज्यादा सरल होनी चाहिए थी—थोड़े और क्रमिक अनुपात की उसमें आवश्यकता थी। आप कहेंगे कि खिड़कियों की रोशनी के नियम मेघ-प्रदेश की प्रकाश राशि पर लागू नहीं हो सकते। खैर, जब कोई बात संक्षेप में आप लिख जाते हैं तो मुझे बड़ी भली मालूम पड़ती है। पुस्तक में जो चरित्र-चित्रण है वह अत्यन्त प्रशंसनीय है; उनकी रेखाएँ बिलकुल स्पष्ट हैं और उनका सारा विन्यास सांगोपांग है। हैम्पडेन, फाकलैंड और शेष में क्रोमवेल ने मेरे लिए जो चित्रण किया है वह अतिशयोक्ति-रहित है। मेरी बड़ी कामना है कि मैं आपसे मिल सकूँ और यह जान सकूँ कि आप अपनी स्पष्टवादिता के साथ पुस्तक का कैसा मूल्यांकन करते हैं।

इस देश में उसके बढ़िया स्वागत होने की मुझे आशा है। गत शनिवार को मुझे ज्ञात हुआ है कि 'सार्टर' (Sartor) की कुल मिलाकर ११६६ प्रतियाँ बिक गई हैं। मैंने उस पुस्तक के प्रकाशक को कह दिया है कि वह 'हिस्ट्री' (History) उस समय तक न छापे जब तक कि
प्रतियाँ मँगाने के लिए व्यक्तियों को कुछ सुभीता न
यार्ड, ग्रे, एण्ड क० (Helliard, Gray,
में बीस प्रतियाँ मँगाने का आदेश दे दिया है
के कारण, जबकि आज एक
तुंगी के साथ, पुस्तक बिक्री
हमारा विश्वास है कि
आयेगी। मुझे बड़ी
हो और इस बात से भी ,

एक दिन वह भी आयगा जब हमारे कानून ज्यादा अच्छे होंगे और शायद इतने अच्छे कि आप भी उन्हें अपनाने लगें।

आपकी पुस्तक से काफी पहले आपका पत्र आ चुका है। आपने अपने जीवन में बड़ा भारी काम कर डाला है और आप अपने प्रेम से मेरे जीवन की इस तीर्थ-यात्रा को बड़ी उदारतापूर्वक उत्फुल्ल और सुशोभित बनाते हो। जब मैं किसी सच्चे एवं ज्ञानी व्यक्ति को अपना मित्र कहता हूँ तो मानो मेरी सर्वोच्च प्रार्थनाएँ मंजूर हो गई हैं। अल्प काल में ही आपकी प्रतिभा के इस अपरिमित प्रसार के सामने मैं अपने-आपको बड़ा हल्का और व्यर्थ समझ रहा हूँ। मैं तो यह देख रहा हूँ कि मैं कुछ और समय तक आप एवं अन्य ऐसे ही साहसी व्यक्तियों पर अपना विश्वास अटकाता रहूँ—इस आशा के साथ कि मुझे एक दिन अपना सत्य एवं प्रेम साबित करना है। इस देश में विद्वानों की संख्या काफी कम है—अतः प्रत्येक विद्या-प्रेमी व्यक्ति का यहाँ यह फर्ज हो जाता है कि वह हमारे युवकों की मानसिक भूख के लिए विचारों का ऐसा पोषण दे जो प्रचलित अर्थ-शक्ति के प्रसार का प्रतिकार बन सके—अपनी पूरी शक्ति लगाकर विचारों के संवरण में इस प्रकार जुट जाय कि भौतिक सामर्थ्य के साथ ज्ञान के सामर्थ्य का सन्तुलन हो सके। इसी कर्तव्य-पालन के लिए मैं प्रत्येक शरद ऋतु में, और जब कभी भी बुलाया जाता हूँ, अपने भाषण देता हूँ। गत वर्ष मैंने 'इतिहास के दर्शन' (Philosophy of History) पर बारह व्याख्यान पढ़े थे, और इस साल 'नीति-शास्त्र' (Ethics) पर कुछ व्याख्यान देने की सोच रहा हूँ। मैं समय और प्रकृति के प्रवाह से ज्ञान बटोरता हूँ लेकिन यह देखकर मेरे हृदय को दुःख होता है कि कितने थोड़े को लोग ग्रहण करते हैं।

मित्र, पत्रोत्तर दीजिए। स्काटलैंड आप गये थे, वहाँ आपने क्या किया लिखिए और सूचित कीजिए कि क्रेयनपुटाक में मैंने जब देखा
आजकल आपकी पत्नी स्वस्थ हैं। उन्हें मेरा सस्नेह स्मरण
अभी एक क्लब बनाया है जिसके १५ सदस्य अभी गत
और उनमें से प्रत्येक आपको हृदय से प्रेम करता है।

रिवोल्यूशन' आपकी जनता की भावना में परिवर्तन न ला सके तो कृपया अटलांटिक पार करके इस नये इंगलैंड में चले आइए।
प्रेम श्रद्धा-सहित आपका,
—राफ वाल्डो इमर्सन

• • •

जब आप शहर में जायें तो कृपया मेरे लिए एक कष्ट कीजिएगा। रेड-लायन स्क्वेयर में मि॰ रिच की एक दुकान का आपने उल्लेख किया है। क्या आप कृपया उनसे कहेंगे कि दो या तीन वर्ष पूर्व बिना किसी कीमत का विवरण दिये उन्होंने कुछ पुस्तकें मेरे पास भेजी थीं। मैं स्वयं उनको एक बार लिख चुका हूँ। प्रकाशक एस॰ बर्डेट के द्वारा भी मैंने उन्हें सूचित किया है और तीन बार उनके बोस्टन-स्थित अटार्नी, सी॰ पी॰ कर्टिस एस्क्वायर के द्वारा भी उन्हें खबर भेजी है और हिसाब मँगवाया है। लेकिन अभी तक उनका कोई उत्तर मुझे नहीं मिला है। मैं चाहता हूँ कि वे मुझे हिसाब भेज दें और उसके पैसे मैं यहाँ से दे दूँ। यदि वे अपनी त्याग-वृत्ति पर पूर्ववत् दृढ़ता के साथ ही अड़े रहे तो आप उन्हें देवताओं के पुस्तक-विक्रेता के रूप में अमर बना सकते हैं।

मैं आपके पास अपना एक व्याख्यान भेजूँगा जो मैंने यहाँ साहित्य-समिति के सामने पढ़ा था और जो अब छप गया है। 'छोटे कार्लाइल' के समाचारों से मुझे बड़ी खुशी होती है—नये वेस्ट-मिनिस्टर में उसे लोग इसी नाम से पुकारते हैं।

• • •

मेरी मूडी इमर्सन को पत्र

कांकार्ड, २८ जनवरी, १८४२

प्रिय चाची,

मेरा बच्चा, मेरा बच्चा अब नहीं रहा! सोमवार की शाम को उसे स्कार्लेटिना हो गया था और कल रात को उसका देहान्त हो गया। मैं तुमसे और क्या कहूँ। मेरे हृदय का टुकड़ा और दुनिया का अद्भुत बालक—मैंने अपने

या अन्य किसी परिवार में ऐसा बालक कभी नहीं देखा था—स्वप्न की भाँति मेरी गोद में से उड़ गया। मेरे संसार में, मेरे जीवन की प्रत्येक प्रवृत्ति में वह शुक्र तारे की भाँति चमका था। उसके सामीप्य में मैं सोता था और जागते ही उसका स्मरण करता था.........

हाँ, एक विचार मुझे कुछ सुख दे जाता है कि हमने या और किसी ने उसे कभी अपमानित नहीं किया था, कोई दाग उस पर नहीं लगा था; उसके प्रति सबकी आदर-भावना सदैव अक्षुण्ण बनी रही। यह उसकी निश्छलता का प्रभाव था—निश्छलता सदैव महान् होती है और वह आदर की प्रेरणा देती है। लेकिन इस सबके बावजूद आज तो मैं तुमसे यही कह पा रहा हूँ कि फरिश्ता अन्तर्धान हो गया है। चाची, तुमने उसे नहीं देखा था, किन्तु इस छोटे यात्री का प्रस्थान तुम्हें भी सन्ताप दिये बिना न रहेगा।

प्रणाम, प्यारी चाची,

वाल्डो ई०

० ० ०

मार्गरेट फुल्लर को पत्र

प्रिय मार्गरेट,

मैं तुम्हें पत्र नहीं लिख रहा हूँ, सिर्फ जवाब में यह कह रहा हूँ कि हम लोग अपने उस दुःखद और भयानक स्वप्न के बाद फिर से जीवन-स्फूर्ति का अनुभव करने लगे हैं—ऐसा स्वप्न जिसने हमें जहाँ पकड़ा था वहाँ नहीं छोड़ा था! लीडियन, एलिजाबेथ और मैं अपने स्वर्गस्थ बालक की कहानियाँ कहते हैं और अपने लुप्त कोष को बहुगुणित करते हैं, जिससे कि सन्ताप का अत्यन्त कड़वा घूँट भी हम पी सकें—दुःख की पराकाष्ठा को अनुभव कर सकें! लेकिन सूरज उदय होता है और हवाएँ चलती हैं। प्रकृति मानो भूल गई है कि उसने अपने सबसे मधुर सृजन को कुचल डाला है और शायद वह हमें जता रही है कि मृत्यु ने इस बालक को स्थायी रूप से कहीं बाँध नहीं दिया है किन्तु उसने आगे जाकर किसी नए खिलौने को अनुप्राणित किया है—इस प्रकार हमें अतीत के सन्तापों के बारे में सोचना नहीं

चाहिए; किन्तु इसके विपरीत यदि सम्भव हो सके तो प्रकाश के अक्षत प्रवाह के साथ नई घड़ी को प्रकाशित करना चाहिए।

२ फरवरी, १८४२ वाल्डो ई०

थामस कार्लाइल को पत्र

कांकार्ड, १४ मई, १८४६

प्रिय मित्र,

रोज चित्र की आशा करता हूँ और मुझे आश्चर्य है कि मैंने अभी तक उसके विषय में सोचा ही क्यों न ? उस दिन मैं बोस्टन में था और बहुत प्रख्यात 'डगेरोटाइपिस्ट' (पहले के फोटोग्राफर) के यहाँ गया था। अपने चेहरे के तीन चित्र मैं लाया भी, मगर मेरे परिवार को वे बड़े हास्यास्पद और विषादपूर्ण प्रतीत हुए। अब मुझे चित्र के लिए फिर बैठना है। अथवा मुझे एलिजाबेथ होर की बात मानकर चित्र के लिए बैठना नहीं चाहिए। क्योंकि उसके अनुसार मेरा चेहरा ऐसा नहीं है जिसके लिए फोटोग्राफर को कुछ सफलता मिल सके। लेकिन मैं एक बार और प्रयत्न करूँगा और रंगीन स्केच बनाने वाले मि० चेने के सामने बैठूँगा और उसका स्केच आपके पास भेजूँगा।

मेरी कामना है कि आप अपनी यात्रा में आनन्द अनुभव करें और जितना हो सके लन्दन की गलतियों से दूर जा सकें। दिल बहलाने का एक नया साधन अब मेरे पास भी हो गया है—कुछ जमीन मैंने खरीद ली है। 'वाल्डेन पांड' नामक आधी मील चौड़ी एक खाड़ी के किनारे ४० एकड़ से ज्यादा बड़ा एक टुकड़ा पिछले पतझड़ में मैंने लिया था—इस स्थल पर वर्षों तक प्रति सप्ताह करीब-करीब हमी मौसम में एक या दो बार मैं आता रहा हूँ। मेरी जमीन झील के उस पार थोड़ी ही दूर पर है और मैं उससे कम ही परिचित हूँ। कुछ जंगल काफी पुराना है लेकिन उसका काफी बड़ा अंश पिछले बीस वर्षों में कट चुका है और अब वह बड़े धीमे-धीमे बढ़ रहा है। मई के इन सुन्दर दिनों में यद्यपि भाँति-भाँति के वृक्ष अपने वासन्ती वैभव में ओत-प्रोत हैं मैं यहाँ अपना कुल्हाड़ा लेकर प्रत्येक

या अन्य किसी परिवार में ऐसा बालक कभी नहीं
मेरी गोद में से उड़ गया। मेरे संसार में, मेरे
वह शुक्र तारे की भाँति चमका था। उसके
जागते ही उसका स्मरण करता था·········

हाँ, एक विचार मुझे कुछ सुख दे जाता है
उसे कभी अपमानित नहीं किया था, कोई दाग
प्रति सबकी आदर-भावना सदैव अक्षुण्ण बनी र
का प्रभाव था—निश्छलता सदैव महान् होती है
देती है। लेकिन इस सबके बावजूद आज तो मैं
कि फरिश्ता अन्तर्धान हो गया है। चाची, तुमने
इस छोटे यात्री का प्रस्थान तुम्हें भी सन्ताप दिये

प्रणाम, प्यारी चाची,

o o

मार्गरेट फुल्लर को पत्र

प्रिय मार्गरेट,

मैं तुम्हें पत्र नहीं लिख रहा हूँ, सिर्फ जवाब
हम लोग अपने उस दुःखद और भयानक स्वप्न के
का अनुभव करने लगे हैं—ऐसा स्वप्न जिसने हमें
छोड़ा था! लीडियन, एलिजाबेथ और मैं अपने
कहते हैं और अपने लुप्त कोष को बहुगुणित करते हैं
अत्यन्त कड़वा घूँट भी हम पी सकें—दुःख की
सकें! लेकिन सूरज उदय होता है और हवाएँ चलती
गई है कि उसने अपने सबसे मधुर सृजन को कुचल
वह हमें जता रही है कि
नहीं दिया है किन्तु उस
किया है—इस प्रकार

को गली-कूचों पर कहीं नहीं मिलते। खेद! मुझे
पढ़ने का अवकाश ही कम है क्योंकि मैं अपने कभी कोई

यहाँ हम युद्ध से नहीं डरते। युद्ध ही हमारा भाग्य सा
है। हमारे सभी मोर्चे इन अयोग्य नेताओं द्वारा गलत
बने एवं भेंट चढ़ने के लिए यहाँ नहीं होते हैं। लेकिन
स्वतः शांत हो लेते हैं—शासन से पृथक करना। ...
पैदा ही नहीं हो रहा है। हमें नैतिक औचित्य प्राप्त कर
हमारी सहायता कोई नहीं कर सकता। ... का
इससे हमारा सरोकार ही क्या है? यदि हमें अपने ...
मिलेगा तो उनके इस्तेमाल व्यर्थ हो जायेंगे और उनका
भी मसावदा हो सकता है। लेकिन कई वर्षों से जो पतनोन्मुख
गन्दी राजनीति हमारे यहाँ प्रचलित थी उससे तो युद्ध ही बेहतर है।
नियम-विधान में भी काफी प्रगति हुई है और यदि हम दक्षिण को
...ित करने के मूल्य पर शान्ति के लिए लालायित व्यापारी आवेश (
वर्ग) को आगे ठेल सके तो समस्या को बीस वर्ष और आगे बढ़ने का ...
मिल जायगा—यहाँ हिंसक पशुओं (पूँजीवादों) से मुक्त मजदूरों
लड़ाई होगी और हम यह देख सकेंगे कि बन्दरगाहों पर जो माल
वह मुक्त हाथों से आयगा, बर्बरों द्वारा नहीं।

मुझे दुःख हुआ है कि क्लो (Clough) जैसा भलामानस और बड़ा सजग विद्वान् मर गया है। मैंने उसके 'बोदी' (Bothie) को फिर से पढ़ा है—यौवन की कैसी मदिरा उससे छलकती है! दो छोटी पुस्तकों में मैथ्यू आर्नल्ड की उत्कृष्ट आलोचना से मुझे बड़ा सुख मिला है। मेरी ओर से स्नेहमय स्मरण जेन कार्लाइल को कराइये, जिनकी स्मृति आपकी पुस्तकों एवं पत्रों के द्वारा मुझ पर सदैव ज्वलन्त बनी रहती है।

आपका सदैव सच्चा,
आर० डब्ल्यू० इमर्सन
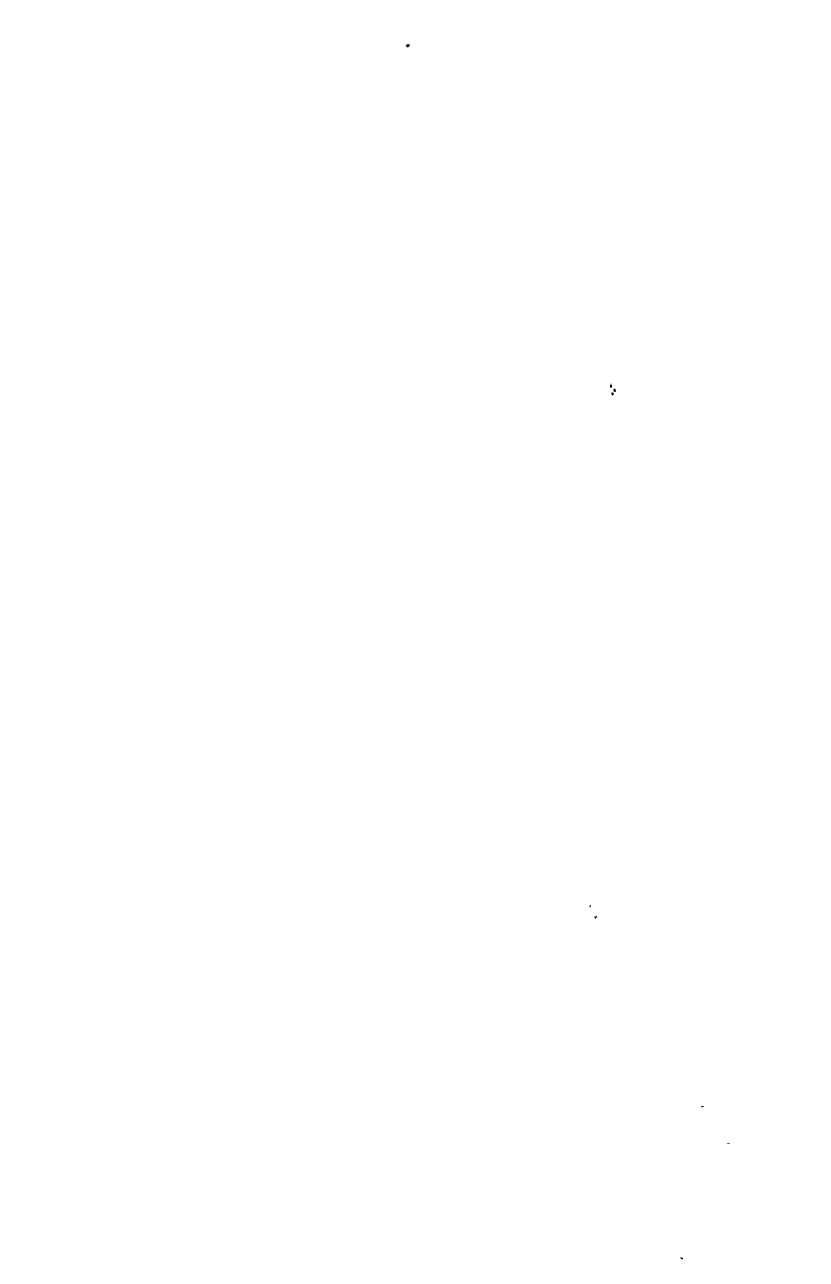
थामस कार्लाइल को

कांकार्ड, १६ मई, १८६६

प्रिय कार्लाइल,

मांक्योर कान्वे का अपने यहाँ के मित्र को लिखा एक वैयक्तिक पत्र मैंने देखा है जिसमें आपके खाली घर में आपकी दुःखद वापसी का समाचार है। पहली खबर हमको गत सप्ताह मिली थी। कई दिनों से जिस आघात की आशंका थी वह आखिर चरितार्थ हो गई—अपने शिकार पर यह चोट बड़ी हल्की रही और जिस मृत्यु-दण्ड की सूचना आपके सामने थी वह आपको मुक्ति दे गई है। इस सौम्य विदाई में भी मुझे उसे भाग्यवान समझना चाहिए, क्योंकि वह इस समय अपने जीवन के बड़े शान्त एवं समादृत स्तर पर प्रतिष्ठित हो चुकी थी। जब हम पर्वत की श्रेणी को पार कर जाते हैं तो लोलुप दृष्टि से निम्नगामी सीढ़ियों को नहीं गिनते या ऐसा नहीं चाहते कि पतन के कुछ दिन और हम मिलें। और आपको भी यह जानकर शांति मिलेगी कि वह पतन की शिकार न बनी थी। विदा होने वाली आत्मा के प्रति बोला जाने वाला एक पुराना पद मुझे याद आ गया है :

"क्योंकि तुम मानवीय जीवन की सारी परिवर्तनशीलता को पार कर चुकी हो और इसलिए अब तुम्हारे लिए सौन्दर्य की मृत्यु नहीं होगी।"

तैंतीस साल पूर्व जुलाई में मैंने उन्हें पहले-पहल देखा था और उनकी बातचीत और निर्दोष आचरण से मुझे उनके सुखद भविष्य का आश्वासन मिल गया था। मैंने किसी प्रकार की अवनति नहीं देखी थी—मुझे विश्वास ही नहीं हो सकता कि उनके पक्ष में कभी अवनति को अवसर मिल भी सकता है—मैं आज भी युवती पत्नी के रूप में उन्हें अपने मानस में स्पष्ट देख पाता हूँ, गेटे की प्रशंसा और उनके पत्रों का मनोरंजक विवरण आज भी मेरी आँखों के सामने झूल जाता है, वेमर जाने के विषय में उन्होंने विस्तार से मुझे जो लिखा था और फिर नहीं जाने पर उनकी निराशा—सब मेरी स्मृति में साकार हो रही है। मेरे प्रति एवं मेरे मित्रों के प्रति उनकी उदारता सदैव अक्षुण्ण बनी रही और उनकी प्रशंसा में सभी अमरीकन एक-

मत हैं। एलिजाबेथ होर पूरी सहानुभूति एवं आदर के साथ उनका स्मरण करती है।

मैं कितना चाह रहा हूँ कि इन सूने दिनों में एक घण्टे के लिए आपके पास चला आऊँ। मैं जानता हूँ कि आपके मित्र सभी मित्रों की भाँति आपको सान्त्वना देने की भरसक चेष्टा करेंगे। और मैं यह विश्वास कर सकता हूँ कि श्रम, जिसके सभी मूल्यवान रहस्यों से आप परिचित हैं, आपके प्रति बड़ा सान्त्वनाप्रद साबित होगा—यद्यपि वह आज इतना उपयोगी नहीं हो सकता, क्योंकि आपकी पत्नी ऐसा विश्राम थी जो श्रम को पुरस्कृत करती थी। बड़े सौभाग्य की बात है कि आप स्वस्थ हैं और आपका सुदृढ़ शरीर काफी सहिष्णु है। उन निर्मम दिव्य वाणियों से परामर्श लेना भी आप नहीं भूलेंगे जो ऐसे विषाद की घड़ियों में कभी-कभी राह दिखा देती हैं। अगर दूसरों को तो आपको भी।

मुझे प्रसन्नता है कि एडिनबरा में आपके सुखी दिन की नामकारी का आनन्द भोगने के लिए वे बच गई थीं और यह पृष्ठ आपकी जीवन-पुस्तक से अलग नहीं किया जा सकता। आपका वह भाषण अत्यन्त पौरुषमय था और अटूट शक्ति और साहस का प्रतीक था और मुझे मालूम हो गया था कि उसका प्रभाव बड़ा व्यापक एवं गहरा रहा।

मेरी प्रार्थना है कि आप अपने अन्तःकरण के विवेक पर दृढ़ बने रहेंगे। भगवान् आपको दीर्घायु करें और सन्ताप एवं भ्राति आपको उस समय तक स्पर्श न करे जब तक आप मेरी कामना एवं प्रतीक्षा की पुस्तक समाप्त न कर दें—आपके अत्यन्त समृद्ध क्षणों के सच्चे आत्मोद्‌गार।

सहानुभूति और प्रेम के साथ मेरी पत्नी आपके स्मरण की प्रार्थना करती है।

आपका सदैव सच्चा,
आर० डब्ल्यू० इमर्सन